'हंस-पुस्तक' के अंतर्गत पाँचवीं किताब

अलैक्ज़ैण्डर कुप्रिन की अमर कृति

"YAMA : THE PIT" का हिन्दी रूपान्तर

गाड़ीवालों का कटरा

भाग तीसरा

अनुवादक : चंद्रभाल जौहरी

—संपादक—

श्रीपतराय

बनारस

सरस्वती प्रेस

गाड़ीवालों का कटरा

[भाग तीसरा]

पहला अध्याय

लियूबा ने अपनी यह सारी कहानी जेन्का के कन्धे पर अपना सिर रखकर, सिसकियाँ भर-भरकर, सुनाई, मगर उसने जो कुछ जेन्का से कहा वह वास्तव में जो कुछ हुआ था उससे बिलकुल भिन्न था।

[illegible] कहने के अनुसार लिखोनिन उसको जान-बूझकर, [illegible] देकर, फुसलाकर, बहकाकर चकले से निकाल ले गया था कि [illegible] खूब जी भरकर मज़े उड़ाये और फिर अपनी तबियत [illegible] जाने पर उसे सड़क पर ढकेल दे; मगर वह मूर्खों की तरह [illegible] प्रेम करने लगी थी और चूँकि वह उनके और उनके मित्र कालिज में पढ़नेवाली, कमर में पेटी बाँधनेवाली छोकरियों के प्रति ईर्ष्या दिखाती थी, लिखोनिन ने उनके प्रति [illegible] किया था। जान-बूझकर और [illegible] निकालने [illegible] लिखोनिन [illegible] देखा [illegible] लिखोनिन [illegible] शोर मचाने लगा और लियूबा को घर से निकाल दिया।

यह ज़रूर सच है कि लियूबा के बयान में आधा सच ही था। मगर उसे जो सच लगा था वह उसने जेन्का से कहा।

फिर इसके बाद की अपनी मुसीबतों की कहानी भी उसने सुनाई। लिखोनिन द्वारा घर से निकाल दी जाने पर उसका कोई सहायक या सहारा न होने से, उसने एक अकेली गली में जाकर एक गन्दे होटल की छतपर रहने के लिए एक छोटा-सा कमरा किराये पर लिया और वहाँ रहने लगी; परन्तु वहाँ भी पहले ही दिन से, होटल के तजुर्बेकार दलालों ने, बिना उसके पूछे ही, उसके शरीर का व्यापार शुरू कर दिया। अतएव वह होटल छोड़कर एक दूसरी जगह कमरा लेकर रहने लगी; मगर वहाँ भी एक बुढ़िया कुटनी, जो ग़रीब घरों के इर्द-गिर्द घूमा करती हैं, उसके पीछे पड़ी।

शान्ति का जीवन बिताने पर भी लियूबा के चेहरे, बातचीत और रङ्ग-ढङ्ग में देखनेवालों को कोई ख़ास बात दीखती थी; या शायद ऐसा नहीं भी था तो भी कम-से-कम इस व्यापार से सम्बन्ध रखनेवाले उसे देखते ही फौरन पहिचान लेते थे।

मगर एक बार सच्चा—यद्यपि वह क्षणिक था—प्रेम कर चुकने के बाद उसमें इतनी शक्ति आ गई थी कि वह फिर वेश्यावृत्ति को अपनाने के लिए तैयार नहीं थी। अपने इस वीरतापूर्ण इरादे में उसने यहाँ तक किया कि अख़बार में नौकरी ढूँढ़ने के लिए इश्तहार छपवाये, मगर उसकी सिफारिश करनेवाला कोई नहीं था। इसके अतिरिक्त नौकरियाँ दिलानेवाले दफ्तरों में, जहाँ-जहाँ वह नौकरी ढूँढ़ने गई वहाँ-वहाँ, उन दफ्तरों की मालकिनें उसे देखते ही फौरन पहिचान गईं कि वह उनके पतियों, भाइयों, पिताओं और बेटों को लुभानेवालियों में से है। अतएव वह उसे किसी अच्छे घर में नौकरी न दिलाकर अकेली रहने-वाली बुढ़ियाओं अथवा क्रूर-दृष्टि और भारी आवाज़ की और उँगलियों में हीरों की अँगूठियाँ लटकानेवाली तगड़ी औरतों के पास भेज देती

थीं जिनको देखते ही लियूबा बड़ी आसानी से पहिचान लेती थी कि वे सिपाहियों इत्यादि के लिए गुप्त छोटे-छोटे चकले रखनेवाली अनुभवी स्त्रियाँ हैं।

अपने गाँव में लौटकर जाना उसने बिल्कुल व्यर्थ समझा। उसका ज़िला इस शहर से सिर्फ़ पन्द्रह मील दूर था और वहाँ इस बात की ख़बर, शहर में आने-जानेवाले उसके गाँववालों के द्वारा, बहुत दिन पहले ही पहुँच चुकी थी कि वह चकले में जा बैठी है। उसके गाँव के पड़ोसियों ने, जो शहर में आकर कुलीगिरी, होटलों में नौकरी, गाड़ियाँ हाँकने और छोटे-मोटे ठेकेदारी के काम करते थे, ख़त लिख-लिखकर और ज़बानी लियूबा का सारा हाल गाँव में पहुँचा दिया था, अतएव वह जानती थी कि इस शोहरत की दुर्गन्ध को अपने साथ लेकर जाने से गाँव में उसका क्या हाल होगा। गाँव में लौटकर जाने से बेहतर तो उसके लिए यही था कि वह आत्महत्या कर ले।

असल। ज़िन्दगी और रुपये-पैसे के मामले में वह इतनी ही होशियार थी जितना कि पाँच बरस का बच्चा होता है। अतएव थोड़े ही रोज़ में उसके पास जो थोड़ा-बहुत रुपया था, सब ख़त्म हो गया। एक फूटी कौड़ी भी उसके पास न रही। चकले में फिर लौट जाने की उसकी हिम्मत न होती थी, परन्तु गली-कूचे की वेश्यावृत्ति का लालच उसके सामने हर समय रहता था और उसको बार-बार ललचाता था। शाम को सड़कों पर घूमनेवाली पुरानी और अनुभवी वेश्याएँ लियूबा को देखते ही उसका पुराना पेशा समझ जातीं थीं। अक्सर उनमें से कोई उसके पास आकर साथ-साथ चलती हुई, मीठे कृतज्ञतापूर्ण शब्दों में उससे कहतीं, 'क्यों बहिन! इस तरह अकेली क्यों घूम रही हो! आओ मेरे साथ आओ। चलो हम-तुम दोनों मिलकर साथ-साथ घूमें। इसमें हम दोनों का अधिक फ़ायदा है क्योंकि छोकरियों के साथ आनन्द से समय बितानेवाले लोग आम तौर पर दो जोड़ों का साथ

पसन्द करते हैं। दूसरे तुमको भी मेरे साथ रहने में सहूलियत होगी क्योंकि मैं सारे इन्सपेक्टरों को अच्छी तरह पहिचानती हूँ।'

'कैसे इन्सपेक्टर?' लियूबा चौंककर बोली। वे ही इन्सपेक्टर जो बेटिकट रोजगार करनेवाली वेश्याओं को खोजते फिरते हैं। वे उन्हें पाते ही गिरफ्तारकर लेते हैं और पकड़कर थाने में ले जाते हैं। बेचारी छोकरियाँ उन्हें कैसे पहिचान सकती हैं क्योंकि वे वर्दी न पहिनकर, साधारण कपड़ों में घूमते-फिरते हैं? और वे उन सबको अच्छी तरह पहिचानते हैं जो टिकट लेकर धन्धा कर रही हैं। थाने में ले जाकर वे पासपोर्ट छीन लेते हैं और पीला टिकट दे देते हैं। टिकटवाली स्त्रियों को भी इन्सपेक्टर जब चाहते हैं, पकड़ कर थाने में ले जाते हैं और रात-भर उन्हें हवालात में बन्द करके कठोर लकड़ी के नङ्गे तख्तों पर सुलाते हैं। नशे में होने या लोगों को सड़क पर तङ्ग करने का इलज़ाम लगाकर वे पकड़ लेते हैं और चालान कर देते हैं। फिर मजिस्ट्रेट, बिल्कुल निर्दोष होने पर भी, दो हफ़्ते की कम से कम सज़ा करके जेल में बैठा देता है और कमाई बन्द हो जाती है। हाँ, इन्सपेक्टर को घूस देकर अथवा उसके साथ किसी होटल में जाकर पीछा ज़रूर छुड़ाया जा सकता है, मगर बेचारी ग़रीब छोकरियों के पास घूस देने के लिए पैसा नहीं होता और इन्सपेक्टरों के जिस्म से ऐसी बदबू आती है कि उनके साथ होटल में जाने को तबियत नहीं होती...।'

'इसलिए मेरे साथ-साथ रहने से तुम्हें भी फ़ायदा है क्योंकि मेरी मदद से तुम इन्सपेक्टरों के हाथों में पड़ने से बची रहोगी। मैं उन्हें खूब पहिचानती हूँ और इससे भी अच्छा तो यह है [illegible] मेरे साथ [illegible] हम [illegible] नहीं सकते हैं, परन्तु चोरी के लिए तो बहुत आसानी से [illegible] हो सकती है—खास कर जब कि वह ऐसी सुन्दर हो जैसी तुम हो।'

और इसके बाद अनुभवी भर्ती करनेवाली स्त्री धीरे-धीरे उसे माल-

किन के यहाँ रहने के फायदे और सुभीते बताने लगती—अच्छा खाने-पीने को मिलता है, घूमने-फिरने की पूरी स्वतंत्रता रहती है और निश्चित वेतन से अधिक होनेवाली आमदनी को मालकिन से छिपाकर बचा लेने का मौका रहता है। इतना कहने के बाद उसने चकलों में रहनेवाली वेश्याओं को खरी-खोटी सुनाते हुए उनकी तरह-तरह की बुराइयाँ करनी शुरू कर दी। लियूबा उसकी इन बुराइयों का मतलब अच्छी तरह समझती थी क्योंकि चकलों में भी तो गलीकूचों में फिरने वाली वेश्याओं की इसी तरह बुराइयाँ की जाती थीं।

आखिर वही हुआ जो होना था। फाकेमस्ती के दिन सामने आते देख और अपनी मुसीबतों और अनिश्चित भविष्य को सोचकर उसने आखिरकार एक भले दीखनेवाले छोटे क़द के बूढ़े आदमी की दावत मंजूर कर ली, जो अच्छी पोशाक में अच्छी हैसियत का दीखता था, परन्तु वास्तव में बड़ा अस्वाभाविक निकला। उसके साथ अस्वाभाविक विषय भोग करके लियूबा को एक रुपया मिला। लियूबा ने उसकी अस्वाभाविकता का कोई विरोध नहीं किया क्योंकि चकले में रह चुकने से इस मामले में उसकी कोई स्वेच्छा या शक्ति नहीं रही थी, मगर दूसरी बार इसी भले बुड्ढे ने अपनी इच्छा पूरी कर लेने के बाद लियूबा को एक रुपया भी नहीं दिया। 'मैं अभी नोट भुनाकर लाता हूँ' कहता हुआ वह बाहर निकल गया और फिर लौटकर न आया।

एक बार एक ख़ूबसूरत नौजवान ने, जो एक चपटी-सी टोपी कानों तक टेढ़ी किये सिरपर लगाये था और रेशमी कमीज़ पर कमर में एक फ़ीता बाँधे हुए बड़े ठाट-बाट से घूमता था, लियूबा को अपने साथ होटल में चलने की दावत दी। वहाँ पहुँचकर उसने होटलवाले से शराब और खाना मँगवाया और लियूबा के साथ बैठकर खाना खाता हुआ और शराब पीता हुआ, बड़ी-बड़ी डींगें हाँकता हुआ, अपने आप को एक बड़े अमीर का लड़का बताता हुआ कहने लगा कि बिलियर्ड

खेलने में शहर भर में कोई उसका मुक़ाबला नहीं कर सकता, सारी स्त्रियाँ उस पर मोहित हैं और लियूबा को अपने साथ रखकर वह उसका भविष्य बना देगा ; मगर फिर वह भी उसी नीच बूढ़े की तरह क्षणभर के लिए कुछ काम का बहाना करके बाहर गया और ग़ायब हो गया। होटल के चौकीदार ने लियूबा को पकड़कर, खाने और शराब के दाम न दे सकने पर, खूब देरतक मुँह बन्द करके पीटा ; मगर बाद में यह विश्वास हो जाने पर कि दोषी सचमुच वह नौजवान ही था लियूबा नहीं, उसने लियूबा का बटुआ जिसमें एक रुपया और कुछ आने थे, उससे छीन लिया और ज़मानत में उसके सिर का टोप भी उतार कर रख लिया और उसे वहाँ से चली जाने दिया।

दूसरे एक पैंतालीस वर्ष की उम्र के आदमी ने जो काफ़ी अच्छी पोशाक में था, दो घण्टे तक उसे सताकर, होटल के कमरे का किराया और बारह आने पैसे उसे दिये। लियूबा उसके इतने कम दाम देने पर शिकायत करने लगी तो उसने उसकी नाक पर मुक्का रखकर, धमकाते हुए कहा : 'चुप, बदमाश कहीं की ! तूने ज़रा भी और चीं-चपड़ की तो मैं अभी पुलिस को बुलाकर कहूँगा कि तूने मुझे सोते में लूट लिया। क्यों, बुलाऊँ पुलिस ? कितने दिनों से तू जेल नहीं गई है ?'

इस प्रकार धमकाकर वह चलता बना और इसी प्रकार के दूसरे बहुत-से वाक़यात भी हुए। अन्त में एक दिन जब उसके मालिक मकान ने जो कि एक खेवट था और उसकी स्त्री ने लियूबा के कपड़े-लत्ते भी, किराया न मिलने के कारण, उठाकर घर से बाहर फेंक दिये और वह रातभर मेंह में, सड़कों पर, पुलिस की निगाह से बचती हुई भटकती रही, तब उसने शर्म और घृणा से लिखोनिन की शरण में जाने का निश्चय किया, मगर लिखोनिन शहर में नहीं था। लियूबा को जिस रोज़ उसने अन्यायपूर्ण अपमानित करके अपने घर से निकाल दिया था उसके दूसरे रोज़ ही वह भी दूसरों को शर्म से अपना मुँह न

दिखाने के डर से शहर छोड़कर भाग गया था, अतएव लियूबा ने हताश होकर सुबह को चकले में फिर लौट जाने और मालकिन से अपनी ग़लती की माफ़ी माँगने का विचार किया था।

× × ×

'जेनेन्का! तुम बड़ी चतुर, वीर और अच्छे दिल की हो; तुम मालकिन से मेरी तरफ़ से प्रार्थना करोगी तो वह अवश्य मान लेगी' लियूबा ने जेनेका से गिड़गिड़ाते हुए कहा और उसके खुले हुए कन्धों को चूमकर अपने आँसुओं से भिगो दिया।

'नहीं, वह किसी की नहीं सुनेगी' दुःख से जेनेन्का ने उत्तर में कहा—'तुम ऐसे मूर्ख और नीच मनुष्य के साथ व्यर्थ ही गईं!'

'जेनेन्का मगर तुमने तो मुझे उसके साथ जाने की सलाह दी थी' झिझकते हुए लियूबा ने कहा।

'मैंने सलाह दी थी?...मैंने तुम्हें ऐसी सलाह कब दी थी?...मेरे सिर झूठमूठ का दोष क्यों मढ़ती हो! क्या मैं ऐसी मर गई हूँ...ख़ैर, अच्छा चलो मालकिन के पास चलें।'

ऐम्मा ऐडवार्डोव्ना को लियूबा के लौट आने का काफ़ी देर से पता था। जब लियूबा, चारों तरफ़ देखती हुई, मकान के आँगन में घुसी थी तभी उसने उसे देख लिया था। मन में वह लियूबा को फिर चकले में लेने के बिल्कुल विरुद्ध नहीं थी। उसको चकले से चले जाने देने के लिए भी वह केवल रुपये के लालच से तैयार हो गई थी क्योंकि उसने जो रुपया उसे दिया था उसका आधा उसने स्वयं ले लिया था। साथ ही उसका यह भी विचार था कि अगले बिक्री के मौसम में उसे बहुत-सी नई-नई वेश्याएँ मिल जायँगी जिनमें से वह चुनकर अच्छी और नई छोकरियाँ अपने चकले में रख लेगी, मगर उसका यह विचार ग़लत निकला था क्योंकि पिछले मौसम में बहुत कम नई छोकरियाँ बिकने आई थीं। अतएव उसने लियूबा को देखते ही उसे

फिर चकले में लेने का पक्का इरादा कर लिया था, परन्तु वह अपनी शान और रोब क़ायम रखने के लिए लियूबा को सबक़ सिखाना चाहती थी।

'क्या...कहा?' उसने तमक कर लियूबा का घबराहट से भरा बड़-बड़ाना अच्छी तरह सुनने से पहले ही कहा, 'फिर लौटकर यहाँ आना चाहती है?...न जाने किन किन कुत्तों के साथ गली-कूचों में तूने कुकर्म किये होंगे और अब फिर तू कुतिया भले घर में घुसना चाहती है?...फूँ! रूसी कुतिया! भाग यहाँ से!...'

लियूबा ने मालकिन के हाथ पकड़कर चूमना चाहे, मगर उसने झटककर अपने हाथ लियूबा से छुड़ा लिये और उसने लाल-पीली होते हुए, मुँह बनाकर, होंठ चबाते हुए, तानकर पूरी ताक़त से लियूबा के मुँह पर ऐसे ज़ोर से एक तमाचा मारा कि लियूबा तिलमिला कर बैठ गई; मगर हाँफती हुई वह फौरन ही फिर उठी और सिसकती हुई गिड़गिड़ाई:

'मेरी प्यारी खालाजान, मुझे मारो मत...मेरी प्यारी मुझे मत मारो...'

मगर ऐम्मा ने फिर उसके मुँह पर एक जोर का तमाचा मारा जिससे तिलमिलाकर वह अबकी बार ज़मीन पर चारों खाने चित्त जा गिरी।

इस प्रकार करीब दो मिनट तक उसने क़साई की तरह जी भरकर लियूबा को पीटा। पहले तो जेनेका चुपचाप अपनी आदत के अनुसार घृणापूर्वक देखती रही, मगर फिर एकाएक उसको वह असह्य हो उठा और वह जंगली की तरह चीखती हुई ऐम्मा पर झपटी। उसने ऐम्मा के बाल पकड़ कर खींचने शुरू कर दिये और उसके कपड़े नोंचती हुई ज़ोर से चिल्लाई:

'अरी क़साई!...बदमाश!...कातिल!...नीच कुटनी!...चोर!...'

तीनों स्त्रियाँ ज़ोर-ज़ोर से चीखने और चिल्लाने लगीं और उनकी चीखें और चिल्लाहट की प्रतिध्वनि मकान के तमाम कमरों और रास्तों में गूँज उठीं। वह आम दौरा शुरू हो गया जो कि जेलों में बन्द क़ैदियों को और पागलखाने के तमाम निवासियों को कभी-कभी एका-एक आ जाता है।

एक घण्टे में सिमयन, अपने पड़ोसी दो हम-पेशा मददगारों की मदद से, जो उनकी मदद को दौड़कर आ गये थे, बड़ी मुश्किल से बलवा बन्द कर सका। चकले की तमाम, तेरह की तेरह छोकरियों को खूब पीटा गया; मगर जेनेका को जिसने बलवा शुरू किया था, सब से अधिक और कसकर मार मिली। पिटने के बाद भी लियूबा रेंगती हुई, मालकिन से गिड़गिड़ाती हुई प्रार्थना करती ही रही जब तक कि मालकिन उसे फिर चकले में रख लेने के लिए राज़ी न हो गई। लियूबा जानती थी कि जेनेका की आज की हरकत का बदला उसे भी किसी न किसी दिन अच्छी तरह भुगतना होगा। जेनेका जाकर अपने पलँग पर बैठ गई और पालथी मारे शाम तक बिना कुछ खाये-पिये, मुँह लटकाये, बैठी रही। उसकी साथिनें उससे मिलने गईं तो उसने उन्हें फौरन अपने कमरे से निकाल दिया। उसकी आँख के ऊपर एक छोटा-सा घाव हो गया था जिसके ऊपर उसने एक पैसा चिपका लिया था! फटी हुई कमीज के नीचे से उसकी गर्दन तक एक लम्बी लाल-लाल रस्सी की तरह, चोट का निशान दीखता था जो सिमयन ने उसके लगाया था। बड़ी देर तक वह जङ्गली जानवर की तरह, अँधेरे में आँखें चमकाती हुई, नथने फुलाये हुए, दाँत पीसती हुई बैठी-बैठी बड़बड़ाती रही: 'ठहरो...ठहरो...बदमाशो...देखो मैं तुम्हें दिखा दूँगी...ओ आदमखोरो!...' मगर शाम होते ही जैसे ही चिराग़ जले और जोसिया ने द्वार खटखटाकर कहा—'श्रीमती कपड़े पहिनकर तैयार हो जाइये...बैठक में चलिये!' वैसे ही उसने उठकर,

जल्दी-जल्दी हाथ मुँह धोकर कपड़े पहिने और पाउडर से चोटों को ढाक कर, बैठक में आ बैठी। उसके चेहरे पर दुःख और अभिमान झलक रहा था। वह मुर्झाई हुई थी, परन्तु उसकी आँखों से असह्य रोष की ज्वाला और एक दैवी सौन्दर्य छलक रहे थे।

बहुत से लोगों का—जिन्होंने आत्महत्या करनेवाले लोगों को आत्महत्या करने से कुछ घण्टे पहले देखा है—कहना है कि आत्म-हत्या करनेवाले लोगों की आकृति में एक विचित्र, रहस्यपूर्ण, समझ में न आनेवाला आकर्षण-सा आ जाता है। आज रात को और दूसरे दिन कुछ घण्टों तक जिसने भी जेनेका को देखा उसी की उसकी तरफ आश्चर्यपूर्ण टकटकी बँध गई।

और सबसे विचित्र बात यह हुई—भाग्य के खेल भी निराले होते हैं—कि उसकी मृत्यु का साधन, उस आखिरी तिनके की तरह जिसके रखते ही तराजू का पलड़ा एकदम नीचा हो जाता है, वही सैनिक अफ़सर कोल्या ग्लेडीशेव हुआ जो उसे दिल से चाहता था और उस पर मेहरबान था।

दूसरा अध्याय

कोल्या ग्लेडीशेव एक अच्छा, खुशमिजाज़ और शर्मीला छोकरा था जिसका सिर काफ़ी बड़ा था। उसके लाल-लाल गुलाबी गालोंपर, ऊपरी होंठ के ऊपर और उसकी नई-नई निकलनेवाली मूछों के भीतर एक विचित्र, टेढ़ी, सफेद लाइन बनी हुई थी जो ऐसी लगती थी मानो दूध की बनी हो। उसकी आँखें भूरी और भोली थीं और सिर के बाल इतने छोटे कटे थे कि उनके रेशमी रूओं के अन्दर से उसके सिर की खाल ऐसी चमकती थी जैसी कि एक अच्छी जात के दुधमुँहे सुअर की खाल चमकती है। पिछले जाड़े में जेन्का इसी छोकरे से उसकी मा की तरह अथवा उसको गुंडा समझकर प्रेम किया करती थी और जब वह शर्म से सिटपिटाता हुआ जाने लगता था तो उसको फल और मिठाइयाँ खाने के लिए देती थी।

अबकी बार जब वह आया तो उसमें, सैनिक कैम्पों में काफ़ी दिन रहने के बाद, उम्र का वह फ़र्क़, जो अक्सर छोकरों को बहुत जल्द और अस्पष्ट तौर पर कुमार से जवान बना देता है, दीखता था। वह सैनिक शिक्षालय में अपनी शिक्षा पूरी करके अब पूरा सैनिक जवान

बन चुका था। इस बात का उसे अभिमान था, मगर फिर भी अक्सर मौक़ों पर वह अभी तक सैनिक शिक्षालय की वर्दी में ही घूमा करता था जो कि उसे वास्तव में पसन्द नहीं था। उसका क़द लम्बा और शरीर सुगठित और अधिक फुर्तीला हो गया था। कैम्प के जीवन से उसे बड़ा लाभ हुआ था। उसकी आवाज़ मोटी हो गई थी और स्तनों की ढेपनियाँ सख्त हो गई थीं जिस पर उसे अभिमान था क्योंकि वह जानता कि यह उसकी मर्दानगी के परिपक्क होने के चिह्न थे। सैनिक शिक्षालय के नियमित और कठोर जीवन के बाद वह इस समय छुट्टियाँ मना रहा था जिसमें उसे हर तरह की स्वतंत्रता थी, जो उसे बड़ी अच्छी लगती थी। घर पर उसे बड़ों के सामने सिगरेट पीने की अब इजाज़त मिल गई थी—यहाँ तक कि खुद उसके पिता ने उसे एक चाँदी का सिगरेट रखने का डिब्बा, जिसपर उसके नाम का मोनो-ग्राम बना था, भेंट दिया था। पिता ने अपने पुत्र के जवान हो जाने और सैनिक शिक्षा खत्म कर लेने की खुशी में उसके लिए पन्द्रह रुपये मासिक का जेब खर्च भी देना शुरू कर दिया था।

कोल्या का पहली बार स्त्री से सम्बन्ध अन्ना के चकले में ही, वह भी जेनेका से हुआ था।

बहुत-से मासूम लोगों का स्त्रियों से पहला सम्बन्ध, गोकि यह बात लोगों को मालूम नहीं है, चकलों अथवा गलीकूचों की वेश्याओं से ही शुरू हुआ करता है; मगर जब नौजवानों से ही नहीं बल्कि पचास-पचास वर्ष के बूढ़े दादाओं से भी यह बात पूछी जाती है कि उनको यह आदत कैसे पड़ी तो वे उसी पुराने झूठ को दुहराने लगते हैं कि घर की नौकरानी ने उन्हें पहले-पहल यह काम सिखाया था। यह झूठ उन बहुत-से विचित्र, स्थायी और पुराने इन्सानी झूठों में से हैं जिनका विचारक और सुधारक न तो कभी ज़िक्र करते हैं और न कभी उन्हें नष्ट करने का प्रयत्न ही करते हैं।

हममें से हर एक, अगर अपने दिल पर हाथ रखकर देखे, तो पायेगा कि हम सभी बहुत-से ऐसे झूठ अपनी ज़िन्दगी में दुहराते रहते हैं जिनको पहले-पहल हमने अपने बचपन में हँसी-हँसी में एक बार किसी से कहा और जब उसने हमारे झूठ पर विश्वास कर लिया तो हमने दो, तीन, चार, पाँच और दस बार उसी झूठ को दूसरों से कहा—और उस झूठ को बार-बार कहने की हमारी आदत हो गई। और अब हम उसी झूठ को इतिहास की तरह ऐसी दृढ़ता से कहते हैं कि लोगों का उस पर विश्वास हो जाता है। कोल्या भी इसी प्रकार मौक़ा पड़ने पर अपने दोस्तों से अपनी एक दूर की चाची की जो जवान और धनवान थी, उससे प्रथम प्रेम की कहानी सुनाता था। यह ज़रूर सच है कि इस स्त्री से जिसकी आँखें बड़ी-बड़ी और काली थीं, जिसका चेहरा दूध का धुला-सा लगता था और जो भीनी और सुगन्धित दक्षिणी स्त्री थी—उसका प्रेम था; मगर उसका यह प्रेम उन दुखी, निठल्ली और लज्जापूर्ण कामवासना के मनमोदकों की तरह था जिनका स्वाद सौ फ़ीसदी नहीं तो निन्यानवे फ़ीसदी मर्दों के मन तो ज़रूर ही चुपचाप चखा करते हैं।

बहुत कम उम्र, करीब नौ या साढ़े नौ वर्ष की उम्र में ही विषय-भोग क्या होता है जान लेने से कोल्या प्रेम अथवा संभोग के उस अन्त की महत्ता नहीं जानता था, जो ठण्डे दिल से या वैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर बड़ा भयङ्कर लगता है। दुर्भाग्य से उस ज़माने में वे विद्वान स्त्रियाँ कोल्या के आस-पास नहीं थीं जो अपने बच्चों को यह कहकर कि छोटा भैय्या खेत में पड़ा मिला, [illegible] में नहीं छिपातीं बल्कि उन्हें [illegible] से [illegible]

उस ज़माने के [illegible] [illegible] [illegible] से [illegible] [illegible]

को सुपुर्द की जाती थीं जो नियमों का पुलिसदारों की तरह [illegible] से

पालन कराते थे और बड़े बेसब्र, उतावले, लालची और बूढ़ी नौकरानियों की तरह चिड़चिड़े और क्रोधी होते थे। अब ऐसा नहीं होता, मगर उस समय छोकरों की शिक्षा डण्डे के ज़ोर से होती थी। छोटे लड़के, जिनके दूध के दाँत भी नहीं गिर पाते थे, घर के स्नेहपूर्ण और सुन्दर वातावरण से हटाकर, इन कठिन शिक्षालयों में रख दिये जाते थे, जहाँ स्नेह का प्रदर्शन 'छोकरीपन' कहा जाता था ; मगर स्नेह के वातावरण के लिए—चुम्बन, आलिङ्गन और प्रेम की बातें छिप-छिप कर करने के लिए—सभी लालायित रहते थे।

समझदारी और स्नेह के व्यवहार से, स्नान और खुली हवा में व्यायाम करने से—ज़बरदस्ती की क़वायद और वरज़िशों से नहीं बल्कि अपनी इच्छानुसार जिसको जो व्यायाम पसन्द हो उससे—उम्र के इस तक़ाज़े की कठोरता कम की जा सकती थी और ठीक मार्ग पर लगाई जा सकती थी, मगर उस समय के शिक्षालयों में इस बात का कोई ख्याल नहीं रखा जाता था। *

मा-बाप और बहिनों के स्नेह की भूख, जो शिक्षालयों में एकाएक चले आने से अतृप्त रह जाती थी, अस्वाभाविक बनकर सुन्दर छोकरों के प्रेम में जो 'परियाँ' कहलाते थे—और एक दूसरे को अँधेरे कोनों में आलिङ्गन करने, हाथ में हाथ डालकर घूमने और स्त्रियों से अपने प्रेम की कल्पित कहानियाँ कहने में परिणत होने लगती थी। ऐसा ही छोकरियों के शिक्षालयों में भी होता था। ऐसा करने में उन्हें बाल्यकालीन कहानी-प्रेम का और उनमें इस उम्र में जाग्रत होनेवाली विषय-वासना का, दोनो ही का, आनन्द आता था। अक्सर पन्द्रह वर्ष का कोई छोकरा जिसको खेल-कूद और खाने-पीने से ही अधिक प्रेम होना चाहिये था, किसी सस्ते उपन्यास को पढ़कर अपने दोस्तों को चुपचाप एक अमीर और सुन्दर नौजवान विधवा से गुप्त प्रेम की कहानी सुनाता

* हमारे देश के शिक्षालयों में तो आज भी इसका ख्याल नहीं रखा जाता।

हुआ कहता था—'हर शनिवार को छुट्टी होते ही मैं चुपचाप उसके घर चला जाता हूँ। वहाँ मेरी खूब ख़ातिर होती है। हम दोनों के पलङ्ग के पास की मेज़ पर फलों और मिठाइयों से भरी तश्तरियाँ और क़ीमती शराब की बोतलें रखी रहती हैं और हम दोनों खून एक दूसरे को प्यार करते हैं।'

इन शिक्षालयों में विद्यार्थी तरह-तरह की पुस्तकें जी भरकर पढ़ते हैं और इन किताबों के पढ़ने का उनपर बिल्कुल वैसा ही असर होता है जैसा कि किसी पर अधिक शराब पीने का होता है। कितनी ही देख-भाल और सख्ती क्यों न की जाय परन्तु विद्यार्थी उन्हीं किताबों को पढ़ते हैं जिनके पढ़ने का उन्हें निषेध किया जाता है। निषेध से उन्हें रोकना न तो आज तक सम्भव ही हो सका है और न आगे ही कभी सम्भव होगा क्योंकि निषेध करने से विद्यार्थियों के मन में निषिद्ध वस्तु के प्रति जिज्ञासा और बढ़ती है। शिक्षालयों के छोटे-छोटे दर्जों में भी सस्ते, लैला-मजनू क़िस्म के उपन्यास खूब हाथों-हाथ बटा करते और पढ़े जाते हैं। *

मगर चाहे यह आश्चर्य की बात अथवा विचित्र विरोधाभास ही क्यों न लगे, परन्तु सच तो यह है कि इन उपन्यासों के पढ़ने या नग्न चित्र देखने से ही काम जिज्ञासा बालकों में उत्पन्न नहीं हो जाती। ऐसे उपन्यासों और चित्रों में तो छोकरों का रस इसी से होता है कि उनको वर्जित किया जाता है। सैनिक शिक्षालय के पुस्तकालय में तमाम सर्वश्रेष्ठ रूसी लेखकों के उपन्यास भी थे। और इनमें से किसी लेखक की रचनाओं का कोल्या के जीवन पर प्रभाव पड़ा तो वह तुगनेंव था

* आशा है कि पाठक शिक्षा के आधुनिक सिद्धान्तों से परिचित हैं; नहीं तो उन्हें इस विषय से अवश्य परिचय प्राप्त करना चाहिये क्योंकि बाल-बच्चों को उत्पन्न करके भी इस विषय को न समझना वैसा ही है जैसा कि बाग लगाकर पेड़ों की ज़रूरतों से अनभिज्ञ रहना।

जो कि रूस का एक महान लेखक माना जाता है। महान तुगर्नेव की रचनाओं में हर स्थान पर प्रेम को एक घूँघट में छिपाकर रखा जाता है जिससे जिज्ञासा और बढ़ती है जैसी कि घूँघट से चेहरा छिपाकर चलनेवाली स्त्री का चेहरा देखने को तबियत होती है। उसकी रचनाओं में कुँवारी छोकरियाँ कामदेव के आगमन का अभास पाते ही उत्तेजित होने, शर्माने, काँपने और लाल होने लगती हैं; विवाहित स्त्रियाँ अपने कर्तव्य, धर्म और मान-मर्यादा का विचार करने लगती हैं और फिर रो-रोकर गिरती हैं अथवा बहादुरी से कामदेव के वाण सहती हुईं उससे युद्ध करती हैं; अथवा अक्सर क्रूर भाग्य के झोंके आकर उनकी जीवन-लीला ही ऐसे क्षण पर खत्म कर देते हैं जब कि फल पककर हवा के एक ज़रा से झोंके से ही नीचे गिर पड़ने के लिए तैयार होता है। और इन सब के होते हुए भी तुर्गनेव के पात्र हमेशा अनुचित प्रेम के प्यासे रहते हैं, उसके लिए रोने और विलाप करते हैं, पाकर खुश होते हैं और उसमें पड़कर दुनिया से विरक्त हो जाते हैं। बालकों के विचार करने का ढंग इस बाउम्र लोगों के विचार करने के ढङ्ग से भिन्न होता है। हर चीज़, जो हम इनके लिए वर्जित करते उनसे छिपाते अथवा खोलकर कहने से डरते हैं, उनके लिए वे दुगनी बल्कि तिगुनी जिज्ञासा का पात्र हो जाते हैं। अतएव वे ऐसी पुस्तकों को पढ़कर यही नतीजा निकालते हैं कि बाउम्र लोग उनसे कुछ बातें छिपाते हैं।

एक और बात का ज़िक्र कर देना भी ज़रूरी है। कोल्या ने एक बार बचपन में जैसा कि उसकी उम्र के छोकरों को अक्सर मौका होता है; अपनी घर की नौकरानी फ़रोसिया को, जिसके गाल गुलाबी और चिकने, चेहरा हमेशा खुश और टाँगें लोहे की तरह सख्त थीं, जिसकी पीठ पर हँसी-हँसी में उसने एक दिन थप्पड़ भी लगाया था, अपने बाप के कमरे से, जब वह अपने बाप से मिलने के लिए अचा-

नक उसके कमरे में घुस गया था, अपने कपड़े ठीक करते हुए भागते देखा था और उसने यह भी देखा था कि बाप का चेहरा शर्म से लाल हो गया था और नाक नीली और लम्बी हो गई थी। कोल्या के मन में उस समय विचार हुआ था, 'अरे पिताजी कैसे मुर्गे की तरह लग रहे हैं !' और एक बार कोल्या ने पिता की खुली रह जाने-वाली मेज़ की एक दराज़ में से निकालकर चित्रों का एक ऐसा संग्रह भी देखा था जिन्हें बेचनेवाले 'असली कोकशास्त्र' और कमज़ोर दुनियादार 'स्वर्गीय आनन्द' के चित्र कहते हैं।

और उसने अपनी मा को भी पॉल ऐडवार्डोविश के साथ जो किसी दूतावास में अफ़सर था और खूब सजधज कर और इत्र लगाकर आया करता था, गाड़ी में बैठकर सैण्टपीटर्स बर्ग के अमीरों के रिवाज के अनुसार, हवा खाने के लिए और नदी के किनारे बैठकर सूर्यास्त देखते देखा था। उसने ऐसे मौकों पर अपनी मा के चेहरे को विशेष आनन्द से दमकते, उसकी छाती फूलते और विचित्र व्यवहार करते देखा था। उसने यह भी देखा था कि उसकी मा घरवालों और नौकरों से गुस्से में ज़ोर से बोलती होती थी तो भी पॉल ऐडवार्डोविश के आते ही उसकी आवाज़ एकदम काँपकर धीमी और मखमल की तरह कोमल और मधुर हो जाती थी और वह धूप में एक घास से हरे-भरे मैदान की तरह चमक उठती थी। काश कि वे लोग जो काफ़ी दुनिया देख चुके हैं, यह भी जानते होते कि उनके छोटे-छोटे बच्चे, उनकी नन्ही-नन्ही बच्चियाँ जिनके बारे में वे कहते हैं, 'अरे, वोद्या, पीटी अथवा किटी की चिन्ता न करो...वह बहुत छोटी है...कुछ नहीं समझती !...काश कि वे यह जानते कि ये छोटे-छोटे बालक कितनी अधिक बातें समझते हैं !...लगभग सभी कुछ समझते हैं !'

इसी तरह ग्लेडीशेव के बड़े भाई के इतिहास का असर भी ग्लेडी-शेव पर हुआ था। कोल्या का बड़ा भाई सैनिक शिक्षालय से शिक्षा

पाकर एक तोपखाने के दस्ते में शरीक हो चुका था। छुट्टी पर घर रहने के लिए वह आया हुआ था और उसके रहने के लिए दो कमरे अलग दे दिये गये थे। इस समय नियूशा नाम की एक नौकरानी इस घर में काम करती थी जो काली-काली बालों की ऐसी सुन्दर और आकर्षक छोकरी थी कि उसके कपड़े बदल दिये जाते तो वह बड़ी आसानी से किसी नाटक की सुन्दर ऐक्ट्रेस, अथवा किसी राजकुल की शाहज़ादी, अथवा कोई राजनैतिक कार्यकर्ता लग सकती थी। इस छोकरी को इस घर में हँसी में श्रीमती अनीता के नाम से भी पुकारा जाता था। हँसी-हँसी में ही कोल्या का बड़ा भाई इस छोकरी को प्रेम करने लगा। कोल्या की मा ने इस बात से आँख फिराई। उसने अपने मन में सोचा कि 'मेरा बोरेन्का वेश्याओं अथवा गली-कूचे में फिरनेवाली स्त्रियों के पास जाय उससे तो यही अच्छा है कि वह अपना भोलापन और पवित्र शरीर इस मासूम लड़की पर न्योछावर करे।' उसके मन में अपने पुत्र के हित का ही विचार था। कोल्या इन दिनों प्रेम के उपन्यास खूब पढ़ा करता था, अतएव उसने अपने भाई के व्यवहार के जो उसकी समझ में आये, मतलब निकाले जोकि कभी सच और कभी कल्पित होते थे; मगर छः मास के बाद उसने द्वार के पीछे से जो दृश्य देखा उसका ज़िन्दगी भर भूलना उसे मुश्किल था। उसकी मा जो हमेशा शरीफ़ और गम्भीर वर्ताव किया करती थी, अपने कमरे में अनीता को चिल्ला-चिल्लाकर बुरी से बुरी गालियाँ सुना रही थी। अनीता को गर्भ का पाचवाँ महीना था। अगर अनीता रोई और चिल्लाई न होती तो वे लोग उसको कुछ रुपया दे-दिलाकर चुपचाप वहाँ से विदा कर देते, परन्तु वह कोल्या के भाई को दिल से प्रेम करने लगी थी। रुपया नहीं चाहती थी और रोती थी। अतएव वे उसे पुलिस की मदद से घर से निकाल रहे थे।

पाँचवें या छटे दर्जे में ही कोल्या के बहुत से साथियों ने इस

विषय का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। छोकरों के दलों में यह बात ख़ास तौर पर मर्दानगी की समझी जाती थी कि गुप्त बाज़ारू वस्तुओं को खुले नामों से पुकारा जाय। कोल्या के एक साथी विद्यार्थी को इसी समय एक गुप्त रोग भी हो गया जो खतरनाक तो नहीं था, मगर फिर भी गन्दा रोग था। इस बहादुरी के लिए यह छोकरा तमाम दूसरे छोकरों की पूजा का तीन मास तक पात्र बना रहा। बहुत-से छोकरे चकलों में भी ज़ाते थे और उनकी इन हवाखोरियों का ज़िक्र उसी उत्साह के साथ तमाम लड़कों में किया जाता था जिस तरह वीरों की बहादुरी की कहानियाँ कही जाती हैं। सच तो यह है कि ऐसे छोकरों को उच्चतम वीर ही समझा जाता था।

अतएव एक बार ऐसा हुआ कि यह छोकरे ग्लेडीशेव को भी अन्ना के चकले में ले गये। वे क्या ले गये वह खुद ही खुशामद करके उनके साथ गया। बहुत दिनों से उसकी वहाँ जाने की इच्छा हो रही थी जिसे वह दबा न सका। बाद में इस शाम को वह हमेशा घृणा, आत्मग्लानि और एक धुँधले, परेशान करनेवाले स्वप्न की तरह याद किया करता था। कैसे गाड़ी में बैठने से पहले उसने अपनी हिम्मत बढ़ाने के लिए शराब पी, जिसमें से खटमलों की-सी बदबू आती थी; कैसा फिर उसका जी मिचलाने लगा, कैसे वह चकले की बैठक में घुसा तो उसको कन्दील और दीवारें घूमते हुए-से लगे, कैसे वह रङ्ग-बिरङ्गी पोशाकों में सफेद-सफेद हाथों और गर्दनों को देखकर चौंधिया-सा गया इत्यादि, अब उसे याद आना भी मुश्किल हो गया था। उसके किसी साथी ने एक छोकरी के कान में झुककर कुछ कहा और वह दौड़ती हुई उसके पास आई और कहने लगी :

'देखो मेरे सुन्दर नौजवान, तुम्हारे साथी कहते हैं कि तुम अभी तक बिल्कुल मासूम हो...आओ मेरे साथ...मैं तुम्हें सब सिखा दूँगी।'

उसने यह बात मिहरबानी से कोल्या से कही थी, मगर अन्ना के

घर की दीवारों ने यही बात कई सौ बार सुनी थी। खैर, फिर जो कुछ हुआ उसका याद करना कोल्या को इतना दुःखद हो जाता था कि वह सोचते-सोचते, बीच में ही, प्रयत्न करके अपना दिमाग़ दूसरी तरफ़ फिरा देता था। उसे केवल लैम्प से निकल-निकलकर आँखों के आगे आनेवाले चक्करों, लगातार चुम्बनों, परेशान कर देनेवाले आलिङ्गनों—उसके बाद एक अचानक तेज़ दर्द की जिससे भय और आनन्द, दोनों से, चीख पड़ने को जी चाहता है और फिर अपने काँपते हुए हाथों की जिनसे कपड़ों के बटन लगाना भी मुश्किल हो गया था, एक धुँधली-धुँधली-सी याद आती थी।

प्रथम बार यह दर्द सभी मनुष्यों को दुःखी करता है, परन्तु यह नैतिक दर्द भी जिसका जीवन पर बड़ा गहरा और गम्भीर प्रभाव होता है, शीघ्र ही खत्म हो जाता है और इसका प्रभाव अधिकतर आदमियों पर इतना ही रहता है कि—कभी-कभी तमाम जिन्दगी—उनके हृदय में खास मौकों पर यह एक खटक करके चुप हो जाया करता है। शीघ्र ही कोल्या भी इसका आदी हो गया। उसकी हिम्मत बढ़ी ; स्त्रियों से परिचय बढ़ा और उसे इस बात से बड़ी खुशी होने लगी कि जब वह अन्ना के चकले में दाखिल होता था तो तमाम छोकरियाँ और सबसे पहले वेरका चिल्लाकर जैनेका से कहती थी :

'जैनेका, तुम्हारा प्रेमी आ गया !'

कोल्या को अपनी, अभी तक अच्छी तरह न निकलनेवाली, मूछों पर ताव देते हुए, अपने मित्रों को यह बात सुनाते हुए बड़ा अच्छा लगता था।

तीसरा अध्याय

अभी शाम ही थी। करीब नौ बजे होंगे। अगस्त का महीना था। पानी बरस रहा था। अन्ना की रोशनी से चमचमाती हुई बैठक करीब-खाली-सी थी, सिर्फ दरवाजे के पास तारघर का एक क्लर्क, अपनी टाँगें शर्म से भोंड़ी तरह कुर्सी के नीचे किए हुए, बैठा मोटी किटी से उस प्रकार की दुनियाबी और अनियमित बातचीत शुरू करने का प्रयत्न कर रहा था जो नम्र समाज में नृत्य के अवसरों पर करना उचित समझी जाती है। लम्बी-लम्बी टाँगोंवाला रोलीपोली कमरे में घूमता हुआ कभी इस छोकरी के पास, कभी उस छोकरी के पास बैठ-बैठकर उन्हें अपनी लगातार बकवास से खुश करने का प्रयत्न कर रहा था। कोल्या ग्लेडीशेव के बैठक में घुसते ही सबसे पहले उसे गोल-गोल आखोंवाली वेरका ने देखा, जो सदा की भाँति अपनी घुड़सवार के पोशाक पहिने थी। उसे देखते ही वह तालियाँ बजा-बजाकर नाचने और चिल्लाने लगी :

'जैनेच्का, जैनेच्का, जल्दी आओ, तुम्हारा छोटा-सा बालम आ पहुँचा...छोटा-सा सिपाही आ गया...कैसा बाँका छोटा जवान है!'

मगर जेनेका इस समय बैठक में नहीं थी। एक तगड़ा रेलवे का गार्ड उसे ले गया था।

यह काफ़ी उम्र का, गम्भीर, शानदार दीखनेवाला रेलवे का गार्ड, जो रेल की बत्तियाँ चुरा-चुराकर बेचा करता था, और बेटिकट मुसा-फिरों को रिश्वत लेकर सस्ता सफ़र कराया करता था, बड़े सुभीते का मेहमान था क्योंकि वह कभी बीस मिनट से अधिक इस घर में नहीं ठहरता था। उसे अपनी ट्रेन छूट जाने का डर लगा रहता था जिससे वह जितनी देर भी यहाँ रहता, बराबार अपनी घड़ी देखता रहता था। इस बीच में वह हमेशा चार बोतलें बीयर शराब की पीता था और चलते वक्त छोकरी को आठ आना मिठाई खाने के लिए और सिमियन को चार आना शराब पीने के लिए देकर जाता था।

कोल्या ग्लेडीशेव अकेला नहीं आया था। उसके साथ उसी के स्कूल का एक साथी पेट्रोव नाम का विद्यार्थी भी था जो कि आज पहली ही बार चकले की सीढ़ी पर चढ़ रहा था। ग्लेडीशेव के बार-बार प्रलो-भन देने पर वह उसके साथ चला आया था। शायद इस समय उसकी भी वही हालत हो रही थी जो पहली बार चकले में आने पर, डेढ़ वर्ष पहले ग्लेडीशेव की हुई थी जब कि उसके पैर काँप उठे थे, मुँह सूख गया था और कमरे के क़न्दील चक्करों में उसकी आँखों के आगे घूम उठे थे।

सिमियन ने उन दोनों के ओवरकोट उनके कन्धों से उतार कर इस तरह सँभाल कर खूँटी पर टाँगे दिये थे कि जिससे उनके फौजी बटन और तमग़े दिखाई न पड़ सकें।

गम्भीर मुख सिमियन को जिस तरह कालिजों और स्कूलों के छोकरों का चकले में आना पसन्द नहीं था क्योंकि वे बड़ी-बड़ी और ऊटपटाँग बातें करते थे, उसी तरह उसको इन सैनिक शिक्षालय के विद्यार्थियों का यहाँ आना भी पसन्द नहीं था।

'ऐसे लोगों के आने से कोई फ़ायदा नहीं है' वह अपने हमपेशा

दर्वानों से कभी-कभी गम्भीरता-पूर्वक कहता, 'कहीं इन लोगों की यहाँ अपने अफ़सरों से मुठभेड़ हो गई तो हमारा चकला भी बन्द कर दिया जायगा ! याद है न तीन वर्ष पहले लुपेनडिखा का चकला इसी तरह बन्द कर दिया गया था ! हाँ, यह ज़रूर सच है कि उसके बन्द करने पर भी उसका चकला वास्तव में बन्द नहीं हो सका क्योंकि उसने फौरन ही एक दूसरे नाम से नया चकला खोल दिया, मगर फिर जब उस पर मुक़दमा चला और उसे डेढ़ साल की सज़ा हुई तब तो उसका दिवाला ही पिट गया—अकेले बरकेश को उसे चार सौ रुपये देने पड़े थे ! कभी-कभी यह भी होता है कि यह सूअर बीमारी के शिकार हो जाते हैं और घर पर जाकर फिर जब, 'हाय बाबा रे मरा ! हाय अम्मा, मरा !' चिल्लाते हैं तो इनसे पूछा जाता है, 'बदमाश ! बता तूने यह बीमारी कहाँ से पाई ?' और फिर जब यह कह देते हैं 'वहाँ से...वहाँ से' तो फौरन ही हम लोगों की धर-पकड़ शुरू हो जाती है और हमें मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। बताओ भाई, तुम्हीं कहो, ऐसी हालत में इन लोगों का यहाँ आना बुरा है न ?'

'चलिये, अन्दर चलिये' उसने सख्ती से कोल्या और उसके साथी से कोट लेकर कहा।

दोनों विद्यार्थी रोशनी की चमक से आँखें चिमचिमाते हुए, कमरे में घुसे। पेट्रोव जो अपना दिल कड़ा करने के लिए शराब पी चुका था, कमरे में घुसते ही काँपा और पीला पड़ गया। कमरे में घुसकर वे दोनों एक तस्वीर के नीचे जा बैठे और फौरन ही दो छोकरियां—वेरका और टमारा उनके दायें-बायें जा बैठीं।

'बाँके नौजवान, एक सिगरेट तो मुझे पिलाओ !' वेरका ने पेट्रोव से कहा और अपनी मज़बूत और गरम जाँघ उसकी टाँग से इस प्रकार सटाकर रखते हुए मानो इत्तफ़ाक से ऐसा हो गया हो, वह कहने लगी, 'तुम कैसे अच्छे लगते हो !'

'जेनी कहाँ है ?' ग्लेडीशेव ने टमारा से पूछा, 'किसी और के साथ है ?'

टमारा ने उसकी आँखों में घूरकर देखा—इतना घूरकर कि छोकरा सिटपिटा गया और उसकी तरफ़ से मुँह फेर लिया।

'नहीं ; किसी और के साथ क्यों होगी ? केवल उसका सिर दुख रहा है। आज दिन भर उसके सिर में दर्द होता रहा है। वह द्वार के पास खड़ी थी। एकाएक खाला ने द्वार खोला जिससे किवाड़ उसके सिर में लग गया। अतएव बेचारी आज सवेरे ही से माथे पर भीगा कपड़ा रखे पड़ी है, मगर क्या आप बहुत बेसब्र हो रहे हैं ? अभी पाँच मिनट में वह बाहर आती होगी। घबराइये मत, वही आकर आपको सन्तुष्ट करेगी।'

वेरका पेट्रोव के पीछे पड़ी हुई थी, 'प्यारे ! मेरे प्यारे ! कैसे तुम भोले-भाले हो ! मुझे तुम्हारे जैसे पीले जवान बड़े पसन्द हैं ! वे ईर्ष्या करते हैं और दिल भर कर प्यार करते हैं !'

मीठी आवाज़ से धीरे-धीरे अपने 'बाँके, छैला सँवरिया' की तारीफ़ में एक गीत गाकर उसने पूछा, 'प्यारे, तुम्हारा नाम क्या है ?'

'जार्ज' पेट्रोव ने भर्राई हुई सैनिक की मोटी आवाज़ में कहा।

'जार्जिक ! जोरोच्का ! आहा, कितना अच्छा नाम है !'

एकाएक अपना मुँह उसके कान से लगाकर उसने चतुराई से कहा, 'जोरोच्का, मुझे ले चलो।'

पेट्रोव शर्मा गया और सिटपिटाता हुआ कहने लगा, 'मैं कुछ नहीं कह सकता...जैसी मेरे साथी की राय होगी...'

वेरका खिलखिलाकर हँस पड़ी :

'ओहो ! कैसे दुधमुँहे बच्चे हो ! किसी गाँव में होते तो अभी तक कई बच्चों के बाप हो गये होते ! कहते हो जैसी मेरे साथी की राय होगी !' साथी से क्यों, तुम्हें अपनी धाय से पूछकर आना था ! दूध पिलानेवाली

धाय से ! देखो तो हमारा प्यारी। मैं इनसे कहती हूँ, 'चलो मेरे साथ सोओ' तो यह कहते हैं, 'साथी से राय लेलूँ !' 'कहिये जनाब स: । क्या आप ही इनका लालन-पालन करते हैं ?'

'बहुत बकवास मत कर शैतान !' पेट्रोव ने झुँझलाकर मोटी आवाज़ में झगड़ालू सैनिक की तरह भोंड़ी तौर पर कहा।

पतला, खूसट रोलीपोली, जिसके बाल अब बहुत पक चुके थे, चलकर छोकरों के पास आया और अपना लम्बा पतला सिर एक तरफ़ को झुकाकर, चेहरे पर दयनीय भाव लाकर, गिड़गिड़ाया :

'श्रीमान् सैनिक विद्यार्थियो ! प्रचण्ड विद्वानो ! बुद्धिमानों के सर ताजो ! भावी सेनापतियो ! क्या आप एक बूढ़े को अपने सिगरेटों में से एक सिगरेट देना पसन्द नहीं करेंगे ? मैं ग़रीब आदमी हूँ, मगर मुझे यह सिगरेट बड़े पसन्द हैं।'

और सिगरेट मिलते ही, फौरन वह खुला ; दाहिना पाँव आगे को झुकाकर और कमर पर एक हाथ रखकर उसने अपनी एक तुकबन्दी गानी शुरू कर दी :

'कभी हम भी देते थे दावतें,
चलते जहाँ थे जाम पर जाम।
अब रोटियों के भी हैं लाले,
ज़िन्दगी हो चुकी नाकाम ॥
झुक-झुककर आदाब बजाते,
जो दरबान मेरे आने पर।
धक्के देकर बाहर करते,
आज वही गर्दन पकड़ कर ॥'

'भद्र पुरुषो !' एकएक रोलीपोली ने अपना गाना बन्द करके, अफ़सोस से छाती पीटते हुए कहा, 'मैं अच्छी तरह जानता हूँ आप इस मुल्क के किसी दिन बड़े सेनापति होंगे ; मगर मैं फौज की खाक छान चुका हूँ। मैं जिस ज़माने में जङ्गलात का रेन्जर बनने के लिए

पढ़ता था उस समय महकमा जङ्गलात भी सेना विभाग का ही एक अङ्ग था, अतएव मैं आपके दिलों के सुनहरी और जवाहराती द्वारों को खटखटाकर आपसे प्रार्थना करना चाहता हूँ कि आप मुझे थोड़ा-सा वह सोमरस पिलाने के लिए जो कि देवताओं को भी प्रिय है, कुछ चन्दा देने का उपकार करें।'

'रोली! मोटी किटी कमरे के उस कोने से चिल्लाकर बोली, 'इन सैनिक अफसरों को अपनी बिजली की नक़्ल करके दिखाओ; मुफ़्त में ही रुपया मत माँगो!'

'अच्छा, अच्छा, अभी लो!' रोलीपोली ने खुशी से उत्तर दिया, 'देखिये, मेरे मालिक! मैं आपको जिन्दा तस्वीरें दिखाता हूँ। जून के महीने में बिजली की चमक कैसे होती है मैं आपको दिखाता हूँ। यह महा नाटककार उपनाम रोलीपोली की कृति है जिसकी दुनिया ने क़द्र नहीं की। देखिये, पहिली तस्वीर शुरू होती है।

'जून का महीना है। सूरज तेज़ी से चमक रहा है। घास और फूलों से लदे चरागाह धूप की रोशनी में दमक रहे हैं...' यह कहकर रोलीपोली ने अपना झुर्राया हुआ, उदार चेहरा हँसी से खिला दिया और आँखें छोटी करलीं!

'मगर शीघ्र ही आसमान में बादल घिर उठते हैं और एक के ऊपर केंकड़ों की तरह चढ़ते हुए वे धीरे-धीरे नीले आकाश में भर जाते हैं...'

यह कहकर धीरे-धीरे रोलीपोली के चेहरे से मुसकान मिटने लगी और वह अधिक गम्भीर और कठोर होने लगा।

'आखिरकार बादल सूरज को घेर लेते हैं...और मनहूस अन्धकार छा जाता है...'

यह कहकर रोलीपोली ने अपना चेहरा बिल्कुल मनहूस और भयङ्कर बना लिया।

'पानी की बूँदें गिरने लगती हैं...'

रोलीपोली अपनी उङ्गलियों से कुर्सी पर टप-टप-टप करने लगा।

'...आकाश में बिजली चमकती है...'

रोलीपोली ने जल्दी-जल्दी आँखें खोलीं और बन्द कीं और मुँह का बाँया कोना टेढ़ा करके हिलाया।

'...एकाएक मूसलाधार पानी बरसने लगता है और बिजली ज़ोर ज़ोर से चौंधियाती है...'

यह कहकर रोलीपोली ने बड़ी चतुरता से आँखों, नाक, ऊपरी होंठों और निचले होंठों के हावभावों से बिजली की टेढ़ीमेढ़ी चालों की बड़ी सुन्दर नक़लें कीं।

'...कड़ककर बिजली गिरती है...तड़ड़...धड़ाम्...और एक बड़ा पुराना और ऊँचा वृक्ष सींक की तरह नीचे गिर पड़ता है...'

यह कहकर रोलीपोली, ऐसी आसानी से जिसकी उसकी उम्र से आशा नहीं की जा सकती थी, पीठ या घुटने बिना झुकाये, सिर्फ़ सिर एक तरफ़ को लटकाकर, मूर्ति की तरह सीधा, फौरन ज़मीन पर गिरा और फिर चपलता से उछलकर अपने पाँवों पर खड़ा हो गया।

'मगर फिर तूफान धीरे-धीरे कम होने लगता है। बिजली की चमक और बादलों की गरज कम होने लगती है।...बादल हटने लगते हैं।...और सूर्य्य भगवान् के फिर दर्शन होते हैं...'

रोलीपोली फ़िर मुसकराने लगा।

'...और धीरे-धीरे फिर सूरज भीगी हुई पृथ्वी पर ज़ोर से चमकने लगता है...

रोलीपोली के बूढ़े चेहरे पर बेवकूफी की हँसी खिल गई। सैनिक अफसरों ने उसे एक अठन्नी इनाम में दी। उसने उसे हाथ में लेते ही आकाश की तरफ़ हाथ फेंककर कहा :

'अरे बाप रे, गईं !' और उसके हाथ में से दोनों अठन्नियाँ ग़ायब हो गईं।

'टमारेच्का, बड़ी बेईमान हो तुम ?' उसने झिड़ककर कहा, 'एक बूढ़े पेन्शनयाफ़्ता का, जो एक बड़ा अफ़सर होते-होते रह गया, आख़िरी पैसा उससे झटकते हुए तुम्हें शर्म भी नहीं आती ? यह तुमने यहाँ मेरे पैसे छीनकर क्यों छिपाये हैं ?'

यह कहकर उसने उङ्गलियाँ चटखाईं और टमारा के कान में से दोनों अठन्नियाँ निकाल लीं।

'मैं अभी लौटकर आता हूँ, मेरे बिना परेशान मत होइये' उसने दोनों सैनिक जवानो से कहा, 'परन्तु आपको जाने की जल्दी हो और आप मेरा इन्तज़ार न कर सकें तो मैं बुरा न मानूँगा। अच्छा, धन्यवाद...'

'रोलीपोली !' नन्ही मनका ने चिल्लाकर उससे कहा, 'मेरे लिए बाज़ार से मिठाई लेते आना...यह तो...!'

रोलीपोली ने घूमकर मनका के फेंके हुए दामों को बड़ी सफाई से गपक लिया, और बनावटी अदब से झुककर उसे सलाम करके अपनी हरी किनारे की टोपी को टेढ़ा करके लगाते हुए, चल दिया।

लम्बी हैन्रीटा सैनिकों के पास गई और उनसे एक सिगरेट माँगकर अँगड़ाती हुई कहने लगी :

'आप लोग थोड़ा नाच क्यों नहीं कराते ! बैठे-बैठे हमलोगों के तो शरीर दुखने लगते हैं।'

'अच्छा नाचो !' कोल्या ने उसकी बात मानते हुए कहा, 'बजाना शुरू करो।' उस्तादों ने साज बजाना शुरू कर दिया और छोकरियाँ दो-दो के जोड़ों में रिवाज के मुताबिक पीठ सीधी करके और शर्म से आँखें झुकाकर थिरकने लगीं।

कोल्या को नाच का बड़ा शौक़ था। उससे बैठा न रहा गया।

अतएव उसने टमारा को अपने साथ नाचने के लिए बुलाया। पिछले जाड़ों से वह जानता था कि टमारा दूसरों से अच्छी नाचती है। कोल्या जब नाच में ही लगा था तभी रेलवे का तगड़ा गार्ड होशियारी से उन लोगों के बीच से होकर निकलकर चला गया। कोल्या ने उसे जाते नहीं देख पाया।

वेरका के बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी वह पेट्रोव को अपनी जगह से बिल्कुल टस से मस न कर सकी। शराब का हल्का नशा उसके दिमाग़ से निकल चुका था जिससे उसे वह कार्य, जिसके लिए वह यहाँ आया था, क्षण-क्षण अधिक मुश्किल और भयङ्कर लगने लगा था। वह सोच रहा था कि सिर दर्द का बहाना करके अथवा 'कोई पसन्द नहीं आई' कहकर यहाँ से रास्ता नापे। मगर वह जानता था कि कोल्या उसे वहाँ से यों जाने नहीं देगा। साथ ही उसे अपनी जगह से उठकर कुछ क़दम चलना भी कठिन लग रहा था। कोल्या से इस विषय पर कुछ कहने की उसमें शक्ति नहीं थी।

नाच खतम हो जाने पर, टमारा और कोल्या, फिर आकर उसके पास बैठ गये।

'अरे! मगर जैनेच्का अभी तक नहीं आई?' कोल्या ने बेसब्री से पूछा।

टमारा ने वेरका पर एक ऐसी नज़र डाली जिसका मतलब न जाननेवालों की समझ में नहीं आ सकता था। वेरका ने फौरन आँखें नीची कर लीं। इसका अर्थ था—हाँ, वह चला गया।

'मैं अभी जाकर जैनेच्का को बुलाये लाती हूँ' टमारा ने कहा,

'मगर तुम अपनी जैनेच्का पर ही इतने लट्टू क्यों हो?' हैन्रीटा ने कहा, 'मेरे साथ क्यों नहीं चलते!'

'अच्छा, दूसरी बार तुम्हीं को ले जाऊँगा।' कोल्या ने उत्तर में कहा और जल्दी-जल्दी सिगरेट पीने लगा।

× × ×

जैनेका ने अभी अपने कपड़े पहिनने भी शुरू नहीं किये थे। आईने के सामने बैठी वह अपने चेहरे पर पाउडर लगा रही थी।

'क्या है टमोरच्का ?' उसने पूछा।

'तुम्हारा प्रेमी सैनिक-अफसर आया है। बैठा तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा है।'

'ओह ! वही पारसाल जो बच्चा आता था ! भाड़ में जाय...'

'हाँ, हाँ, वही। मगर वह अब लम्बा, तगड़ा और बड़ा सुन्दर जवान हो गया है...देखकर तबियत खुश होती है ! अच्छा तुम उसके साथ नहीं जाना चाहती हो तो मैं चली जाऊँगी।'

टमारा ने आईने में देखा कि यह सुनकर जैनेका की भौंहें चढ़ गईं। वह बोली :

'नहीं, ज़रा ठहर जाओ, टमारा। तुम्हारे जाने की ज़रूरत नहीं है। मैं ही उससे मिल लेती हूँ। मेरे पास भेज दो। उससे कह देना कि मेरी तबियत ठीक नहीं है, सिर दुखता है।'

'मैं उससे कह चुकी हूँ कि ख़ाला ने ऐसा द्वार खोला कि तुम्हारे सिर पर किवाड़ लगा जिससे तुम्हारे सिर में चोट आ गई है और तुम ठण्डे पानी की पट्टी बाँधे पड़ी हो। मगर जैनेच्का, क्या इस सबकी ज़रूरत है ?'

'इसकी ज़रूरत है या नहीं यह तय करना मेरा काम है टमारा, तुम्हारा काम नहीं है', जैनेका ने गुस्ताखी से कहा।

टमारा ने सँभलकर पूछा, 'तो क्या तुम्हें कोई अफ़सोस नहीं है ?'

'मगर तुम्हें तो मेरे लिए कोई अफ़सोस नहीं है ?' यह कहकर उसने अपने चोट के निशान को, जो गर्दन तक जाता था, छुआ और फिर बोली, 'और न तुम्हें अपने ऊपर कोई अफ़सोस है ? और न इस बेचारी अभागी लियूब्का के लिए तुम्हें कोई अफ़सोस है ? न पाशा के लिए तुम्हें अफ़सोस है ? तुम मानव-प्राणी थोड़े ही हो, मांस का एक लोथड़ा हो।'

टमारा अभिमानपूर्ण चतुरता से मुसकराई और बोली, 'नहीं मैं मांस का लोथड़ा ही नहीं हूँ! मेरे भी दिल है। वक्त आने पर तुम्हें मालूम हो जायगा, जैनेका! शायद शीघ्र ही! खैर, लड़ो मत—वैसे ही हम लोगों की ज़िन्दगी कौन सुख की है! अच्छा, मैं जाकर अभी उसे तुम्हारे पास भेज देती हूँ।'

उसके चले जाने पर जैनेका ने उठकर नीले कन्दील की रोशनी कम कर दी और रात की पोशाक पहिनकर पलंग पर लेट गई। एक मिनट के बाद ग्लेडीशेव कमरे में घुसा। उसके पीछे-पीछे टमारा पेट्रोव को हाथ पकड़कर घसीटे ला रही थी और वह सिर झुकाये हुए इनकार कर रहा था। सबके आखिर में जोसिया का गुलाबी, तेज़ लोमड़ी का सा चेहरा, जिसकी आँखें ऐंचाताना थीं, दीख रहा था।

'हाँ, अब ठीक है' वह नखरे दिखाती हुई बोली, 'दो सुन्दर जवान और दो परियाँ। अब ठीक दीखता है! पूरा गुलदस्ता बन गया! कहिये, किस चीज़ से आप लोगों की अब खातिर करूँ? बीयर या और कोई शराब लाऊँ?'

ग्लेडीशेव की जेब में आज इतना रुपया था जितना आज तक कभी उसकी जेब में एकदम नहीं आया था। उसकी जेब में इस वक्त नक़द पचीस रुपये थे और वे खर्च होने के लिए खुलखुला रहे थे। बीयर वह केवल अपने आपको बहादुर साबित करने के लिए पी लिया करता था। वरना उसका स्वाद उसे बिल्कुल ही पसन्द नहीं था और उसे इस बात पर मन ही मन आश्चर्य भी होता था कि दूसरे लोग उसे कैसे पीना पसन्द करते हैं। अतएव उसने एक बड़े शौकीन ऐय्याश की तरह होंठ लटकाकर, अविश्वास से कहा, 'मगर तुम्हारे यहाँ तो रद्दी शराबें होंगी?'

'खूब कहा आपने, खूब कहा मेरे नौजवान आपने! हमारे यहाँ

आपको अच्छी से अच्छी शराबें मिल सकती हैं। के हार्स[1] टेनेरिर्फ़[2] और फ्रान्सीसी लाफीट[3] और पोर्ट वाइन[4] जो चाहे सो आपको मिल सकतीं हैं, मगर छोकरियों को लाफीट और लेमोनेड बहुत पसन्द है।'

'और क़ीमतें क्या हैं ?'

'बहुत मामूली। तमाम चकलों में एक ही भाव है—लाफीट की एक बोतल पाँच रुपये को और चार बोतलें लेमोनेड की दो रुपये को यानी कुल मिलाकर सात रुपये...'

'बस, बस, जोसिया' जैनेका ने उसे लापरवाही से रोकते हुए कहा, 'इन छोकरों से इस तरह फायदा करते तुम्हें शर्म भी नहीं आती ? पाँच रुपये काफ़ी हैं ! देखती नहीं हो ये कौन लोग हैं। ऐसे-वैसे नहीं हैं !'

मगर ग्लेडीशेव का चेहरा शर्म से लाल हो गया। लापरवाही से दस रुपये का नोट फेंककर वह बोला: 'खैर जाने भी दो कुछ हर्ज नहीं। अच्छा ले आओ।'

'लाइये आपके यहाँ आने की फीस भी मैं लेती जाऊँ। रातभर आप रहेंगे या कुछ वक्त तक ? आपको फीस मालूम ही है—रातभर की पाँच रुपया और कुछ वक्त की दो रुपया।'

'अच्छा, अच्छा, कुछ वक्त ही ठहरेंगे' जैनेका ने गुस्से में भरकर कहा। कम से कम इतना विश्वास तो आप हम पर भी कर सकती थीं कि हम उसका रुपया ले लेंगे।'

शराब लाई गई। टमारा ने लालच से मिठाई भी मँगा ली थी। जेनेका ने नन्ही मनका को भी दावत में शरीक होने के लिए बुलाने की इजाज़त माँगी। जेनेका ने खुद शराब नहीं पी। न वह बिस्तर से उठी। वह शरीर शाल में लपेटे पड़ी रही गोकि कमरे के अन्दर काफी गरमी थी। वह ग्लेडीशेव के सुन्दर चेहरे को, जिस पर अब इतनी मर्दानगी आ गई थी, घूरती रही।

१, २, ३, ४ शराबों के नाम।

'क्या हुआ है तुम्हें, मेरी प्यारी?' ग्लेडीशेव ने उसके बिस्तर पर बैठकर उसका हाथ थपथपाते हुए पूछा।

'कुछ नहीं...चोट लग गई...सिर दुखता है...'

'उसकी तरफ़ से ध्यान हटाने की कोशिश करो।'

'प्यारे, तुम्हारे आते ही मेरी तबियत अच्छी होने लगी है। इतने दिन तक तुम कहाँ रहे? क्यों नहीं आये?'

'कैम्पों से ही छुट्टी नहीं मिलती थी—वक्त नहीं मिल सका। पच्चीस मील रोज़ पैदल तय करना होता था। दिन भर क़वायद करते-करते और चलते-चलते इतना थक जाते थे कि शाम को ऐसा लगता था कि शरीर में पाँव ही नहीं रहे हैं...नक़्ली लड़ाइयाँ भी लड़नी होती थीं... कठिन ज़िन्दगी थी...'

'हाय! हाय!' नन्ही मनका ने एकाएक ताली पीटकर कहा, 'तुम जैसे परीजादों को इतना तङ्ग क्यों किया जाता है? मेरे तुम जैसा भाई या लड़का होता तो मैं ऐसा कभी भी बर्दाश्त न करती! लीजिये आपके सम्मान में मैं यह शराब पीती हूँ!'

उसने उनके गिलास से अपना शराब का गिलास टकराकर शराब पी ली। जेनेका ध्यान पूर्वक ग्लेडीशेव के चेहरे को घूरती रही।

'और तुम, जैनेच्का?' ग्लेडीशेव ने एक गिलास उसकी तरफ़ बढ़ाते हुए कहा।

'मैं नहीं पीना चाहती' उसने सुस्ती से उत्तर दिया, 'मगर श्रीमतियो, आप अब शराब पी चुकीं और गपशप भी कर चुकीं—अब इतना यहाँ न रुको कि मेहमान आपसे थकने लगें।'

'तुम आज मेरे साथ रात-भर रहोगे न?' उसने दूसरों के चले जाने पर ग्लेडीशेव से पूछा, 'रुपये की चिन्ता मत करना, मेरे प्यारे। तुम्हारे पास काफ़ी रुपया न हो तो मैं दूँगी। देखो, तुम कितने सुन्दर हो कि छिनालें तुम पर उल्टा रुपया खर्च करती हैं!' यह कहकर वह हँसने लगी।

ग्लेडीशेव ने उसको घूरकर देखा। उसको जेनेका की आवाज़ कुछ विचित्र-सी लगी—न तो वह उदास थी, न कोमल और न तिरस्कार-पूर्ण।

'नहीं मेरी प्यारी, ऐसा न हो सकेगा। मेरी खुद तुम्हारे साथ रात-भर ठहरने की बड़ी इच्छा है। मैं खुद रहना चाहता हूँ! मगर ठहर न सकूँगा। दस बजे तक घर पहुँच जाने का मैं वायदा करके आया हूँ।'

'इन्तज़ार करेंगे तो क्या हुआ! अब तुम बालक थोड़े ही रहे हो! तुम्हें किसी को जवाब थोड़े ही देना है कि कहाँ रहे?...मगर खैर, जैसी तुम्हारी इच्छा। क्या मैं रोशनी बिल्कुल बुझा दूँ या जैसी है वैसी ही ठीक है? कौन-सी बत्ती जलती रहने दूँ—इस दीवाल की या बाहरवाली?'

'कोई भी रहने दो, मेरे लिए दोनों एक-सी हैं', उसने काँपती हुई आवाज़ से उत्तर दिया; और अपनी बाहों में जैनेका का गरम और खुश्क शरीर लेकर, अपने सीने से लगाकर, उसने अपना मुँह उसके होंठ चूमने को बढ़ाया, मगर जैनेका ने उसको धीरे से अपने पास से दूर हटाते हुए कहा।

'ठहरो मेरे प्यारे, ज़रा ठहरो—चूमने के लिए अभी बहुत वक्त हम लोगों के पास है। क्षण भर के लिए ज़रा चुपचाप लेटे रहो...हाँ, इसी तरह...चुपचाप, बिल्कुल शान्त...ज़रा भी हिलना-डुलना मत...'

इन विचित्र और अधिकारयुक्त शब्दों का ग्लेडीशेव पर जादू का सा असर पड़ा। वह उसके कहने के अनुसार बाहों पर अपना सिर रखकर, चुपचाप लेट गया। जेनेका ने अपना सिर ज़रा उठाया और कुहनी ऊँची करके, उस पर सिर रखकर, चुपचाप धुँधली रोशनी में उसका शरीर देखने लगी—जो बहुत गोरा, मजबूत, और सुगठित दीख रहा था। चौड़ी छाती और कन्धे, ठोस पसलियाँ, पतली कमर और मज़बूत फूली हुई जाँघें बड़ी सुन्दर लग रहीं थीं। चेहरे और

गर्दन का रंग शरीर के गौर वर्ण से कन्धों और छाती पर जानेवाली एक लाइन-सी अलग कर रहा था।

ग्लेडीशेव क्षण भर तक आँखें मिचमिचाता रहा। उसको जेनेका की घूरती हुई नज़र अपने सारे शरीर को छूती हुई और इस प्रकार गुदगुदाती हुई-सी लगी जैसे कन्घी को, जिसमें बाल भरे हों, हाथ पर छुआने से धीमी-धीमी गुदगुदी-सी होती है।

उसने आँखें फाड़कर अपने बिल्कुल पास उस स्त्री की बड़ी-बड़ी काली, विचित्र आँखों को देखा, जो उसको इस समय बिल्कुल अपरि-चित-सी लगीं।

'क्या देखती हो, जेनी?' उसने धीरे से पूछा, 'क्या सोच रहीं हो?'

'मेरे प्यारे छोटे लड़के।...तुम्हें कोल्या कहते हैं न? क्यों?'

'हाँ।'

'कोल्या, मुझ पर खफा न हो; मेरी एक इच्छा पूरी कर दो। करोगे? अपनी आँखें फिर बन्द कर लो...नहीं...और ज़ोर से बन्द करो...मैं ज़रा रोशनी तेज करके तुम्हारे शरीर को अच्छी तरह देखना चाहती हूँ। हाँ, ठीक है। काश कि तुम जानते कि तुम कितने सुन्दर हो...कितने सुंदर तुम इस समय दीखते हो! कुछ दिन के बाद तुम भी भोंड़े दीखने लगोगे और तुम्हारे शरीर से भी बकरों-की-सी बदबू आने लगेगी, मगर इस समय तुम्हारे शरीर से ताज़े दूध और फूलों-की-सी महक आ रही है! बन्द रखो...लो...आखें बन्द रखो!'

उसने उठकर रोशनी तेज कर दी और लौटकर अपनी जगह पर पालथी मार कर बैठ गई। दोनों चुप रहे। दूर से, कई कमरों के उस छोर से एक टूटे पियानों की टिनटिन आ रही थी; किसी की हँसी की आवाज़ बहती हुई आ रही थी और दूसरी ओर से एक गीत और इसी मज़ाक की ध्वनि आ रही थी; मगर बातचीत साफ़

सुनाई नहीं देती थी। दूर गली में एक गाड़ी खड़खड़ाती हुई चली जा रही थी...

'कुछ ही क्षण में मैं इसे भी दूसरों की तरह बीमार कर दूँगी' जैनेका ने उसकी सुगठित टाँगों, भविष्य में अच्छा खिलाड़ी बननेवाले के अभी तक अर्धपक्व शरीर को, सिर के नीचे रखी हुई बाँहों के उठे हुए कठोर पुट्ठों को घूरते हुए सोचा, 'मुझे इस पर तरस क्यों आ रहा है ? क्या इसलिए कि यह इतना सुन्दर जवान है ? नहीं। मेरे मन में बहुत दिनों से इस प्रकार के विचार तक आने बन्द हो गये हैं। तो क्या इसलिए कि यह अभी तक निरा छोकरा ही है ? साल भर ही तो हुआ, मैंने जाते समय इसकी जेब में सेव रास्ते में खाने के लिए हँसी में रख दिये थे। क्यों मैंने अभी तक इससे वह बात नहीं कही है जो मैं अब हिम्मत करके कहना चाहती हूँ ? क्या इसलिए कि उसे मेरी बात का पूरी तरह यक़ीन नहीं होता ? या इसलिए कि वह मुझसे ख़फ़ा होकर चला जायगा ? किसी दूसरी के पास चला जायगा ? कभी न कभी तो हर आदमी को यह बीमारी होनी ही है...इसने मुझे पैसों से ख़रीदने की चेष्टा की है, यह मैं क्योंकर भूल सकती हूँ ? या इसने भी दूसरों की तरह अन्धेपन में ही ऐसी हरकत की है ?...'

'कोल्या !' वह धीरे से बोली, 'अपनी आँखें खोलो।'

उसने आज्ञाकारी की तरह आँखें खोल दीं और घूरकर उसकी तरफ देखा ; अपनी बाँहें उसके गले में डाल दीं और उसे अपनी तरफ खींचकर छाती पर उसे चूमना चाहा। उसने फिर स्नेह से, परन्तु दृढ़ता से उसे दूर हटा दिया।

'नहीं, ठहरो, अभी ज़रा और ठहरो। मेरी बात सुनो। क्षण भर और रुको ! मेरे प्यारे छोकरे, कहो तो तुम यहाँ हम लोगों के पास क्यों आते हो ?'

कोल्या धीरे-धीरे भर्राई हुई आवाज से हँसता हुआ बोला :

'कैसी पागल हो तुम ! यहाँ लोग क्यों आते हैं ? मैं क्या आदमी नहीं हूँ ? मुझे लगता है कि मैं भी अब उस उम्र पर पहुँच चुका हूँ जब हर मर्द को स्त्री की ज़रूरत होती है ; इसलिए कि मैं और दूसरी किस्म की गन्दगियों में नहीं पड़ना चाहता हूँ !'

'ज़रूरत ? सिर्फ इसलिए कि तुम्हें स्त्री की ज़रूरत है ? जैसी कि संडास की ज़रूरत होती है ? क्यों ?'

'नहीं, ऐसा क्यों ?' कोल्या ने हँसते हुए उत्तर दिया, 'मैंने तो तुम्हें पहले दिन ही पसन्द किया था...पहले दिन से ही मेरा दिल तुमपर है...तुम पर मेरा एक हद तक प्रेम है...कम से कम मैं किसी दूसरी के पास नहीं गया हूँ ।'

'अच्छा, अच्छा ! तो पहिले दिन तुम जब यहाँ आये तोतुम्हें एक स्त्री की ज़रूरत थी ?'

'नहीं, शायद ऐसा नहीं था ; मगर फिर भी कुछ-कुछ मुझे ज़रूरत तो थी ही...मेरे दोस्तों ने बातें कर-करके मेरे मन में स्त्री के लिए इच्छा उत्पन्न करदी थी...बहुत से मुझसे पहले यहाँ आ चुके थे...अतएव मैं भी...'

'पहली बार जब तुम यहाँ आये तो तुम्हें शर्म नहीं लगी ?'

कोल्या सिटपिटाया । ये प्रश्न उसे अच्छे नहीं लग रहे थे । उसे लगा कि यह बिस्तर की वह व्यर्थ गल्प नहीं है, जिसका उसको अपने थोड़े ही अनुभव से काफ़ी पता था, बल्कि कोई दूसरी ही, गम्भीर बात है ।

'शर्म...शर्म न कहकर यह कहा जा सकता है कि बुरा लग रहा था—परेशानी हो रही थी...जिसको दूर करने के लिए मैंने शराब पीली थी ।'

जेनी फिर उसकी बग़ल में लेट गई; सिर उठाकर, कुहनी पर झुका कर, बार-बार उसने उसकी तरफ़ ध्यान से घूरा । अन्त में इतनी धीमी आवाज़ से, जिसको कोल्या भी मुश्किल से सुन सका, उसने पूछा :

'कहो तो, मेरे प्यारे, एक बात और बता दो! यहाँ आकर जो तुम रुपया देते हो, ये दो गन्दे रुपये, उसका मतलब भी तुम समझते हो? रुपये से प्रेम खरीदना—मुझे इसलिए रुपये देना कि मैं तुम्हें प्रेम करूँ, तुम्हें चूमूँ, तुम्हें अपने हृदय से लगाऊँ, और तुम्हें अपना शरीर दूँ—इस पर तुम्हें लज्जा नहीं आई? कभी यह सोच-कर तुम्हारा सिर शर्म से नहीं झुका?'

'हे भगवान्! ऐसे प्रश्नों से तुम्हारा क्या मतलब है! दूसरे सभी तो रुपया देकर प्रेम लेते हैं! मैं तुम्हें रुपया न देता तो कोई और देता...तुम्हारे लिए तो वही बात होती।'

'क्या तुमने किसी से सचमुच प्रेम किया है, कोल्या? सच-सच, बतलाना! अधिक नहीं तो कम, से कम मन ही मन, थोड़ा-थोड़ा किसी से सचमुच प्रेम किया है?...किसी को फूल ले जाकर दिये हैं...किसी के हाथ में हाथ डालकर चाँदनी में घूमे हो? कभी ऐसा हुआ है?'

'हाँ' कोल्या ने गम्भीरता से मोटी आवाज़ में कहा, 'जवानी में किससे मूर्खता नहीं होती! सभी जानते हैं कि...'

'किसी नाते-रिश्ते की छोकरी से? किसी पढ़ी-लिखी छोकरी से? किसी स्कूल की विद्यार्थिनी से?...कभी किसी से प्रेम तो तुमने किया ही होगा।'

'हाँ, हाँ, क्यों नहीं! सभी करते हैं।'

'अच्छा, तो वह तुमसे यह कहती कि मुझसे तुम्हारे जो मनमें आये सो करो—सिर्फ दो रुपये मुझे दे दो तो तुम उसे छूते? तुम उसे फौरन ही छोड़कर भाग नहीं गये होते? क्यों? सच कहो। तुम ने उससे क्या कहा होता?'

'मेरी समझ में तुम्हारी बातें नहीं आईं, जैनेच्का!' ग्लेडीशेव ने एकाएक क्रोध में भरकर कहा, 'इतना तुम बन क्यों रही हो? यह क्या

नाहक खेल रही हो ! ईश्वर की सौगन्ध, मैं अभी उठकर, कपड़े पहिन-
कर यहाँ से चल दूँगा।'

'ठहरो ज़रा, ज़रा ठहरो कोल्या ! एक और, सिर्फ एक ही और,
आख़िरी प्रश्न मैं तुमसे करना चाहती हूँ।'

'हे राम !' कोल्या नाराजगी से गुर्राया।

'क्या यह तुम कभी नहीं सोचते...मान लो क्षणभर के लिए...
कि तुम्हारा कुटुम्ब एकाएक गरीब हो जाता है...तबाह हो जाता
है। तुम्हें अपनी रोटी कमाने के लिए कहीं क्लार्की करनी होती है, या
बढ़ईगिरी या लुहारगिरी करनी पड़ती है और तुम्हारी बहिन हमारी
तरह...हाँ. हाँ. बिल्कुल हमारी तरह ग़लत रास्ते पर पड़ जाती है,
कोई खरदिमाग़ उसे बहकाकर ख़राब कर देता है...और फिर वह एक
आदमी के पास से दूसरे के पास जाती फिरती है...तब तुम्हें कैसा
लगेगा ?'

'फूँ !...ऐसा कभी नहीं हो सकता...' कोल्या ने उसकी बात काट
कर कहा, 'ख़ैर, काफ़ी हो चुका, मैं जाता हूँ !'

'जाओ, मगर एक मिहरबानी मुझ पर करते जाओ ! मेरे पास
दस रुपये हैं—वह, वहाँ आईने के पास, उस चाकलेट के खाली
डिब्बे में रखे हैं—उन्हें अपने लिए लेते जाओ। मुझे उनकी जरूरत
नहीं है। उनसे कछुये की खाल की बनी एक पाऊडर की सुनहरी
डिबिया अपनी मा के लिए और तुम्हारे कोई नन्ही-सी बहिन हो तो
उसके लिए एक सुनहरी गुड़िया खरीदकर लेते जाना और उन्हें
लेजाकर देना और कहना कि, 'एक छिनाल ने जो अब मर चुकी
है अपनी याददाश्त में तुम्हें ये चीजें भेजी थीं'। जाओ मेरे छोटे
लड़के, जाओ !' कोल्या गुस्से से मुँह सिकोड़ता हुआ, बिस्तर से उछल
कर और पलङ्ग के पास पड़ी हुई छोटी चटाई पर नङ्गा, सुडौल और
जवानी से चमकता हुआ शरीर ले जाकर खड़ा होगया।

'कोल्या !' जैनेका ने उसे धीरे से, स्नेह और हठ पूर्वक बुलाया 'कोलेच्का !'

कोल्या ने मुड़कर उसकी ओर देखा और इस प्रकार सांस खींची मानो वह दङ्ग रह गया हो ; आजतक अपने जीवन में उसने कभी किसी चित्र तक में, ऐसा स्नेह, विडम्बना और स्त्री की शान्त फिड़की का सुन्दर भाव नहीं देखा था। वह पलङ्ग की पट्टी पर बैठ गया और उमङ्ग से उसकी नङ्गी बाँहों में अपनी बाँहें डालकर जैनेका को अपने सीने से लगा लिया।

'हम लोगों को आपस में झगड़ना नहीं चाहिये जैनका' उसने प्रेम में डूबकर कहा।

जैनेका उससे लिपट गई और अपनी बाँहें उसकी गर्दन में डाल-कर उसकी छाती में उसने अपना सिर गड़ा दिया। कुछ क्षणों तक दोनों चुपचाप इसी दशा में रहे।

'कोल्या,' जेनी ने सुस्ती से पूछा, 'मगर तुम्हें कभी बीमारी का डर नहीं हुआ ?'

कोल्या काँप गया। एक ठण्डा, भयङ्कर भय उसकी आत्मा में दौड़ता हुआ घुसा जिससे वह काँप गया। कुछ देर तक उसके मुँह से कोई उत्तर नहीं निकला। फिर वह बोला :

'ज़रूर, ज़रूर, मैं बहुत डरता हूँ...उसके विचार से ही मैं काँप जाता हूँ...ईश्वर मुझे बचाये ! मगर मैं तुम्हारे सिवाय और किसी के पास नहीं जाता हूँ ! और तुम कोई ऐसी बात होती तो मुझसे ज़रूर कह देती।'

'हाँ, मैं तुमसे कह देती,' जेनी ने सोचते हुए कहा और फिर फौरन ही, समझकर, मानो उसने अपने शब्दों को तौलकर उनका वज़न जान लिया हो, वह बोली 'हाँ, ज़रूर, ज़रूर, मैं तुमसे कह देती ! मगर तुमने कभी सुना है आतशक क्या चीज़ होती है ?'

'हाँ, हाँ, मैंने सुना है...बड़ी ख़राब बीमारी होती है...उसमें मनुष्य की नाक गिर जाती है...'

'नहीं, कोल्या, सिर्फ़ नाक ही नहीं ! सारा शरीर सड़ने लगता है ; हड्डियाँ, रगें, दिमाग़ सभी ख़राब हो जाते हैं...डाक्टर कहते हैं कि इस बीमारी का इलाज हो सकता है...मगर वे झूठ कहते हैं ! इसका इलाज नहीं है ! इसके बीमारों को दस-दस, बीस-बीस, तीस-तीस बरस तक सड़ना पड़ता है । फालिज मार जाता है जिससे चेहरे का दाहिना हिस्सा, दाहिना हाथ, दाहिना पाँव निकम्मे हो जाते हैं—आदमी जीवित नहीं रहता बल्कि उसका सिर्फ एक छोटा-सा हिस्सा ही जीवित रह जाता है ! आधा आदमी—आधी लाश ! अधिकतर इसके मरीज़ पागल हो जाते हैं और इस रोग से पीड़ित हर आदमी समझता है...अच्छी तरह समझता है कि वह खाने-पीने, बोसा देने, यहाँ तक कि साँस लेने से भी अपने निकटवर्ती प्रियजनों—बहिन, स्त्री, लड़कों को भी यह रोग दे सकता है...इस रोग से पीड़ित आदमियों के बच्चे भयङ्कर पशुओं की तरह, टेटुयें निकले, क्षयी और मूर्ख होते हैं । अक्सर वे गर्भ में ही नष्ट हो जाते हैं। इसका नाम आतशक है, कोल्या । अतएव...' जेनेका ने एकाएक सतर होकर, कोल्या की नङ्गी बाहें ज़ोर से दबाकर पकड़ लीं और उसकी तरफ़ इस तरह घूरती हुई जिससे कि उसकी आँखों के धमकते हुए विचित्र तेज और दुःख से कोल्या की आँखें चौंधिया उठीं, बोली :

'अतएव अब मैं तुम्हें यह बता देना चाहती हूँ कि मैं एक मास से इस घोर रोग से पीड़ित हूँ और इसीलिए मैंने तुम्हें अपना मुँह नहीं चूमने दिया...'

'तुम मज़ाक करती हो !...तुम मुझे जान-बूझकर तङ्ग कर रही हो जेनी !' ग्लेडीशेव ने गुस्से और परेशानी से सिटपिटाकर कहा ।

'मज़ाक करती हूँ ?...आओ, इधर आओ !'

उसने कोल्या को अपनी जगह से उठकर एक दियासलाई जलाने पर मजबूर किया और बोली :

'देखो, अब जो कुछ मैं तुम्हें दिखाऊँगी ग़ौर से देखना...'

यह कहकर उसने अपना मुँह खोला और उसके अन्दर दियासलाई इस तरह दिखाई कि उसका हलक़ अच्छी तरह दिखाई देने लगा। कोल्या ने देखा और काँपकर पीछे हट गया।

'देखे तुमने मेरे हलक़ में यह सफेद-सफेद दाग़ ? यही है आतशक, कोल्या ! समझते हो ? यही है आतशक का भयङ्कर रूप। अब अपने कपड़े पहिनो और ईश्वर को धन्यवाद दो।'

कोल्या चुपचाप, जैनेका की तरफ़ घूमकर न देखते हुए, जल्दी-जल्दी अपने कपड़े पहिनने लगा—इतनी जल्दी कि टाँग पतलून में डालता था तो बाहर जाती थी। उसके हाथ काँप रहे थे और दाँत बज रहे थे। जेनेका सिर झुकाये हुए धीरे-धीरे कह रही थी :

'सुनो कोल्या, तुम्हारा भाग्य अच्छा है कि तुम्हें एक ईमानदार औरत मिल गई—कोई दूसरी होती तुम्हें हरगिज़ यों न छोड़ती ! समझते हो ? हम लोग, जिनकी इज्ज़त खराब करके तुम लोग अपने घरों से निकाल देते हो और फिर हमारे पास आकर हमें दो रुपये देकर हमारा शरीर लेते हो ! हमें समझते हो ?' उसने एकाएक अपना सिर उठाया, 'हम लोग हमेशा तुम्हें हृदय से घृणा करते हैं और कभी तुम लोगों पर दया करने का विचार भी नहीं करते !'

कोल्या अपने कपड़े छोड़कर, पलंग पर जेनेका के पास बैठ गया और अपना मुँह दोनो हाथों से ढककर, बच्चों की भाँति रोने लगा।

'हे भगवान ! हे भगवान !' वह बड़बड़ाया, 'सचमुच यह कितना कमीनापन है !...हमारे घर भी ऐसा हुआ था ; हमारे यहाँ नियूशा नाम की एक छोकरी नौकर थी...उसको हम लोग श्रीमती भी कहते

थे...सुन्दर छोकरी थी...मेरे भाई से उसका सम्बन्ध हुआ...मेरा बड़ा भाई जो कि फौज में अफसर था...उसके चले जाने के बाद उसके गर्भ निकला...जिस पर मा ने उसे घर से निकाल दिया...दूध की मक्खी की तरह उसे घर से निकाल दिया।...अब वह कहाँ है? और पिताजी? पिताजी ने भी एक नौकरानी...'

आधी नङ्गी जेनेका, पतित और नास्तिक जेनेका, जो गालियाँ बकती और झगड़ा करती थी, बिस्तर से उठकर, कोल्या के आगे खड़ी हो गई और आकाश की तरफ़ हाथ उठाकर, भगवान के नाम पर उसे आशीर्वाद देती हुई, कृतज्ञतापूर्ण अतिप्रेम से बोली :

'भगवान तुम्हारी रक्षा करें, मेरे भले छोकरे!'

यह कहकर उसने दौड़कर कमरे का द्वार खोल दिया और पुकारा, 'खालाजान!'

खाला के दौड़कर आने पर जेनेका ने उससे कहा, 'मेरी प्यारी खालाजान, देखो, टमारा या नन्ही मनका में से जो कोई खाली हो उसे फौरन यहाँ भेज दो।'

कोल्या पीछे से कुछ बड़बड़ाया, मगर जेनेका ने जान-बूझकर उसे नहीं सुना।

'जल्दी ही भेज दो, प्यारी खाला, जितना जल्द हो सके फौरन भेज दो, समझी :

'अभी लो, अभी भेजती हूँ।'

'क्यों, यह तुम क्या कर रही हो, जेनी?' ग्लेडीशेव ने दुःखी आवाज़ से कहा, 'क्यों बुला रही हो? क्या उससे यह कहना चाहती हो?'

'ठहरो ज़रा, तुम्हें क्या मतलब मैं क्या करना चाहती हूँ. ठहरो... मैं कोई ऐसी बात नहीं करूँगी जिससे तुम्हें कठिनाई हो।'

क्षणभर में मनका, स्कूल की लड़कियों की-सी, सादा कथ्थई पोशाक पहिने सामने आ खड़ी हुई और बोली :

'क्यों जेनी, मुझे क्यों बुलाया है ? क्या तुम लोगों का झगड़ा हो गया है ?'

'नहीं, झगड़ा नहीं हुआ है मनेच्का ; मगर मेरा सिर बहुत दुख रहा है', जेनेका ने शान्ति-पूर्वक उत्तर दिया, 'अतएव कोल्या को मैं खुश नहीं कर पाती । तुम्हीं इन्हें आज मेरी बजाय खुश करो, मनेच्का !'

'बस-बस, जेनी, चुप हो जाओ, मेरी प्यारी !' कोल्या ने हृदय से दुःखी आवाज़ में कहा, 'मैं समझता हूँ, मैं समझता हूँ...इस सबकी ज़रूरत नहीं है...मेरा इस तरह अपमान मत करो !'

'मामला क्या है ?...मेरी समझ में नहीं आता', हँसोड़ी मनका ने दोनों हाथ फैलाकर कहा, तुम मुझ जैसी एक ग़रीब छोकरी को भी कुछ खिलाओ-पिलाओगे ?'

'अच्छा, जाओ, जाओ !' जेनेका ने उसको नम्रता से हटाते हुए कहा, 'मैं अभी आती हूँ, मनका। मैंने यों ही मज़ाक किया था ।'

कपड़े पहिनने के बाद जेनी और कोल्या, दोनो कमरे के द्वार पर खड़े-खड़े एक दूसरे को चुपचाप, दुःख से देर तक देखते रहे। कोल्या की समझ में तो न आया परन्तु उसे ऐसा लगा कि उसकी आत्मा में इस समय वह क्रान्ति हो रही थी जिससे जीवन की काया पलट हो जाती है।

फिर उसने जेनी का हाथ स्नेह से दबाकर कहा :

'माफ़ करो...जेनी, मुझे माफ़ कर दो ! क्यों मुझे माफ़ कर दोगी न ?...'

'हाँ, हाँ, ज़रूर ! मेरे प्यारे, ज़रूर, ज़रूर !...'

जेनी ने बड़े स्नेह से, मा की तरह प्यार से उसका सिर सहलाया और उसको धीरे से कमरे के बाहर कर दिया :

'अब तुम कहाँ जाओगे ?' आधा द्वार खोलकर फिर उसने कोल्या से जाते समय पूछा ।

'मैं अपने दोस्त को पहुँचाकर सीधा अपने घर जाऊँगा ।'

'जैसी तुम्हारी मर्ज़ी !...ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे, मेरे प्यारे !'

'मुझे माफ़ करना !...मुझे माफ़ करना !...' कोल्या ने फिर उसकी तरफ़ एक बार हाथ फैलाकर कहा।

'मुझे भी माफ़ कर देना...क्योंकि अब हम लोग फिर कभी एक दूसरे से न मिलेंगे !'

जेनी ने द्वार बन्द कर लिया और वह कमरे में अकेली रह गई।

× × ×

रास्ते में ग्लेडीशेव ठिठका क्योंकि उसे यह नहीं मालूम था कि प्रेटोव टमारा के साथ किस कमरे में है। ज़ोसिया से पूछने पर उसने उसको कमरा बता दिया और डरी हुई और परेशान उसके पास से झपटती हुई, निकल गई।

'मेरे पास तुमसे उलझने को वक्त नहीं है !' उसने भागते हुए गुर्राकर कहा, 'बायें हाथवाले तीसरे कमरे में है।'

कोल्या ने जाकर कमरे का द्वार खटखटाया। अन्दर से कुछ घुस-पुस घुसपुस और चलने फिरने की आवाज आ रही थी। उसने फिर द्वार खटखटाया।

'कर्कोवियस, द्वार खोलो ! मैं हूँ—सोलीटरोव।'

सैनिक विद्यार्थी जब इस क़िस्म के कामों पर चलते थे तो आपस में बातचीत के लिए एक दूसरे के मसनूई नाम रख लेते थे। यह वे इसलिए नहीं करते थे कि इस तरह वे अपने अधिकारियों और बड़ों की निगरानी से बच सकते थे अथवा उनके खानदान का कोई परिचित चकले में मिल जाय तो उसे धोखा दे सकते थे, फ़र्ज़ी नाम रखना उनके लिए एक प्रकार का खेल सा था जो जासूसी उपन्यासों से उन्होंने सीखा था।

'अन्दर मत आना !' टमारा की आवाज़ अन्दर से आई, 'अन्दर मत आना। हम लोग अभी खाली नहीं हैं।'

परन्तु पेट्रोव की मोटी आवाज़ ने फौरन ही उसकी बात काट दी, 'नहीं ! झूठ बोलती है । अन्दर आओ । कुछ नहीं है ।'

कोल्या ने द्वार खोला ।

पेट्रोव अपने कपड़े पहिने एक कुर्सी में, शर्म से लाल, दुखी, बच्चों की तरह मुँह लटकाये, आँखें नीची किये बैठा था ।

'वाह, वाह, कैसे अच्छे दोस्त आप अपने साथ लाये हैं !' टमारा ने मज़ाक उड़ाते हुए क्रोध से कहा, 'मैंने समझा था यह भी मर्द होगा, मगर यह तो बिल्कुल छोकरी है । इसको अपने सतीत्व को खो देने का बड़ा डर लगता है । क्या आदमी है ! यह लो अपने दो रुपये भी वापिस लिये जाओ !' उसने एकाएक पेट्रोव से चिल्लाकर कहा, 'इन्हें किसी ग़रीब नौकरानी या भिखारिन को देना ! या इनसे अपने लिए दस्ताने या मिठाई ख़रीद लेना !'

'मगर मुझे धिक्कारती क्यों हो ?' पेट्रोव आँखें नीची किये हुए ही बड़बड़ाया, 'मैं तो तुम्हें धिक्कार नहीं रहा हूँ । क्यों ? फिर तुमने मुझे धिक्कारना शुरू कर दिया ? मुझे अपनी इच्छानुसार, जैसा चाहूँ वैसा करने का अधिकार है । मैंने तुम्हारा वक्त लिया है उसकी फीस तुम अपनी ले लो, मगर जबरदस्ती करना मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है और ग्लेडीशेव—मेरा मतलब है सोलीटरोव—तुमने मुझे यहाँ लाकर अच्छा नहीं किया । मैं समझता था कि यह अच्छी छोकरी होगी—परन्तु यह तो मुझे लगातार चूमती और भगवान जाने क्या-क्या करती रही...'

टमारा क्रोधित होते हुए भी हँस पड़ी ।

'अरे मूर्ख छोकरे ! अरे निरे मूर्ख छोकरे ! ख़ैर, नाराज़ मत हो—मैं तुम्हारा रुपया रखे लेती हूँ ; मगर देखना, आज शाम को ही देखना अपनी हरकत पर अफ़सोस होगा । अच्छा, नाराज़ मत हो, नाराज़ मत हो, मुझसे रूठो मत । आओ हम तुम दोनों दोस्त हैं, हाथ मिलाओ ।'

'चलो ककोंवियस, चलें,' ग्लेडीशेव ने कहा :

'अच्छा टमारा, बन्दगी !'

टमारा ने रुपये वेश्याओं की आदत के अनुसार लेकर अपने मोजों में डाल लिये और उठकर दोनों छोकरों को द्वार तक पहुँचाने गयी।

इस बार भी मकान के रास्ते में से गुज़रते हुए, ग्लेडीशेव को बैठक की विचित्र शान्ति और उसमें होनेवाली जल्दी जल्दी घुसपुस पर बड़ा आश्चर्य होने लगा। धीमे-धीमे आपस में घुसपुस करते हुए मकान की बैठक में लोग इधर से उधर जा रहे थे।

बैठक में, उसी चित्र के सामने, जहाँ कुछ देर पहले ये लोग बैठे थे, अन्ना के घर के सब लोग और कुछ बाहर के आदमी इकट्ठे थे। वे सब एक जगह पर इकट्ठे खड़े, नीचे की तरफ़ झुककर कुछ देख रहे थे। कोल्या को यह जानने की इच्छा हुई कि क्या मामला है। अतएव वह बैठक में गया और कुहनियों से बढ़ने के लिए जगह करता हुआ लोगों के सिरों के बीच में से झुककर देखा तो फ़र्श पर एक करवट पर अस्वाभाविक ढङ्ग से रोलीपोली को पड़ा पाया। उसका चेहरा नीला बल्कि बिल्कुल काला हो रहा था। वह बिल्कुल हिलडुल नहीं रहा था और विचित्र ढङ्ग से सिकुड़ा और सिमटा हुआ, टाँगे मोड़े पड़ा था। एक हाथ उसका छाती के नीचे दबा था और दूसरा फैला हुआ था।

'क्या हुआ इसको ?' ग्लेडीशेव ने घबराकर पूछा। नियूरा ने उससे, घबराई हुई आवाज में, घुसपुस करना शुरू किया।

'रोलीपोली बाजार से लौटकर आया...मनका को मिठाई दी और हम लोगों को आरमीनियन पहेलियां सुनाने लगा...'नीला-नीला रंग, कमरे में लटकती है और सीटी बजाती है'...हम उसकी पहेली को नहीं सुलझा सके' और वह बोला : 'हैरिङ्ग मछली'...एकाएक उसने हँसना

शुरू किया और उसको खाँसी का दौरा आ गया। वह एक तरफ़ को झुका और धड़ाम से ज़मीन पर गिर पड़ा और चुप हो गया... पुलिस बुलाई गई है...हे भगवान, अब क्या होगा ?...मुझे लाशों से बड़ा भय लगता है !'

'ठहरो !' ग्लेडीशेव ने उसे चुप करते हुए कहा, 'इसके माथे पर हाथ रखकर देखना चाहिये। मुमकिन है उसमें अभी जान हो...'

मगर जैसे ही ग्लेडीशेव ने आगे बढ़ने की कोशिश की वैसे ही सिमियन की नश्तर की तरह तेज़ उँगलियों ने उसकी कुहनियाँ पकड़-कर उसे पीछे को घसीट लिया।

'कुछ नहीं है, उसमें देखने के लिए अब कुछ नहीं रहा है' सख्ती से हुक्म देते हुए कहा, 'जाओ, फौरन यहाँ से। अब अपना रास्ता नापो नौजवानो ! अब यहाँ तुम्हारा ठहरना ठीक नहीं है। पुलिस आती होगी...तुमको गवाह बना लेगी...बस फिर तुम्हें अपने सैनिक कालिज से भी निकलना पड़ेगा ! खैर इसी में है कि यहाँ से फौरन सिर पर पाँव रखकर भाग जाओ !'

वह उनके साथ घर के द्वार तक गया और उनके ओवर कोट उन्हें थमाकर और भी अधिक सख्ती से बोला :

'भागो यहाँ से...फौरन भाग जाओ...जितना जल्द हो सके ! जिससे तुम्हारी गन्ध भी यहाँ न रह जाय और दूसरी बार तुम लोग फिर यहाँ आये तो मैं तुम्हें अन्दर घुसने भी न दूँगा। बड़े अक़्लमन्द छोकरे हो न क्यों ? तुम्हीं ने उसे विस्की पीने के लिए रुपया दिया था जिसके पीते ही बूढ़ा अपनी ज़िन्दगी से भी हाथ धोकर चल बसा।'

'ज्यादा होशियार मत बन !' ग्लेडीशेव ने उसे डाँटकर कहा।

'क्या कहा होशियार मत बन ?...' सिमियन ने क्रोध से चिल्लाकर पूछा और उसकी बिना भौंहों की काली आँखें ऐसी भयंकर हो गईं कि दोनो छोकरे डरे।

'ऐसा झापड़ मुँह पर जमाऊँगा कि नानी की याद आ जायगी! भागो यहाँ से, वरना अभी ठीक करता हूँ!'

इसी समय ज़ीने में होकर दो आदमी, टेढी टोपियाँ लगाये; एक नीला और एक लाल लम्बा-लम्बा कुरता पहिने जिनके ऊपर वे जाकेट पहिने थे जिनके बटन खुले थे, ऊपर आये। स्पष्ट था कि वे दोनों सिमियन के हमपेशा साथी थे जो उसकी मदद के लिए आये थे।

'क्या है?' उनमें से एक ने नीचे से ही चिल्लाकर हँसते हुए पूछा, 'रोलीपोली हो गया टें?'

'हाँ ऐसा ही लगता है।' सिमियन ने जवाब में कहा 'फ़ौरन ही उसे उठाकर बाहर फेंकना है, वरना उसका भूत घर में कहीं बस न जाय। बाहर पड़ा मिलेगा तो लोग समझेंगे कि ज़्यादा पी जाने से सड़क पर ही टें हो गया।'

'मगर मारा तुमने तो उसे नहीं था?...क्यों 'तुमने तो...उसे नहीं मारा?'

'क्या मूर्खता की बातें करते हो! उसे मारने की वजह ही क्या हो सकती थी? बिल्कुल सीधा-सादा आदमी था बेचारा, बिल्कुल मेमने की तरह! समय आ गया!'

'और कोई जगह भी मरने के लिए नहीं मिली! इससे भी और कोई खराब जगह उसकी समझ में नहीं आई?' लाल कुरतेवाले ने कहा।

'सच कहते हो यार!' दूसरे ने उसका समर्थन करते हुए कहा, 'दाँत निपोर-निपोरकर जिया और यहाँ आकर मरा! ख़ैर, चलो अपना काम पूरा करें।'

दोनों छोकरे जल्दी-जल्दी वहाँ से भागे। अँधेरे में जाते हुए उन्हें ज़मीन पर सिकुड़ा हुआ पड़ा रोली पोली सामने दीखने लगा, जिससे उनके जवान हृदय जिन्हें मृत्यु ख़ासतौर पर बड़ी भयङ्कर लगती है

और खासकर अँधेरी रात में उसका ख्याल और भी भयङ्कर हो जाता है, धड़कने लगे।

ग्लेडीशेव! बड़े हो जाने पर आज की रात को याद रखना! और इसका जिक्र अपने लड़कों से अवश्य करना! करोगे?

चौथा अध्याय

सुबह से ही मेंह की नन्ही-नन्ही बौछारें बरस रही थीं—धूल की तरह लगातार इधर-उधर उड़ती हुई वे जी उकताने लगी थीं। प्लेटोनॉव बन्दरगाह पर नावों में से तरबूज उतार रहा था। उसने गरमियों में मिल में काम करने का प्रयत्न किया था, परन्तु वहाँ उसके भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया था, क्योंकि एक हफ्ता काम करने के बाद ही उसका मिल के मिस्त्री से, जो कामगारों से बड़ी क्रूरता का व्यवहार करता था, झगड़ा हो गया था ; अतएव एक मास तक सर्जी आइवानोविश यों ही इधर-उधर भटकता रहा और अखबारों के लिए गलीकूचों के वाकयातों और कचहरियों के मुक़दमों और मज़ाकिया दृश्यों पर लेख लिख-लिखकर अपना गुजारा किसी तरह चलाता रहा ; मगर यह काम उसे पसन्द नहीं था। उसे नये-नये उत्साह के और खुली हवा में मेहनत के ऐसे काम पसन्द थे जिनमें आरामतलबी के लिए ज़रा भी जगह नहीं होती। उसे आज़ादी की आवारागर्दी पसन्द थी जिसमें आदमी को अपने इर्द-गिर्द की कोई फ़िक्र नहीं रहती और यह भी पता नहीं रहता कि कल कैसे रोटी मिलेगी या क्या होगा। अतएव

नोपर नदी में नीचे की तरफ़ से तरबूज़ों से लदी नावें आनी शुरू हुईं तो वह बड़ी ख़ुशी से मज़दूरों के एक गिरोह में, जिन्हें वह पिछले साल से जानता था और जो उसके हँसोड़े स्वभाव, भ्रातृ-भावना और हिसाब रहने की योग्यता के कारण उसे पसन्द करते थे, शामिल हो गया था।

नावों से तरबूज उतारने का काम मज़दूरों को मिलजूलकर और होशियारी से करना होता था। एक-एक नाव पर पाँच-पाँच मज़दूरों के चार-चार गिरोह एक साथ काम करते थे। एक मज़दूर नाव के ऊपर चढ़कर नाव के नीचे खड़े दूसरे मज़दूर को तरबूज फेंकता था और दूसरा मज़दूर तीसरे को जो घाट पर खड़ा होता था, और तीसरा चौथे को और चौथा पाँचवें को, जो घोड़ागाड़ी पर चढ़कर तरबूज लादता था। काले सफ़ेद और धारीदार तरबूज़ चमकते हुए हाथोंहाथ कतार में दौड़ते हुए जाते थे। यह काम सुथरा, तबियत को खुश करनेवाला और जल्दी-जल्दी होता है। मज़दूरों का अच्छा गिरोह मिल जाने पर जिस तरह वे तरबूज़ों को हाथोंहाथ फुरती से उछालते हुए, सरकस की तरह जल्दी-जल्दी और आसानी से गाड़ियों में भरते हैं, उसे देख-देखकर तबियत बड़ी खुश होती है। यह काम सिर्फ उन्हीं मज़दूरों को मुश्किल लगता है जो बिल्कुल ही नये होते हैं और जिनके हाथ ऐसे काम का अनुभव न होने के कारण, सधे न होने से, संतुलित रूप में तरबूज फेंक नहीं पाते। तरबूज़ों को हाथ में पकड़ लेना इतना कठिन नहीं होता जितना उनको पकड़ लेने के बाद फिर सहज रूप से फेंकना होता है।

प्लेटोनॉव को अपना पिछले साल का अनुभव अच्छी तरह याद था। तीन-चार बार वह तरबूज़ पकड़कर हाँफता हुआ, जब बीच में रुक गया था तो काम धीमा हो गया था और उसके फेंके हुए दो तरबूज़ दूसरे मज़दूर के हाथों तक न पहुँचकर, रास्ते में ही गिरकर फच से ज़मीन पर कचर गये थे और तीसरा तरबूज़ उसके घबरा जाने

से हाथ से गिरकर फट गया था जिससे उस पर चारों ओर से बुरी-बुरी गालियों की बौछार होने लगी थी। पहले दिन तो उन्होंने उसके फूहड़-पन पर दया दिखाई, परन्तु दूसरे दिन उन्होंने हर टूट जानेवाले तरबूज की पाँच आना क़ीमत उसकी मज़दूरी के हिस्से से काट ली; इस पर भी जब वह न सुधरा तो उन्होंने उसे अपने गिरोह में से निकाल देने की धमकी दी, जिससे प्लेटोनाव को इतना क्रोध आया कि वह बिल्कुल लापरवाही से तरबूज उठा-उठाकर फेंकने लगा; मगर उसको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसके ऐसा करते ही तरबूज अपने निशाने पर आसानी से पहुँचने लगे और उसके रग-पुठे, नज़र और साँस ऐसे नियमित हो गये कि उसे बड़ा आनन्द मिलाने लगा। तब उसकी समझ में आया कि तरबूजों के गिरकर टूट जाने की चिन्ता न करने से ही तरबूज़ आसानी से और बिना गिराये फेंके जा सकते हैं। फिर जब उसको यह काम अच्छी तरह आ गया तब तो उसके लिए यह बहुत दिनों तक एक प्रकार का अच्छा खेल-सा ही बन गया था; मगर बाद में फिर खेल नहीं रहा और वह पाँच आदमियों और तरबूजों की जंज़ीर की यांत्रिकता की तरह काम करने लगा।

इस समय नाव पर चढ़े हुए मज़दूर के पास वह दूसरे नम्बर पर खड़ा था। नीचे को झुक-झुककर, दोनो हाथों से, ताल के साथ, बिना देखे, ठण्डे और भारी तरबूज़ों को पकड़कर, दाहिनी तरफ़ को झुलाता हुआ, वह बिना देखे ही अथवा सिर्फ कनखियों से देखकर, उन्हें उछाल-उछालकर फेंक रहा था और फिर फौरन ही दूसरा तरबूज पकड़ने के लिए झुक जाता था। तरबूजों के हाथों पर पड़ने की थप-थप थप-थप आवाज़ उसके कानों में आ रही थी और वह झुकते ही, फाँय-फाँय साँस भरता और निगलता हुआ, फिर तरबूज पकड़ता और झुलाकर उछाल देता था।

इस काम में अच्छे दाम मिल रहे थे। उसकी टोली में चालीस मज़दूर थे, जिन्होंने तरबूजों की फ़सल अच्छी होने और बहुत-सी नावें आने से दिन भर की मज़दूरी के बजाय ठेके पर, एक गाड़ी तरबूजों से लाद देने की मजदूरी तय कर ली थी। ज़ेवोरोटनी ने जो शरीर से हृष्ट पुष्ट और बलिष्ठ था और इन चालीस मज़दूरों का चौधरी था, बड़ी चालाकी से नावों के मालिक को, जो शायद नया और अनुभवहीन था, समझा-बुझाकर ठेके पर मजदूरी तय कर ली थी। बाद में उसको अपनी गलती समझ में आई और उसने मज़दूरी बदलनी चाही, परन्तु नावों के अनुभवी मालिकों ने उसे ऐसा न करने की सलाह देते हुए चेतावनी दी, 'खबरदार, ऐसा अब हरगिज़ न करना वरना ये मज़दूर तुम्हें मार डालेंगे।' अस्तु, सौभाग्य के इस अच्छे झोंके के कारण हर-एक मज़दूर चार रुपये तक रोज मज़दूरी पा रहा था। हरएक मज़दूर बड़ी मेहनत और उत्साह से काम कर रहा था। कोई माप-दंड लगाकर नापना सम्भव होता तो मालूम हो जाता कि हरएक की ताक़त कितनी गुना बढ़ गई थी।

फिर भी चौधरी ज़ेवोरोटनी को सन्तोष नहीं था। वह छोकरों से और भी जल्दी-जल्दी काम लेने के लिए बराबर चिल्लाता रहता था। उसे अपने पेशे में इतना होशियार होने पर अभिमान हो रहा था और वह हर मजदूर को कम से कम पाँच रुपया रोज़ दिलवा देने की फ़िक्र में था। अस्तु खुशी से, जल्दी-जल्दी उछलते हुए, बन्दरगाह से हरे-हरे सफेद-सफेद तरबूज, नाचते और चमकते हुए, गाड़ियों में भर रहे थे और उनके सधे हुए हाथों पर गिरने की थप-थप सुनाई दे रही थी।

नदी पर खुदाई का काम करनेवाले मशीनों के इञ्जन भों-भों-भों करके जब चिल्लाने लगे तब चौधरी ने ज़ोर से हुँकारा और आखिरी बार थप-थप करके काम बन्द हो गया।

प्लेटोनॉव ने खुशी से अपनी कमर सीधी की और फिर उसने पीछे

की तरफ़ झुकाकर अपने सूजे हुए हाथ आगे को फैला दिये। उसने बड़ी खुशी से सोचा कि उसके सारे रग-पुट्ठों में, वह दर्द जो पहले-पहल काम शुरू करने पर होने लगता है, अब नहीं होता था; परन्तु आज तक सुबह को, अपनी कोठरी में सोकर, वह जब निश्चित भोंपे की आवाज सुनकर उठता था तो अपने सारे शरीर में—गरदन, पीठ, हाथों और पाँवों में—ऐसा दर्द पाता था कि उसे लगता था कि उसका चारपाई से उठकर खड़ा हो जाना और दो-चार क़दम चल सकना भी एक करिश्मा ही होगा।

'जाओ, जाकर खाना खाओ' चौधरी ने चिल्लाकर कहा।

मजदूर नदी की तरफ़ गये और पानी के पास पहुँचकर, घुटनों पर झुक गये अथवा नावों पर पट सोकर, चुल्लुओं से पानी ले-लेकर पसीने से लथपथ अपने गरम हाथ और मुँह धोने लगे। हाथ-मुँह धोकर, नदी के किनारे घास पर, एक तरफ़ वे खाना खाने बैठे। उन्होंने अपने आगे दस पके-पके तरबूज, काली रोटी और सूखा साग खाने के लिए रखा। गैव्रिउश्का एक बोतल का अद्धा लिये, गाता हुआ, शराब की भट्टी की तरफ दौड़ा जा रहा था।

शरीर पर चीथड़े लटकाये, जिनमें से सारा शरीर दीखता था, एक छोकरा, नङ्गे पावों, इन लोगों की तरफ दौड़ता हुआ आया।

'तुममें से प्लेटोनॉव किसका नाम है?' उसने अपनी चोर की-सी नजर उन पर जल्दी से फेंकते हुए पूछा।

'मेरा नाम प्लेटोनॉव है। तुम कौन हो?'

'वहाँ देखो, उस गिरजे के पीछे. एक नौजवान छोकरी तुम्हारा इन्तज़ार कर रही है उसने यह खत तुम्हारे लिए दिया है।'

मज़दूरों के सारे गिरोह ने ज़ोर-ज़ोर से खखारना शुरू कर दिया।

'खखारते क्यों हो मूर्खो?' प्लेटोनॉव ने उन्हें शान्तिपूर्वक डाँटा और छोकरे से कहा, 'कहाँ है खत, लाओ!'

खत जेनेका का था जो उसने गोलमटोल, सीधे-सादे और बच्चों के से अक्षरों में ग़लत-सलत लिखा था :

'सरजी आइवानिश, माफ़ करो; मैं तुम्हें कुछ तक़लीफ़ देना चाहती हूँ। मुझे तुमसे कुछ बड़ी ज़रूरी बातें करनी हैं। कोई मामूली-सी बात होती तो मैं तुम्हें हरगिज़ तकलीफ़ न देती। सिर्फ़ दस मिनट के लिए मैं तुम्हें चाहती हूँ। जेनेका जिसको अन्ना के घर से तुम जानते हो।'

प्लेटोनॉव खत पढ़कर उठ खड़ा हुआ।

'मैं कुछ देर के लिए जा रहा हूँ,' उसने चौधरी से कहा 'काम शुरू होने तक मैं आ जाऊँगा।'

'चलो, तुम्हें काम मिल गया!' चौधरी ने सुस्ती से घृणापूर्वक कहा, 'ऐसे कामों के लिए रात काफ़ी नहीं है! जाओ, जाओ...मुझे क्या मतलब! मगर काम शुरू होने तक तुम अपनी जगह पर नहीं आ गये तो आज दिन भर की तुम्हारी ग़ैरहाज़िरी शुमार की जायगी। मैं किसी भी अनाड़ी आदमी को जो मिलेगा तुम्हारी जगह पर रख लूँगा और जितने तरबूज़ उसके हाथों टूटेंगे, उनके दाम तुम्हारी मज़दूरी में से जायँगे, समझे! मैं नहीं जानता था प्लेटोनॉव कि तुम भी इस तरह कुत्तों की भाँति मारे-मारे फिरते हो!...'

घाट और गिरजे के बीच में, एक छोटे से मैदान में, जिसमें सिर्फ़ दस मनहूस से पेड़ खड़े थे, जेनेका उसका इन्तज़ार कर रही थी। वह एक सादा खाकी पोशाक पहिने थी और सिर पर एक सादा-सा गोल स्ट्रा-हैट लगाये थी जिस पर एक काला फीता बँधा था।

'इतनी सादा पोशाक पहिनने पर भी' प्लेटोनॉव दूर से ही उसे देखकर सोचने लगा, 'कोई भी आदमी जो इसके पास से गुज़रेगा तीन-चार बार फिर-फिरकर अवश्य देखेगा क्योंकि वह उसको देखते ही फौरन उसे पहिचान लेगा।'

'कहो जेनेका, कैसी हो? तुमसे मिलकर बड़ी खुशी हुई' उसने

छोकरी का हाथ स्नेह से दबाकर कहा, 'मैं तुम्हारे यहाँ आने की बात कभी सोच भी नहीं सकता था !'

जेनेका चुप, सुस्त और किसी चीज़ से परेशान थी। प्लेटोनॉव ने उसे देखते ही फौरन उसके मन की स्थिति समझ ली।

'माफ़ करो, जेनेका। मुझे फौरन ही खाना खाना है' वह बोला।

'तुम भी मेरे साथ चलो। मैं खाता जाऊँगा और तुम, जो कुछ तुम्हें कहना है, कहती जाना। यहाँ से थोड़ी दूर पर ही एक सराय है। इस वक्त वहाँ बिल्कुल भीड़ नहीं होती। एक छोटा-सा कमरा भी अलग बैठने को है। उसमें बैठकर हम लोग बड़े मजे से बातचीत कर सकेंगे। चलो! तुम भी कुछ खाना पसन्द करोगी !'

'नहीं, मुझे कुछ खाने की इच्छा नहीं है' जेनेका ने भर्राई हुई आवाज़ से कहा, 'मैं तुम्हारा अधिक समय नहीं लूँगी...सिर्फ़ कुछ मिनट थोड़ी सी बातचीत करनी है। मुझे कुछ सलाह लेनी है...मगर मेरा कोई ऐसा नहीं है जिससे मैं सलाह ले सकूँ।'

'अच्छा, अच्छा...चलो ! मैं जो कुछ भी कर सकता हूँ, उसके लिए हमेशा हाज़िर हूँ। मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हूँ, जेनेका !'

जेनेका ने उसकी तरफ़ उदासी और कृतज्ञता से देखा।

'मैं जानती हूँ सरजी, इसीलिए तो मैं तुम्हारे पास आई हूँ।'

'शायद तुम्हें रुपये की जरूरत है ? कहो, शर्माओ मत। मेरे पास तो अधिक रुपया नहीं है, मगर मैं समझता हूँ कि मेरे मज़दूरों की टोली मुझ पर विश्वास करके मुझे पेशगी रुपया दे देगी।'

'नहीं, धन्यवाद...ऐसी बात नहीं है। चलो, मैं तुमसे जहाँ हम लोग चल रहे हैं, वहाँ चलकर अभी सब कहे ही जो देती हूँ।'

नीची छतवाली, धुँधली सराय में, जहाँ चोर और गिरहकट अपना बाँट बटवारा करने के लिए इकट्ठे हुआ करते थे, जिसमें शाम से

लेकर काफ़ी रात तक खूब दूकानदारी हुआ करती थी, पहुँचकर प्लेटो-नाव एक अँधेरे से कोने में जा बैठा।

'लाओ मेरे लिए उबला गोश्त, ककड़ियाँ, एक गिलास ताड़ी, और खाने के लिए रोटी' उसने पहुँचते ही दूकान के नौकर को हुक्म दिया।

नौकर ने, जो कि गन्दे चेहरे और फूली नाक का एक जवान छोकरा था और इतना गन्दा था कि लगता था कि अभी किसी नाले या दलदल में से निकलकर आया है, अपने होंठ पोंछते हुए, मोटी आवाज़ में कहा :

'रोटी कितने की लाऊँ ?'

'जितने की जी में आये, ले आओ।'

यह कहकर प्लेटोनॉव हँसा और कहने लगा 'ले आओ, जितनी ला सको ले आओ, दामों का हिसाब पीछे से हो जायगा। थोड़ी-सी शराब भी लेते आना !'

'अच्छा, कहो जेनी, तुम पर क्या मुसीबत है ?...मैं तुम्हारे चेहरे से देखता हूँ कि तुम बड़ी परेशान हो अथवा यों ही दुनिया से घबरा उठी हो.. कहो, जो कुछ कहना है, खु-कर कहो।'

जेनेका बड़ी देर तक अपने हाथों में रूमाल पकड़कर दबाती रही और अपने जूतों की तरफ़ देखती रही, मानो वह कहने के लिए दिल कड़ा कर रही हो। उसकी कहने की हिम्मत नहीं हो रही थी और बहुत प्रयत्न करने पर भी शब्द दिमाग़ में नहीं आ रहे थे। प्लेटोनॉव ने उसको दिलासा देते हुए कहा :

'घबराओ मत. मेरी प्यारी जेनी, जो कुछ भी कहना है दिल खोल-कर कहो ! तुम जानती ही हो कि मैं बिल्कुल तुम्हारे घरवालों की तरह हूँ और कभी तुम्हारा भेद किसी को नहीं बताऊँगा। शायद मैं तुम्हारी बात सुनकर तुम्हे कोई ठीक सलाह दे सकूँ। कहो, कहो, जो कुछ भी कहना है फौरन कहना शुरू कर दो !'

'मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि कैसे कहूँ' जेनेका ने अनिश्चित भाव से कहा, 'बात यह है, सरजी, कि मैं बीमार हूँ,...समझे !...बड़ी बुरी तरह बीमार हूँ...और बहुत ही गन्दे रोग से बीमार हूँ...समझते हो किस रोग से ?'

'हाँ, हाँ, कहे जाओ !' प्लेटोनॉव से सिर हिलाते हुए कहा।

'काफ़ी दिन से मैं बीमार हूँ.. क़रीब एक मास से...या डेढ़ महीने से शायद। त्रिदेव के त्योहार के दिन मुझे अपने शरीर में इस बीमारी का पहले-पहल पता लगा था...' प्लेटोनॉव ने जल्दी से अपना माथा पोंछते हुए, सिटपिटाकर कहा, 'ठहरो...हाँ याद आ गया...उसी रोज न जिस रोज मैं तुम्हारे यहाँ उन विद्यार्थियों के साथ गया था...क्यों ?'

'हाँ, सरजी, ठीक उसी रोज़...'

'आह जेनेका', प्लेटोनॉव ने झिड़की और दुःख से कहा, 'तुम्हें पता है उन विद्यार्थियों में से दो को उस दिन के कुछ रोज बाद ही यह रोग हो गया...शायद तुम्हीं से उन्हें लगा ?'

जेनेका की आँखें क्रोध और घृणा से चमक उठीं। वह बोली :

'हाँ, शायद मुझसे ही उन्हें यह रोग मिला हो...मगर मुझे क्या पता ! कितने आदमी मेरे पास आते-जाते थे...हाँ, मुझे अब याद आता है कि एक विद्यार्थी जो तुमसे झगड़ना चाहता था.. लम्बा, खूबसूरत बालों का, नाक पर चश्मा लगाये था...'

'हाँ, हाँ...वही...उसका नाम सोबाश्नीकॉव था। उसी को यह रोग, मुझे विद्यार्थियों ने बताया, हो गया था ; मगर उसकी मुझे इतनी चिन्ता नहीं क्योंकि वह बिल्कुल कूड़ा-कर्कट था। मुझे अफ़सोस तो दूसरे का है। मैं जानता तो उसे इतने दिनों से था, मगर मैंने कभी उसका ठीक-ठीक नाम नहीं पूछा...सिर्फ़ मुझे इतना याद है कि वह किसी शहर का रहनेवाला था.. पोलीयाँस्क या जेनीगोड्स्क का...

उसके साथी उसे रामसेस कहते थे। वह जब डाक्टरों के पास इलाज के लिए गया और उन्होंने उसे निश्चयपूर्वक बता दिया कि उसे यही रोग है तो उसने घर जाकर, गोली मारकर आत्महत्या कर ली। एक खत लिखकर वह छोड़ गया था जिसमें उसने इस प्रकार की बड़ी विचित्र बातें लिखी थीं—'जीवन का अर्थ मैं बुद्धि, सौन्दर्य और नेकी की विजय मानता था, मगर इस बीमारी से मैं आदमी न रहकर एक सड़ा पशु बन गया हूँ; किसी भी दिन मुझे फ़ालिज मार सकता है। ऐसे जीवन से मैं मृत्यु ही अच्छी समझता हूँ; मगर जो कुछ भी मैंने किया उसके लिए और आज अपनी मृत्यु के लिए केवल मैं ही दोषी हूँ। मैंने क्षणिक पाशविकता के वश होकर स्त्री का स्नेह पैसे से खरीदने का जो अधम काम किया था, उसीका मुझे आज दण्ड यह मिल रहा है कि मैं स्वयं अपने हाथों अपनी जान ले रहा हूँ...'

'मुझे उसके लिए बड़ा दुःख है,' प्लेटोनॉव ने कहा। जेनेका ने अपने नथने फुला लिए।

'मगर मुझे...मुझे उसके लिए ज़रा भी अफ़सोस नहीं है।'

'यह बुरा है...अच्छा नौजवान तुम खाना रखकर बाहर जाओ। ज़रूरत होने पर मैं तुम्हें बुला लूँगा,' प्लेटोनॉव ने नौकर से कहा और बोला, 'यह बहुत ही बुरा है, जेनेच्का! यह आदमी बड़ा ओजस्वी और होनहार था। ऐसे आदमी मुश्किल से हज़ारों में एक होते हैं। मैं आत्महत्या पसन्द नहीं करता। आमतौर पर आत्महत्या करनेवाले उन बच्चों की तरह होते हैं जो मिठाई न मिलने पर दीवार से अपना सिर मारकर इसलिए तोड़ लेते हैं कि उससे उनके आस-पास के लोगों को दुःख हो अथवा सबक मिल सके, परन्तु उसकी मृत्यु पर मैं दुःख और सम्मान से सिर झुकाता हूँ। वह एक बुद्धिमान, उदार और दयावान आदमी था जो सबका बड़ा ध्यान रखता था और जो, जैसा उसने अपने साथ अन्त में किया, अपने साथ कठोर था।'

'मगर मेरे लिए सब एक से ही हैं' हठपूर्वक जेनेका ने उसका विरोध करते हुए कहा, 'बुद्धिमान या मूर्ख, ईमानदार अथवा बेईमान, बूढ़े या जवान मेरे लिए सब एकसे ही हैं। मैं सभी से एक-सी घृणा करती हूँ, क्योंकि देखो न मुझको...मैं क्या हूँ? एक तरह का दुनिया-भर का उगालदान, नाली, संडास मैं हूँ! सोचो तो प्लेटोनॉव, कितने आदमियों ने—कितने हजारों आदमियों ने—अपनी गन्दगी मुझ पर डाली है। मैं उन सबको, चाहे वे मेरे साथ आकर बिस्तर में लेटे हों अथवा आकर लेटनेवाले हों, घृणा करती हूँ! मेरी ताकत में होता तो मैं इन सबको सींक पर चढ़ाकर आग में भूनती!...मैं उन्हें ...'

'तुम बड़ी घमण्डी और प्रतिकारपूर्ण हो जेनी' प्लेटोनाव ने शान्ति-पूर्वक कहा।

'हाँ, पहिले न तो मैं घमण्डी ही थी और न प्रतकारपूर्ण थी, परन्तु अब हूँ। दस वर्ष से कम जब मेरी उम्र थी, तभी मेरी अपनी माता ने ही मुझे बेच डाला था। तब से बराबर मैं एक मर्द से दूसरे के पास जाती रही हूँ...किसी ने मुझे कभी मानव-प्राणी नहीं समझा! नहीं, मैं एक कीड़े, कूड़े के बर्तन, भिखारी और चोर से बदतर, कातिल से भी बदतर ही सदा समझी गई!..आदमियों को फाँसी पर चढ़ाने-वाले जल्लाद से भी खराब मैं मानी गई क्योंकि मेरे पास सरकारी जल्लाद भी आता था और वह भी मुझे हिकारत की नज़र से देखता था। मैं कुछ नहीं हूँ...एक सार्वजनिक छिनाल हूँ! समझते हो, सरजी! इस सार्वजनिक शब्द का समझते हो? सार्वजनिक का अर्थ है किसी की नहीं...न तो मा की... न बाप की...न तो रूसी...न रियाजना... बल्कि सबकी...जो रुपये दे उसकी! कभी किसी के दिमाग़ में यह नहीं आया कि मेरे पास आकर सोचता, 'अरे! यह भी मानव-प्राणी है! इसके भी दिल है, इसके भी दिमाग़ है, मोम की बनी नहीं है! इसके शरीर में भुस नहीं भरा है! फिर भी मुझे, अकेले मुझे ही ऐसा

लगता है। चकले की तमाम छोकरियों में से अकेली मुझे ही ऐसा लगता है कि मैं एक काले, बदबूदार गढ़े में हूँ; मगर तमाम छोकरियाँ जिनसे मैं आज तक मिली हूँ और जो मेरे साथ रह रही हैं, मेरी इस वेदना को समझती हैं और मुझसे सहानुभूति रखती हैं!...फिर उन्हें यह वेदना क्यों नहीं होती?...क्या वे निरी बोलने और चलनेवाली मांस की लोथें ही हैं? अपनी वेदना से भी अधिक मुझे इस बात की वेदना है!...'

'सच कहती हो।' प्लेटोनॉव ने धीरे से उत्तर दिया, 'इस प्रश्न का उत्तर बड़ा मुश्किल है! शायद ही कोई तुम्हें इसका उत्तर दे सके...'

'कोई इसका उत्तर नहीं दे सकता! कोई भी नहीं...' उत्तेजित होकर जेनेका ने कहा, 'तुम्हें याद है, उस रोज़ तुम्हारे सामने ही एक विद्यार्थी लियूबा को चकले से ले गया था...'

'हाँ, हाँ, अच्छी तरह याद है!...अच्छा तो फिर क्या हुआ?'

'फिर क्या हुआ? थोड़े दिन रखकर उसे निकाल दिया! कल वह फटे कपड़ों में, भीगी...रोती हुई फिर चकले में लौटकर आ गई! उस बदमाश ने उसे छोड़ दिया!...कुछ दिन तक उसके साथ खेला, मेहरबानी दिखाई और फिर निकाल दिया! 'तुम मेरी बहिन हो' वह कहता था, 'मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। तुम्हारा उद्धार करूँगा...'

'सच कहती हो?'

'हाँ, हाँ, बिल्कुल सच कहती हूँ!...अभी तक मैंने सिर्फ एक ही मर्द सचमुच दयावान और सहायक देखा है जिसके मन में कुत्ते का भाव नहीं पाया...और वह, सरजी, तुम हो; मगर तुम उन सबसे बड़े भिन्न हो। तुम एक विचित्र-से आदमी हो। तुम हमेशा फिरते रहते हो.. हमेशा कुछ ढूँढ़ते फिरते हो...माफ़ करना, मुझे तुम बालक की तरह भोले लगते हो!...इसी से तो मैं सिर्फ तुमसे मिलने आई हूँ!...'

'कहो, कहो, जैनेच्का, जो कुछ कहना हो कहो...'

'तो जब मुझे मालूम हुआ कि मुझे यह बीमारी है तो क्रोध से मेरा दिमाग़ ख़राब हो गया...मेरा दम-सा घुटने लगा...मैंने सोचा, चलो मेरी जिन्दगी का क़िस्सा ही ख़तम हुआ। अब किस पर दया! किसका अफ़सोस! और काहे की उम्मीद!...क़िस्सा ही ख़त्म है! मगर मुझ पर जो ज़ुल्म हुआ है क्या इसका बदला दुनिया में कोई नहीं है? क्या दुनिया से न्याय बिल्कुल उठ गया है? क्या मैं बदला लेकर अपनी छाती ठण्डी नहीं कर सकती? मैंने आज तक स्नेह क्या होता है नहीं जाना; घर क्या होता है केवल सुना है; मगर यह मैं अपने अनुभव से जानती हूँ कि गन्दी कुतिया की तरह अपने पास बुलाकर वे कुछ देर तक प्यार से थपथपाते हैं और फिर अपना जूता मेरे सिर पर रखते हुए चले जाते हैं! यह मैं जानती हूँ कि मानव प्राणी के दर्जे से—अपने बराबरी के दर्जे से—उन्होंने मुझे गिराकर ज़मीन की गन्दगी साफ़ करने के लिए सिर्फ़ एक चीथड़ा, उनके आनन्द का मैला बहा ले जानेवाली नाली ही समझा!...हाय राम!...और अन्त में यह गन्दा रोग मुझे दिया गया! क्या इस सबको मैं चुपचाप सहन करूँ?... क्या मैं ऐसी ग़ुलाम हूँ?...ऐसी बेबस हूँ?...ऐसी पशु हूँ?...अस्तु प्लेटोनॉव मैंने सबको ही यह बीमारी देने का निश्चय कर लिया... ग़रीब, अमीर, बूढ़ा, जवान, ख़ूबसूरत, बदसूरत—जो भी मेरे पास आवे सबको...!

प्लेटोनॉव जो काफ़ी देर से खाना बन्द कर चुका था, उसके चेहरे को आश्चर्य से बल्कि बड़ा डरकर देख रहा था। उसने जिसने अपने जीवन में बहुत दुःख, गन्दगी और कभी-कभी ख़ूनख़राबी भी देखी थी, जेनी की अपार और अतृप्त घृणा को देखकर भय से गाय की तरह डर गया था। अपने आपको सँभालते हुए वह बोला :

'एक बड़े लेखक ने ऐसा एक किस्सा लिखा है। जरमनों ने जब

फ्रान्स पर कब्जा कर लिया और उस पर हर तरह अपना अधिकार चलाने लगे, मर्दों को बन्दूकों का निशाना बनाने, स्त्रियों का सतीत्व नष्ट करने, घरों को लूटने और खेतों और खलियानों को जलाने लगे, तब एक बड़ी सुन्दर फ्रान्सीसी स्त्री ने जिसको जरमनी से यह बीमारी मिली थी, सबको जो उसके पास आवें, जान-बूझकर यह बीमारी देने का निश्चय किया। सैकड़ों, हजारों जरमनों को उसने इस बीमारी का शिकार बनाया और अन्त में जब वह अस्पताल में मरने लगी तो उसे अपने इस प्रतिकार को सोच-सोचकर बड़ा आनन्द और अभिमान होता था; मगर उसने अपने दुश्मनों से जो उसकी मातृ-भूमि को पददलित कर रहे थे और उसके देश-बन्धुओं की जानें ले रहे थे ऐसा भयङ्कर बदला लिया था...मगर तुमने जेनेका !...'

'मगर मैंने जो भी मेरे पास आया उससे ही बदला निकाला है ! कहो सरजी तुम्हीं, कहो कि तुम्हें सड़क पर एक ऐसा बच्चा मिले जिसे किसी ने बुरी तरह से बेइज्जत और खराब किया है...उसकी नाक-कान काटकर उसकी आँखें निकाल ली हैं और तुम्हारे पास से वही आदमी, जिसने ऐसा किया है, निकले और ईश्वर के सिवाय यदि ईश्वर है तो—और कोई उस समय तुम्हें नहीं देखता हो, तो तुम क्या करोगे ?'

'नहीं मालूम,' प्लेटोनाव ने सिर झुकाकर सुस्ती से कहा; मगर उसका चेहरा पीला पड़ गया और मेज़ के नीचे रखे हुए उसके हाथों की मुट्ठियाँ बँध उठीं 'शायद मैं उसे मार डालूँगा...।'

'शायद नहीं, तुम उसे ज़रूर मार डालोगे ! मैं तुम्हें जानती हूँ, मैं देख रही हूँ तुम क्या करोगे। अच्छा, तो अब सोचो तो हम सबके साथ बचपन में ऐसा ही व्यवहार हुआ है !......जब हम बिल्कुल बच्चे थे !......' जेनेका ने दुःख से कराहकर कहा और क्षणभर के लिए अपना चेहरा दोनो हाथों से ढक लिया।

'तुमने भी शायद उसी त्रिदेव के त्योहार की शाम को हमारे यहाँ यही बात कही थी ?...कि हम लोग बच्चों की तरह हैं—मूर्ख, हर एक पर जल्दी से विश्वास कर लेनेवाली, अन्धी, लालची और ओछी जिससे हमें अपने जुये से निकलना असम्भव होता है...निकलकर जाँय भी कहाँ ? क्या करें ?...यह मत समझना सरजी, कि मेरे मन में उन्हीं के प्रति प्रतीकार की अग्नि जलती है जिन्होंने मेरे साथ दुर्व्यवहार किया है...नहीं, मेरा मन उन सभी से जलता है जो हम लोगों के पास चकलों में आते हैं...उन तमाम वीर-बहादुरों के प्रति...छोटे से लेकर बड़े तक...अस्तु मैंने अपना और अपनी बहिनों का सभी से बदला लेने का निश्चय किया है। क्यों, यह ठीक है कि नहीं ?...'

'जैनेच्का, मैं क्या बताऊँ...मुझे कुछ भी कहना कठिन लगता है...मेरी हिम्मत कुछ कहने की नहीं होती...मेरी समझ में कुछ नहीं आता।'

'मगर इतना ही नहीं है...मुख्य बात तो दूसरी है, मैं जो मेरे पास आता था उसे यह रोग दे देती थी और मेरे मन में कोई, किसी प्रकार की भी दया, पश्चात्ताप अथवा दोष का विचार नहीं आता था ; बल्कि मेरे में ऐसा करने के बाद एक प्रकार की खुशी-सी होती थी जैसी कि भूखे भेड़ियों को खून पी लेने पर होती है ; मगर कल एक ऐसी घटना हुई जो मेरी भी समझ में नहीं आती। एक सैनिक विद्यार्थी मेरे पास आया जो निरा छोकरा ही था—मूर्ख—जिसके मुँह से मा का दूध भी अभी तक सूखा नहीं लगता था। वह पिछले जाड़ों से मेरे पास आया-जाया करता था। मुझे कल उसे देखकर उस पर दया आ गई...इसलिए नहीं कि वह बड़ा सुन्दर और नौजवान था... इसलिए भी नहीं कि उसका व्यवहार सदा नम्र और स्नेहपूर्ण होता था। नहीं, इसलिए हरगिज नहीं, क्योंकि मेरे पास सुन्दर नौजवान, नम्र और स्नेहपूर्ण व्यवहार करनेवाले पहले भी आ चुके थे जिन्हें मैंने

नहीं छोड़ा, बल्कि उन्हें तो मैं छाँट-छाँटकर चुन लेती थी जैसे कि जानवरों को चुन-चुनकर गरम-गरम लोहे से दाग दिया जाता है ; मगर न जाने क्यों इस पर मुझे एकाएक दया आई...मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसा क्यों हुआ ? मैं बहुत सोचती हूँ, मगर मेरी समझ में कोई कारण नहीं आता। मुझे कुछ ऐसा लगा कि उसके साथ ऐसा व्यवहार करना ऐसा ही होगा जैसा कि किसी मूर्ख या पागल को ठग लेना, अथवा किसी अन्धे के मुँह पर तमाचा मारना या किसी सोते हुए आदमी का गला घोंट देना। अगर वह काफी उम्र का कोई अनुभवी आदमी होता तो मैं उसे कभी न छोड़ती, मगर वह स्वस्थ और बलिष्ठ था और उसक छाती और बाहें मूर्तियों की तरह गढ़ी हुई लगती थीं। अस्तु उसे बर्बाद करने को मेरा जी न हुआ...और मैंने उसका रुपया उसे लौटा दिया और उसे अपनी बीमारी दिखा दी, सूक्ष्म में मैंने बड़ा ही मूर्खता का काम किया। वह तो रोता हुआ मेरे पास से चला गया, मगर तब से फिर मुझे नींद आना असम्भव हो गया है और मैं इस प्रकार चलती-फिरती हूँ मानो मैं अन्धकार में हूँ। मुझे लगता है कि मेरा दुनिया भर को—जो मेरे पास आये उसको, उनके बापों को, उनकी माओं को, बहिनों को, बहुओं को—सबको—अपनी बीमारी देकर सड़ाने का स्वप्न व्यर्थ था, फिजूल था क्योंकि मैंने इस आदमी को छोड़ दिया ! फिर अब मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है, सरजी आइवानोविश, तुम बड़े बुद्धिमान हो, तुमने इतनी दुनिया देखी है—तुम्हीं मेरी मदद करो, तुम्हीं बताओ कि मैं क्या करूँ ?'

'मैं नहीं जानता, जैनेच्का !' प्लेटोनॉव ने धीरे से कहा, 'यह बात नहीं है कि मुझे तुमसे कुछ कहते या तुम्हें सलाह देते हुए डर लगता है। सच तो यह है कि मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी मालूम नहीं है। यह मेरे बुद्धि के परे की बात है...मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है...'

जेनी अपने हाथ मल कर, उङ्गलियाँ चटखाती हुई कहने लगी 'समझ में मेरे भी कुछ नहीं आ रहा है...इसलिए मैं समझती हूँ कि जो मैंने सोचा था वही ठीक है ; अस्तु आज सुबह मैंने सोचा कि अब मेरे लिए एक ही रास्ता रह गया है...'

'नहीं, नहीं, जैनेच्का !...जेनी !...' प्लेटोनॉव ने फौरन उसकी बात काटते हुए कहा।

'अब मेरे लिए एक ही रास्ता रह गया है कि मैं अपने गले में फाँसी लगाकर मर जाऊँ...'

'नहीं, नहीं, जेनी, ऐसी बात हरगिज नहीं सोचनी चाहिये !...अगर कोई दूसरा रास्ता न होता तो मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि मैं तुम्हें हिम्मत से ऐसा कर डालने की सलाह दे सकता था। मैं कहता, 'जेनी अब कुछ नहीं रहा है दूकान बढ़ा दो।' मगर इसकी तुम्हें जरूरत बिल्कुल नहीं है। तुम चाहो मैं तुम्हें एक रास्ता बता सकता हूँ। उससे भी तुम उसी प्रकार दुनिया से अपने प्रति अन्याय का बदला ले सकती हो... उससे तुम अपने क्रोध को सौगुना अधिक उतार सकती हो...'

'वह कौन-सा रास्ता है ?' जेनी ने थकावट से पूछा मानो एकाएक चमक उठने के बाद वह फिर मुर्झाने लगी हो।

'देखो, वह यह है...तुम अभी जवान हो और मैं तुम्हें सच बता दूँ, बड़ी सुन्दर हो। तुम चाहो तो लोगों को अपने चंगुल में आसानी से फँसा सकती हो—जो कि सुन्दरता से भी कहीं बड़ी बात है, मगर आज तक तुमने शायद कभी अपनी इस ताक़त को अच्छी तरह नहीं समझा है। तुम नहीं जानती कि तुम्हारे स्वभाव की स्त्रियाँ किस तरह मर्दों पर अपना जादू चलाती हैं, कैसे उनको अपने चंगुल में करके उनको गुलाम और पशु बना देती हैं...तुम अभिमानी हो, बहादुर हो, आज़ाद तबियत की हो और चतुर स्त्री हो। मैं यह भी जानता हूँ कि तुमने काफ़ी पढ़ा है—गोकि सस्ते उपन्यास ही सही—

फिर भी तुमने पढ़ा तो है, तुम्हारी बातचीत का ढङ्ग दूसरों से भिन्न है। तुम चाहो तो अपना जीवन बदल सकती हो, अपना इलाज कराकर ठीक हो सकती हो और इन चकलों के जीवन से अपना पिण्ड छुड़ा कर आज़ाद हो सकती हो! तुम चाहो तो तुम्हारी उङ्गलियों के इशारों पर सैकड़ों नौजवान नाच सकते हैं जो तुम्हारे लिए चोरी, बदमाशी और ग़बन सब कुछ करने को तैयार हो जाँयगे...उनकी रानी बनकर तुम बैठो और उन पर हाथ में कोड़ा लेकर सख्ती से राज्य करो!... उनको बर्बाद और पागल करो जब तक तुम्हारा मन और शरीर तुम्हारा साथ दे!...देखो, मेरी प्यारी जेनी, आज भी ज़िन्दगी पर स्त्रियाँ ही राज्य करती हैं! कल की नौकरानी, धोबिन और गानेवाली लाखों की मालकिन बन बैठती हैं! मुश्किल से अपने हस्ताक्षर कर सकनेवाली स्त्री भी कभी-कभी, एक आदमी के ज़रिये से बादशाहतों का भाग्य अपने हाथ में कर लेती है। शाही घरानों के शाहज़ादे सड़कों पर फिरनेवाली स्त्रियों, कल की रखेलियों से विवाह कर लेते हैं। जैनेक्का, तुम चाहो तो गज़ब ढा सकती हो...जितना बदला चाहो दुनिया से ले सकती हो! मैं तुम्हें दूर से देख-देखकर सराहूँगा! सचमुच तुम में ऐसी ताक़त है...तुम चील की तरह झपटकर जिस मनुष्य को चाहो अपने पंजे में फँसा सकती हो...सबको न भी सही तो भी कुछ को तो आसानी से फँसा सकती हो...'

'नहीं,' जेनेका ने धीरे से मुसकराते हुए कहा, 'मैंने भी पहले एक बार ऐसा सोचा था...मगर अब मेरे शरीर से जान निकल चुकी है। अब मुझमें न तो शक्ति ही रही है, न कोई इरादा और न इच्छा। मैं अन्दर से बिल्कुल गलकर खाली हो गई हूँ।...तुमने उस सड़े हुए कुकुरमुत्ते को तो देखा ही होगा जिसको पकड़कर ज़रा दबाते ही वह चूर-चूर हो जाता है। मैं भी बिल्कुल उसी तरह हो गई हूँ। मेरी ज़िन्दगी में अब घृणा के सिवाय और कुछ नहीं रहा है, मगर जैसा

मेरा शरीर खोखला है वैसी ही, मुझे लगती है कि, मेरी घृणा भी निरी खोखली ही है क्योंकि मैं फिर किसी छोटे बालक को देखूँगी...और उसे देखकर फिर मुझे दया हो आवेगी और फिर अपनी कमज़ोरी पर मुझे दुःख होगा।...नहीं, इससे यही बहतर है...अब यही बहतर है !...'

वह चुप हो गई। प्लेटोनॉव की समझ में भी न आया कि क्या कहे। दोनों बड़ी उलझन और परेशानी में पड़ गये। अन्त में जेनेका उठी और उठकर प्लेटोनॉव की तरफ़ न देखते हुए, उसने अपना ठण्डा और कमजोर हाथ उसकी तरफ़ मिलाने को बढ़ाते हुए कहा :

'बन्दगी, सरजी आइवानोविश ! माफ़ करना, मैंने तुम्हारा बड़ा वक्त खराब किया...मैं देखती हूँ कि तुम मुझे सहायता कर सकते तो अवश्य करते...मगर अब कुछ करने के लिए रहा नहीं है...कुछ हो नहीं सकता ! अस्तु बन्दगी !'

'लेकिन कोई बेवकूफी का काम मत कर बैठना, जैनेच्का ! यह मेरी तुमसे प्रार्थना है !...'

'नहीं, कोई बेवकूफी का काम नहीं करूँगी।' उसने थकावट से हाथ हिलाकर कहा !

मैदान के पास आकर दोनों ने अपना-अपना रास्ता पकड़ा, मगर कुछ ही क़दम चलकर जेनेका फिर मुड़ी और उसको पुकारा, 'सरजी आइवानोविश, ओ सरजी आइवानोविश !'

वह रुक गया और मुड़कर फिर उसके पास लौट आया।

'सुनो सरजी, रोलीपोली का दम कल हमारी बैठक में निकल गया ! वह बड़ी देर से उछल-कूद रहा था, एकाएक नीचे गिरा और दम निकल गया...खैर, बड़ी अच्छी मौत रही। और एक बात और मैं तुमसे पूछना भूल ही गई, सरजी...एक आखिरी बात...ईश्वर है या नहीं ?'

प्लेटोनॉव ने भौंहे चढ़ाकर कहा, 'मैं इस प्रश्न का तुम्हें क्या जवाब दूँ ! मुझे खुद पता नहीं ! मैं समझता हूँ ईश्वर है, परन्तु ऐसा नहीं है जैसा हम उसे समझते हैं। वह उससे कहीं अधिक बुद्धिमान और न्यायी है जैसा हम उसे समझते हैं...'

'और इस जीवन के बाद भी कोई जीवन होता है क्या ? मृत्यु के बाद भी कुछ होता है ? जैसा कहा जाता है स्वर्ग और नर्क होते हैं, क्या सच है ? बताओ सच क्या है ? और यह सब झूठ है, मृत्यु के बाद कुछ नहीं होता ? सिर्फ ऊजड़ आकाश होता है ? एक नींद होती है जिसमें स्वप्न तक नहीं आते ? एक अँधेरी कोठरी होती है ?'

प्लेटोनॉव चुपचाप खड़ा रहा। अपनी आँखें उठाकर जेनेका की तरफ़ देखने की भी उसकी हिम्मत नहीं हुई। उसका दिल दुःख और भय से बैठा जा रहा था।

'मुझे पता नहीं,' आख़िरकार उसने अपने आपको बड़े प्रयत्न से सँभालकर कहा, 'मैं तुमसे झूठ नहीं कहना चाहता।'

जेनेका ने एक गहरी साँस ली और एक दयापूर्ण टेढ़ी मुसकान उसके चेहरे पर नाच उठी।

'अच्छा, धन्यवाद, मेरे प्यारे ! इतना कहने के लिए भी धन्य-वाद...मेरी तुम्हारे लिए शुभ-कामना है। हृदय से मैं तुम्हारा भला चाहती हूँ। अच्छा, बन्दगी...'

यह कहकर वह मुड़ी और धीरे-धीरे, काँपते हुए पैरों से, टीले पर चढ़ने लगी।

× × ×

प्लेटोनॉव लौटकर जब नावों के पास पहुँचा तो काम शुरू हो ही रहा था ! मज़दूर अपने शरीर खुजलाते हुए, जमुहाई लेते हुए और अपनी स्थिति ठीक करते हुए, अपनी-अपनी जगहें ले रहे थे। चौधरी ने दूर से ही प्लेटोनाव को आता देखकर बड़ी ज़ोर से चिल्लाकर कहा,

'अच्छा, अच्छा, आ गया वक्त से...राक्षस का अवतार!...मैं सोच ही रहा था कि तेरी दुम पकड़कर इस गिरोह में से बाहर निकाल-कर फेंक दूँ...अच्छा, खड़ा हो जा अपनी जगह पर!'...

'मगर यार निकले तुम बड़े छिपे रुस्तम, सरेज्का!' फिर वह स्नेह से बोला, 'कहीं रात होती तो न जाने तुम क्या करते! दिन में ही तुम्हारा यह हाल है!...'

पाँचवाँ अध्याय

शनिवार का दिन था। साप्ताहिक डाक्टरी मुआयने के लिए चकले के हर घर में छोकरियाँ काँपती हुई तैयारी कर रहीं थी जिस तरह कि फ़ैशनेबल स्त्रियाँ डाक्टरों के पास जाने के लिए तैयारियाँ करती हैं। अच्छी तरह से साफ़-सुथरी होकर और शृँगार करके वे साफ़ और अच्छे कपड़े पहिन रही थीं। सड़क की तरफ की तमाम खिड़कियों के द्वार बन्द थे, और आँगन की तरफ की एक खिड़की से सटी हुई, लेटने के लिए एक मेज़ रखी थी जिसपर पीठ को नीचे से उठाने के लिए एक लकड़ी का तकिया-सा बना था।

तमाम छोकरियाँ परेशानी से सोच रही थीं, 'कहीं मुझे कोई ऐसी बीमारी न निकल आवे जिसका मुझे पता नहीं लग सका है!...ऐसा हुआ तो अस्पताल में जाकर पड़ना होगा, बदनामी होगी, अस्पताल में मुश्किल से दिन कटेंगे, खाना भी अच्छा नहीं मिलेगा, इलाज की सख्तियाँ सहनी होंगी...'

केवल मोटी मनका, जिसको मगरमच्छ भी कहते थे और हेन्रीटा जिन सबकी उम्र तीस बरस की हो चुकी थी, जिससे वे चकले के

रिवाज के अनुसार पुरानी हो चुकी थीं. सब कुछ देख चुकी थीं और सरकस के घोड़ों की तरह जीवन के उतार-चढ़ाओं की आदी होगई थी; पूर्ण शान्त थीं, मगरमच्छ मनका तो कभी-कभी मन ही मन कहती भी थी, 'मैं सब कुछ देख चुकी हूँ...और मुझे क्या होगा?'

जेनेका आज सुबह ही से चुपचाप किसी विचार में थी। उसने नन्ही मनका को एक सोने की माला, एक पतली जंजीर जिसमें उसका अपना एक छोटा-सा फोटो जड़ा था और एक चाँदी की सलीब जिसमें गले से लटकाने के लिए एक रेशमी डोरा पड़ा था, भेंट की और टमारा से उसने हठ किया कि वह उसकी यादगार में दो अङ्गूठियाँ अपने पास रख ले। एक तीन तारों की चाँदी की अंगूठी थी। ये तार अलग हो सकते थे और उनके बीच में एक चाँदी का दिल और दूसरे दोनों तारों पर दो हाथ बने हुए थे जो तीनों तारों के मिलाकर पहनने से दिल को पकड़ लेते थे। दूसरी अंगूठी पतली-सी सोने की थी जिस पर एक नगीना जड़ा था।

'और मेरी कुरती, टमोरच्का, तुम नौकरानी अनूश्का को दे देना। वह उसे अच्छी तरह धोकर मेरी याद में पहिनेगी।'

दोनों टमारा के कमरे में बैठी थीं। जेनेका ने आज सवेरे ही काग्नेक शराब पीने के लिए मँगा ली थी और इस समय बैठी हुई, सुस्ती से धीरे-धीरे, गिलास पर गिलास चढ़ा रही थी और शराब पीकर नीबू और शकर चख रही थी। टमारा ने आज पहली ही बार उसे ऐसा करते देखा था जिससे उसे बड़ा आश्चर्य हो रहा था क्योंकि जेनेका को हमेशा से शराब नापसन्द थी और कभी-कभी मेहमानों के बहुत मजबूर करने पर ही वह शराब पिया करती थी।

'आज तुम्हें क्या हुआ है? कैसी बातें कर रही हो?' टमारा ने पूछा, 'मानो तुम मरने के लिए तैयार हो रही हो अथवा सन्यास ले रही हो?'

'हाँ, मैं चली जाऊँगी', जेनेका ने सुस्ती से कहा, 'मैं ऊब गई हूँ, टमोरच्का !...'

'और हममें से खुश ही कौन है यहाँ ?'

'हाँ, शायद !...मगर मैं ऊब ही नहीं गई हूँ...मुझे सब चीज़ें एक-सी लगने लगी हैं...मैं तुमको देखती हूँ और फिर इस मेज़ को, इस बोतल को, अपने हाथों और पावों को देखती हूँ और ये सब चीज़ें मुझे एक-सी...एक-सी निरर्थक लगती हैं...किसी चीज़ का कोई उद्देश नहीं लगता।...मुझे सारा जीवन एक पुरानी, बड़ी पुरानी उस तस्वीर की तरह लगता है जिसे देखते-देखते उससे घृणा हो उठती है। देखो, वह सिपाही सड़क पर जा रहा है. मगर वह सजीव सिपाही है अथवा एक निर्जीव गुड़िया जिसे तारों से चलाया जा रहा है, मुझे दोनों एक-से ही हैं। वह मेंह में भींग रहा है, इसकी भी मुझे चिन्ता नहीं होती और यह सोचकर कि वह मर जायगा, मैं मर जाऊँगी, और तुम भी टमारा मर जाओगी मुझे न तो कोई आश्चर्य ही होता है और न डर ही...सभी चीज़ें मुझे एक-सी साधारण और अर्थहीन लगती हैं...'

जेनेका कुछ देर तक चुप रही। एक गिलास शराब का उसने पिया, थोड़ी शकर चखी और फिर सड़क की तरफ़ देखती हुई एकाएक बोली :

'टमारा मैंने आज तक तुमसे कभी नहीं पूछा—तुम इस घर में कहाँ से और क्यों कर आई ? तुम हम लोगों से बिल्कुल भिन्न दीखती हो, तुम सब कुछ जानती हो, जो कुछ भी घटता है उसके लिए तुम कुछ न कुछ अच्छी और बुद्धिमानी की बात कहती हो...तुम फ्रेंच भाषा भी जानती हो...उस दिन कैसी अच्छी तरह तुम फ्रेंच बोल रही थीं ! मगर हम में से कोई भी तुम्हारे बारे में कुछ नहीं जानता।...कहो तो, तुम कौन हो ?'

'प्यारी जैनेच्का, मेरे बारे में कोई ख़ास जानने योग्य बात नहीं है...मेरी जिन्दगी भी ऐसी ही है जैसी दूसरों की...मैं पहले एक स्कूल में थी, फिर एक जगह बच्चों की देखरेख करती और उन्हें शिक्षा देती थी, फिर गाने का काम करने लगी थी, उसके बाद कुछ दिन तक मैंने एक जुआ-घर चलाया, फिर मैं एक धोखेबाज के साथ में पड़ गई और मैंने बन्दूक चलाना सीखा और मैं सरकसों में अमेरिकन अमेजन स्त्री का पार्ट करती फिरी। मैं बड़ी अच्छी निशानेबाज हो गई... मगर फिर मैं एक आश्रम में जाकर रहने लगी। वहाँ मैं दो वर्ष तक रही... मैं ऐसी ही बहुत मारी-मारी फिरी हूँ...सब याद नहीं आता... मैं चोरी भी करती थी...'

'तुमने बहुत दुनिया देखी है...तरह-तरह की ज़िन्दगी देखी है।'

'हाँ, मेरी काफी उम्र भी तो हो चुकी है। तुम क्या समझती हो, मेरी अब क्या उम्र होगी?'

'बाईस-तेईस बरस की?...'

'नहीं, मेरी प्यारी, पिछले सप्ताह मेरी बत्तीसवीं वर्षगाँठ थी। मैं शायद इस घर की सभी छोकरियों से उम्र में बड़ी हूँ। मैं न तो किसी चीज पर आश्चर्य करती हूँ और न किसी बात का दुःख करती हूँ। तुम जानती ही हो मैं शराब भी नहीं पीती हूँ...और मैं अपने शरीर की बहुत फिक्र रखती हूँ और खास बात, सब से खास बात तो यह है कि मैं कभी किसी मर्द पर लट्टू होकर उसकी बातों में नहीं आती...'

'मगर, तुम्हारा सेनका?'

'सेनका की बात दूसरी है...औरत का दिल मूर्ख और अस्थिर होता है...और शायद बिना प्रेम के नहीं रह सकता। फिर भी मैं उसे प्रेम नहीं करती, लेकिन यों ही...अपने आपको धोखा देती हूँ।... मगर फिर भी, मुझे शीघ्र ही सेनका की बड़ी ज़रूरत होगी।'

जेनेका में एकाएक जान-सी आ गई और उसने उसकी तरफ़ उत्सुकता से देखते हुए पूछा, 'मगर तुम यहाँ कैसे आ फँसी? तुम इतनी चतुर, सुन्दर और मिलनसार हो...'

'वह सब कहानी कहने के लिए बड़ा वक्त चाहिये...और मैं बड़ी आलसी हूँ...मैं यहाँ प्रेम के कारण आई। एक नौजवान से मेरा प्रेम हो गया और मैंने उसके साथ क्रान्ति में भाग लिया। हम स्त्रियों का ढङ्ग है...जो हमारा प्रेम देखता है, हम भी देखने लगती हैं... करता है हम भी करने लगतीं हैं...मुझे सचमुच हृदय से उसके काम में विश्वास नहीं था, परन्तु उसके साथ-साथ मैं भी उसके काम में लग गई। वह बड़ा चापलूस, चतुर, बड़ी अच्छी-अच्छी बातें करनेवाला और अच्छा दीखनेवाला सुन्दर नौजवान था...मगर बाद में वह बड़ा धोखेबाज़ साबित हुआ। वह इधर तो क्रान्ति में भाग लेने का बहाना करता था उधर पुलिस से जाकर सारा हाल बता देता था; अस्तु क्रान्तिकारियों ने उसे गोली से मार डाला और तब मेरी आखें खुलीं, परन्तु फिर मुझे अपने आपको छिपाने की ज़रूरत हुई...और मैंने अपना पासपोर्ट बदल दिया। फिर मुझे सलाह दी गई कि छिपने के लिए सबसे सुरक्षित पीले टिकट होते हैं और मैं यहाँ आ गई!...यहाँ मैं उसी तरह हूँ जिस तरह चरागाह में जानवर चरते फिरते हैं; मौक़ा आते ही, काम में सफलता होते ही, मैं यहाँ से चली जाऊँगी!'

'कहाँ चली जाओगी?'; जेनी ने उत्सुकता से पूछा।

'दुनिया बहुत बड़ी है...और मुझे ज़िन्दगी से प्रेम है!...इसी तरह मैं उस आश्रम में भी रहती रही, पूजापाठ करती थी और खूब भजन गाती थी; फिर जब मुझे काफी आराम मिल गया और मैं वहाँ की ज़िन्दगी से ऊब उठी तो मैं वहाँ से चल दी और जाकर नाचने-गाने का काम करने लगी! उसी तरह यहाँ से भी किसी दिन चल दूँगी...जाकर किसी थियेटर या सरकस में काम करने लगूँगी...

मगर जैनेच्का, न जाने क्यों मुझे चोरी का व्यवसाय बहुत पसन्द है...
उसमें हिम्मत की ज़रूरत पड़ती है, खतरा होता है, मुश्किलें आती हैं
और बड़ा मज़ा आता है ! मेरा मन चोरी करने को होता है ! यह मत
समझना कि मैं देखने में शरीफ़ और भली लगती हूँ और पढ़ी-लिखी
होने का दिखावा कर सकती हूँ ! मैं बिल्कुल दूसरी ही किस्म की हूँ ।'

उसकी आँखें एकदम दमक उठीं और वह आनन्द में भरकर
बोली 'मेरे अन्दर शैतान है ।'

'तुम्हारे लिए यह सब ठीक है,' जेनी ने थकावट से विचारपूर्वक
कहा, 'तुम्हारे मन में कोई इच्छा तो है, मगर मेरी आत्मा तो लाश
की तरह हो गई है...मेरी उम्र पच्चीस वर्ष की है, मगर मेरी आत्मा बूढ़ी
खूसट हो गई है...काश कि मैंने अपनी ज़िन्दगी अक्लमन्दी से गुज़ारी
होती !...उफ !...कोई मन में भाव होता !'

'छोड़ो जेनेका, मूर्खता की बातें मत करो । तुम चतुर हो, मौलिक
हो ; तुम में वह शक्ति है जिसके आगे मर्द झुक-झुककर बड़ी खुशी से
रेंगते हैं। तुम भी यहाँ से चली जाना। मेरे साथ नहीं—क्योंकि मैं हमेशा
अकेली रहती हूँ—मगर अपने आप अकेली ही यहाँ से चली जाना ।'

जेनेका ने सिर हिलाया और चुपचाप, बिना आँसू बहाये, दोनों
हाथों से अपना मुँह ढक लिया ।

'नहीं वह काफी देर तक चुप रहने के बाद बोली, 'नहीं, यह
मुझसे नहीं होगा, मैं अन्दर से बिल्कुल खोखली हो गई हूँ !...
मैं अब इन्सान नहीं रही हूँ बल्कि एक प्रकार की गन्दगी हूँ !'
एकाएक उसने निराशा का भाव प्रगट करते हुए अपने आप से
कहा 'आओ जैनेच्का शराब पियो और थोड़ा नीबू चखो !...' बाप
रे...कैसा बुरा स्वाद है !...जाने कहाँ से अनूश्का ऐसी शराब उठाकर
लाती है ? कुत्तों के बालों पर यह शराब लगा दी जाय तो उसके सारे
बाल गिर जायँ ! मगर यहाँ यह नीच इसके लिए दूसरी जगहों से आठ

आना ज़्यादा दाम लेती है। मैंने एक दिन पूछा 'इतना रुपया जोड़ कर क्या करोगी?' तो वह बोली, 'अपनी शादी के लिए जोड़ रही हूँ। अपने पति को मैं अपना निर्दोष शरीर ही भेंट नहीं करूँगी बल्कि रुपयों की एक अच्छी थैली भी!' वह बड़ी खुश है!...उस आईने के नीचे रखे हुए छोटे-से बक्स में मेरा कुछ रुपया है; वह तुम कृपया उसे दे देना...'

'तुम क्या करने का विचार कर रही हो, मूर्ख! क्या तुम मरने की तैयारी कर रही हो, क्या?' टमारा ने उसे डाँट कर कहा।

'नहीं, मैंने यों ही कहा। कोई बात हो जाय तो...उस रुपये को ले लो...अभी लेकर अपने पास रख लो! मुमकिन है मुझे अस्पताल जाना पड़े!...हो सकता है कि कोई घटना यहाँ ही हो जाय। मैंने यही सोचकर कुछ रुपये बचाकर रख लिये हैं कि न जाने क्या हो...मान लो कि मैं सचमुच आत्महत्या ही करना चाहती हूँ, टमोरच्का, तो क्या तुम उसमें अड़चन डालोगी?'

टमारा ने उसकी तरफ चुपचाप ध्यानपूर्वक घूरकर देखा। जेनी की आँखें दुखी और खाली सी दीखती थीं। उनमें से जीवन की आग बुझ-सी चुकी थी और वे धुँधली और मुर्झाई हुई लग रही थीं।

'नहीं', टमारा ने आखिरकार शान्तिपूर्वक, मगर दृढ़ता से कहा, 'अगर तुम प्रेम के कारण आत्महत्या करने का विचार करतीं तो मैं उसमें बाधा डालती, धन के लिए करतीं तो मैं तुम्हारा मन समझा-बुझाकर उसपर से हटाती, मगर कुछ परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं जिनमें बाधा नहीं डालना चाहिये। मैं तुम्हारी मदद तो ऐसे काम में अवश्य नहीं करूँगी, मगर मैं तुम्हें पकड़ूँगी और रोकूँगी भी नहीं।'

इतने में फुर्तीली ज़ोसिया तमाम कमरों के आगे से चिल्लाती हुई निकल गई, 'श्रीमतियो, कपड़े पहिनो! डाक्टर साहब आ गये। श्रीमतियो, कपड़े पहिन कर तैयार हो जाओ।'

'अच्छा, टमारा जाओ, जाओ,' जेनेका ने उठते हुए स्नेहपूर्वक कहा। 'मैं एक मिनट के लिए अपने कमरे में जाती हूँ। मैंने अभी तक कपड़े भी नहीं बदले हैं, गो कि, सच तो यह है कि उसकी भी मुझे बिल्कुल फ़िक्र नहीं है। मेरा नाम पुकारा जाने लगे और मुझे कुछ देर हो जाय, वक़्त से न पहुँच सकूँ तो तुम दौड़कर मुझे ले जाना।

टमारा के कमरे से निकलते हुए उसने टमारा को कन्धों से पकड़ कर चिपटा लिया मानो यों ही उसने ऐसा किया हो और उसके कन्धों को प्यार से थपथपाया।

× × ×

डाक्टर क्लीमेन्को, शहर का सरकारी डाक्टर, कमरे में डाक्टरी मुआयने के लिए तमाम जरूरी चीजें ठीक कर रहा था—वैसलीन, दवायें, छोटा-सा एक आईना इत्यादि और ठीक करके उन्हें एक छोटी मेज पर रख रहा था। इसी मेज पर तमाम छोकरियों के टिकट और उनके नामों की सूची भी रखी थी। छोकरियाँ सिर्फ एक कपड़ा मोजे और स्लीपर पहिने खड़ी या बैठी थीं। मेज के पास मालकिन अन्ना मारकोव्ना खड़ी थी और उसके कुछ पीछे दोनों खालायें ऐम्मा ऐडवार्डोव्ना और ज़ोसिया।

डाक्टर बूढ़ा, बेदिल, खिलकिल्ला सा दीखता था, जिसको किसी चीज की फ़िक्र नहीं लगती थी। उसने अपना चश्मा नाक पर टेढ़ा रखा और सूची उठाकर पुकारा :

'ऐलेकजेन्ड्रा बुडजिन्सकाया !...'

क्रोधी चेहरे, मोटी नाकवाली, छोटी नीना, निकलकर आ गई। चेहरे पर क्रोधी भाव बनाये हुए, शर्म और सिटपिटाहट और मेहनत से हाँफती हुई वह भोंड़ी तरह से मेज़ पर चढ़ी। डाक्टर ने चश्मे में से आँखें टेढ़ी कर-करके और चश्मा उतार-उतार कर उसका मुआयना किया।

'जाओ ठीक हो!' उसने कहा और टिकट की पीठ पर लिख दिया 'तारीख़ २८ अगस्त। ठीक।' लिखना खत्म करने से पहिले ही उसने फिर पुकरा :

'वोश्चेन्कोव: आईरीन!...'

अब लियूबा की बारी थी। डेढ़ महीने तक आज़ाद रहने से वह इन साप्ताहिक डाक्टरी मुआयनों की आदी नहीं रही थी। अस्तु, जब डाक्टर उसकी छाती पर से कपड़ा उठाकर उसे देखने लगा तो लज्जा से उसका मुँह लाल हो गया जैसे कि बड़ी शर्मीली स्त्रियाँ अपनी गर्दन दिखाती हुई भी शर्माती हैं। उसके बाद ज़ो का मुआयना हुआ, उसके बाद नन्ही मनका का, उसके बाद टमारा का और उसके बाद नियूरा का। नियूरा में डाक्टर ने सूज़ाक की बीमारी पाई और उसे फौरन अस्पताल भेजने का हुक्म दिया।

डाक्टर ने सबका मुआयना बड़ी आश्चर्यजनक शीघ्रता से कर डाला। बीस वर्ष से लगातार वह इसी तरह सैकड़ों छोकरियों का हर सप्ताह मुआयना करता था, अस्तु उसमें पेशेवर लोगों की वह हाथ की सफ़ाई और फ़ुर्ती आ गई थी जो कि आम तौर पर सरकस के खिला-ड़ियों, ताश के खेल करनेवालों, फर्नीचर उठानेवालों और पैक करने-वालों इत्यादि में पाई जाती है। उसने अपना मुआयना उसी तरह पूरा किया जिस तरह मवेशियों के डाक्टर सैकड़ों जानवरों का मुआयना एक दिन में कर डालते हैं।

क्या उसने क्षण भर के लिए यह भी सोचा कि वह इन्सानों का मुआयना कर रहा है अथवा वह उस भयंकर जंजीर की आखिरी और सबसे ज़रूरी कड़ी है जिसका नाम कानूनी वेश्यावृत्ति है!

नहीं! शायद उसने अपना पेशा शुरू करने पर पहले-पहल जब यह काम किया हो, तब कभी ऐसा सोचा हो तो सोचा हो। अब तो उसके सामने सिर्फ़ नंगे पेट, नंगी गरदनें और खुले हुए मुँह इन स्त्रियों के,

जिनका वह हर शनिवार को मुआयना करता था, तमाम झुण्ड में से किसी को, वह सड़क पर मिलने पर, शायद ही पहिचान सकता था। उसे तो केवल हरएक का जल्दी-जल्दी मुआयना खत्म करने की फ़िक्र होती थी जिससे कि एक घर खत्म करके वह दूसरे का, तीसरे का, नवें का, और बीसवें का मुआयना कर सके।

'सुसान्नाह रायटज़ीना !' अन्त में डाक्टर ने पुकारा। कोई बढ़कर मेज़ तक न आया।

तमाम स्त्रियाँ एक दूसरे का मुँह देखने लगीं और घुसपुस-घुसपुस करने लगीं।

'जेनेका...कहाँ है जेनेका !...'

मगर जेनेका वहाँ नहीं थी।

तब टमारा ने, जिसका डाक्टर ने अभी मुआयना खत्म किया था, आगे बढ़कर कहा :

'वह अभी नहीं आई है। वह तैयार नहीं हो पाई है। माफ़ करिये डाक्टर साहब, मैं जाकर उसे अभी बुलाये लाती हूँ।'

वह दौड़ती हुई वहाँ से गई, मगर फिर देर तक वापिस न आई। उसके पीछे पहले ऐम्मा ऐडवार्डोवना, फिर ज़ोसिया, कई छोकरियाँ और अन्त में खुद अन्ना गई।

'फ़ू, कैसी वाहियात बात है !...' ऐम्मा रास्ते में घृणा से मुँह बनाकर कह रही थी, 'हमेशा जेनेका ही ऐसी हरकतें करती है !... हमेशा यह जेनेका ही !...मेरे सब्र की हद हो गई है...'

मगर जेनेका कहीं न मिली। न तो वह अपने कमरे में थी और न टमारा के कमरे में। तमाम कमरों में उसे ढूँढ़ा गया। मकान के हर कोने में उसकी तलाश की गई, मगर वह कहीं न मिली।

'पाखाने में देखना चाहिये...शायद वहाँ गई हो?' ज़ो ने कहा।

मगर पाखाना अन्दर से बन्द था—चटखनी लग रही थी। ऐम्मा ने द्वार घूँसों से खटखटाया।

'जेनी बाहर आओ! सी मूर्खता का काम करती हो?' फिर आवाज ऊँची करके वह बेसब्री से धमकाती हुई चिल्लाई :

'सुनती है कि नहीं, सूअर?...फौरन निकल आ, डाक्टर साहब इन्तज़ार कर रहे हैं!'

मगर किसी किस्म का कोई उत्तर न मिला।

सब एक दूसरे के मुँह की तरफ डरकर देखने लगीं। सभी के दिमाग़ में एक ही विचार आया।

ऐम्मा ने द्वार का हैन्डल पकड़कर ज़ोर से धक्का दिया, मगर द्वार टस से मस न हुआ।

'सिमियन को बुलाओ!' अन्ना ने कहा।

सिमियन बुलाया गया। वह ऊँघता हुआ और सुस्त, जैसी उसकी आदत थी, आया। छोकरियों और खाला के परेशान चेहरे देखते ही उसने फौरन समझ लिया कि कोई ऐसी बात हो गई है जिसमें उसकी क्रूरता और ताकत की ज़रूरत है। उन्होंने जब उसको सारा मामला समझा दिया तो उसने द्वार का हैन्डल पकड़कर, दीवार से सटकर, ज़ोर से द्वार पर धक्का मारा।

हैण्डल निकलकर उसके हाथ में आ गया और वह जमीन पर गिरते-गिरते बच गया, मगर द्वार फिर भी न खुला।

'अच्छा, अच्छा' उसने गुर्राते हुए कहा, 'एक छुरी तो मुझे दो!'

किवाड़ों की दराज़ में से उसने अन्दर से बन्द चटखनी छुरी से छुई। धीरे-धीरे छुरी से खुरच-खुरच और घुमा-घुमाकर उसने किवाड़ों की दराज़ कुछ चौड़ी की जिसमें छुरी घुसेड़कर वह आसानी से उससे अन्दर की चटखनी छूने लगा। फिर उसने धीरे-धीरे छुरी से चटखनी

को घिसना और हिलाना शुरू किया। सब चुपचाप खड़े थे। केवल चटखनी पर छुरी की रगड़ की आवाज़ सुनाई देती थी।

आखिरकार चटखनी गिरी और सिमियन ने धक्का देकर द्वार खोल दिया।

पाखाने के बीचोंबीच छत में लगी लेम्प की रस्सी से जेनेका फाँसी लगाये लटक रही थी। उसका शरीर, जिससे जान जल्दी ही शायद निकल गई थी, लटकता हुआ धीरे-धीरे दायें-बायें घूम रहा था। उसका चेहरा नीला और लाल हो रहा था और जकड़ी हुई दाँतों में से जबान का सिरा बाहर को निकल आया था; लेम्प जिसको रस्सी में से खोलकर जमीन पर रख दिया गया था, फर्श पर गिरा पड़ा था।

किसी के मुँह से ज़ोर की एक चीख निकली और सब छोकरियाँ चिल्लाती और सिसकती हुईं, एक दूसरे को धक्का देती हुईं, भेड़ों की तरह भागीं।

डाक्टर चीखने की आवाज़ें सुनकर आया...आया, भागा नहीं। जो कुछ उसने देखा उस पर उसे आश्चर्य या उत्तेजना नहीं हुई। इतने दिनों की सरकारी डाक्टरी में उसने ऐसे बहुत से वाक़यात और दृश्य देखे थे जिससे वह इन चीज़ों का—घावों और मृत्यु का—आदी हो गया था। उसने सिमियन से जेनेका की लाश पकड़कर ज़रा ऊपर उठाने को कहा और खुद एक कुर्सी पर चढ़कर उसने उसके गले की रस्सी काट दी। उसने फौरन जेनेका की लाश जेनेका के कमरे में ले चलने का हुक्म दिया और वहाँ उसने सिमियन की मदद से, जेनेका के शरीर में मालिश करके उसके प्राण लौटाने का प्रयत्न किया। अस्तु, पाँच मिनट तक प्रयत्न करके वह रुक गया। शरीर से बिल्कुल जान निकल चुकी थी। उसने अपनी नाक पर चश्मा जो टेढ़ा हो गया था, सँभालकर रखा और बोला, 'पुलिस को रपट तैयार करने के लिए बुलाओ।'

फिर बरकेश आया और उसने अन्ना के कमरे में बैठकर उससे देर तक घुसपुस की और फिर अपनी जेब में उसने एक सौ रुपये का नोट रखा।

पाँच मिनट में रिपोर्ट तैयार हो गई और जेनेका जैसी आधी नङ्गी फाँसी पर लटकी थी, वैसी ही एक किराये की गाड़ी में, दो चटाइयों में लपेटकर अस्पताल भेज दी गई।

ऐम्मा ऐडवार्डोवना को पहले-पहल जैनेका का पत्र मेज पर रखा मिला। अपनी उस आमदनी और खर्च की किताब में से जो कानूनन हर वेश्या को रखना जरूरी था, उसने एक सफा फाड़कर उस पर पेन्सिल से बच्चों की तरह गोल-गोल अक्षरों में यह खत लिखा था जिससे यह स्पष्ट था कि आत्महत्या करने के कुछ क्षण पहले तक भी उसके हाथ काँपे नहीं थे। खत में लिखा था :

'मेरी प्रार्थना है कि मेरी मृत्यु का इलजाम किसी के सिर न मढ़ा जाय। मैं खुद अपनी जान ले रही हूँ क्योंकि एक तो मैं बुरी बीमारी का शिकार हो गई हूँ, दूसरे मैंने यह भी अनुभव है कि सभी लोग बदमाश हैं जिससे इस दुनिया में रहने की तबियत नहीं होती। मेरी चीजों का बटवारा किस प्रकार किया जाय, मैंने टमारा को बता दिया है। वह सब जानती है।'

ऐम्मा ऐडवार्डोवना टमारा की तरफ मुड़ी जो वहीं दूसरी छोकरियों के साथ खड़ी थी और मुड़कर उस पर एक रूखी व घृणापूर्ण दृष्टि डालती हुई फुसकारी :

'अच्छा तो इस नीच को सब कुछ पता था! क्यों कुतिया तुझे मालूम था कि यह क्या करनेवाली है!...फिर भी तूने मुझे नहीं बताया!...'

उसने अपनी आदत के अनुसार घुमाकर टमारा को जोर से मारने के लिए अपना हाथ बढ़ाया, मगर टमारा का चेहरा देखते ही वह

हक्का-बक्का होकर, आँखें निकाले, हाथ रोक कर जैसी की तैसी खड़ी रह गई। उसे ऐसा लगा कि वह आज टमारा को पहली ही बार देख रही थी। टमारा जो उसकी तरफ एक दृढ़, क्रोधपूर्ण और असह्य दृष्टि से देख रही थी, धीरे-धीरे नीचे से उठाते हुए आखिरकार एक चमकती हुई सफेद धातु की चीज़ उसके हक्का-बक्का मुख के बिल्कुल पास ही ले आई।

छठा अध्याय

उसी दिन शाम को अन्ना के घर में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना घटी। तमाम पेढ़ी—मय ज़मीन और मकान के, मय सारे जीवित और निर्जीव माल के—ऐम्मा ऐडवार्डोवना के हाथों में चली गई।

इस बात की चर्चा तो अक्सर इस घर में हुआ करती थी कि एक दिन अन्ना की पेढ़ी की मालकिन ऐम्मा ऐडवार्डोवना हो जायगी, परन्तु जेनी के मरते ही जब एकाएक पेढ़ी की मालकिन सचमुच ऐम्मा के हो जाने की खबर सुनाई गई तो तमाम छोकरियाँ आश्चर्य और भय से ऐसी घबरा उठीं कि काफ़ी वक्त तक वे आपे में न रहीं। इस जरमन औरत ऐम्मा के मातहत में रह चुकने के कारण वे उसकी क्रूरता, दिखावटी बड़प्पन, उसके लालच, उसकी धृष्टता और उसके कभी इस छोकरी और कभी उस छोकरी के प्रति अस्वाभाविक प्रेम से परिचित थीं। इसके अतिरिक्त यह भी सभी को मालूम था कि उन पन्द्रह हज़ार रुपयों में से, जो ऐम्मा ने अन्ना को पेढ़ी की क़ीमत के तौर पर दिये थे, पाँच हज़ार रुपये पुलिस के दारोग़ा बरकेश के थे, जिसका बहुत दिनों से मोटी ख़ाला ऐम्मा से आधा दोस्ताना और आधा व्यापारी ताल्लुक था।

ऐसे दो निर्लज्ज बेरहम और लालची जीवों के हाथों में आ जाने पर कौन-सी ऐसी मुसीबत और तकलीफ़ थी जो इन छोकरियों पर नहीं आ सकती थी ?

अन्ना मारकोवना ने अपनी पेढ़ी इतनी सस्ती इसलिए नहीं बेच डाली कि बरकेश, जो उसके जुर्मों को पहले से जानता था, जब चाहता तब उसको मुसीबत में फँसाकर हड़प कर सकता था। इस काम के लिए तो वह जब चाहता तब काफ़ी बहाने ढूँढ़ सकता था और अन्ना की पेढ़ी बन्द ही नहीं कर सकता था बल्कि उसको अदालत में भी घसीट सकता था।

सच बात यह थी कि यद्यपि अन्ना ने ऊपर से बड़ी-बड़ी ऊँह-ऊँह की और अफसोस ज़ाहिर किया, मगर दिल से वह इस सौदे पर भी खुश थी। उसे काफ़ी दिनों से लग रहा था कि अब उसका बुढ़ापा आ चला है—वह कमजोर हो चली थी और तरह-तरह की बीमारियों की शिकार होने लगी थी जिससे वह शान्तिमय जीवन बिताना चाहती थी। वे तमाम चीज़ें जिनको वह कभी अपनी जवानी में, जब वह स्वयं एक साधारण वेश्या थी, पाने का स्वप्न में भी विचार नहीं करती थी—धीरे-धीरे उसे एक-एक करके, आप से आप मिल चुकी थीं! शान्तिमय बुढ़ापा; शहर के बीचोंबीच सबसे मशहूर सड़क पर, एक सुन्दर और आलीशान मकान; एक लाख बीस हज़ार रुपये बैंक में; प्यारी बच्ची—चिड़िया–ज़िसकी अवश्य एक दिन किसी बड़े आदमी से शादी हो जायगी जो कोई इञ्जीनियर, मकानों का मालिक अथवा चुङ्गी का मेम्बर होगा क्योंकि उसके लिए अन्ना काफ़ी रुपया और क़ीमती गहने रख रही थी! अस्तु, अन्ना के लिए अब यह सम्भव था कि वह शान्तिपूर्ण अपने दिन बिताये, किसी काम की जल्दी न हो, मज़े से बैठकर भोजन करे और मीठी चीज़ें पिये, जिसका उसे बड़ा शौक़ था। उसे ज़िन्दगी में सबसे अच्छी बात यह लगती थी कि खाना खाने के बाद बैठकर, आराम से,

घर की बनी तेज़ चेरी-ब्रांडी* पिये और शाम को अपनी प्रख्यात स्त्री मित्रों के साथ बैठकर ताश खेले, जो उसके साथ कभी ऐसा व्यवहार नहीं करती थीं जिससे यह प्रगट हो सके कि वे उसका असली पेशा क्या है, जानती हैं ; मगर जो वास्तव में उसके पेशे का हाल अच्छी तरह जानती थीं वे उसके इस पेशे से इतनी अधिक आमदनी पर ईर्षा भी करती थीं। अन्ना की इन प्रख्यात मित्र स्त्रियों में, जो उसके शांति-पूर्ण बुढ़ापे का सुख और सन्तोष होनेवाली थीं, एक तो सूदखोरी करती थी ; दूसरी रेल के स्टेशन से सटे हुए एक बडे सजीव होटल की मालकिन थी ; तीसरी की एक सोने-चाँदी की दूकान थी जो बहुत बड़ी तो नहीं थी, मगर खूब चलती थी और तमाम बड़े चोरों में प्रख्यात थी। इन सबके बारे में अन्ना को भी कुछ ऐसी बातें मालूम थीं जिनसे उन्हें सज़ा हो सकती थी, परन्तु आपस में एक दूसरे के कुटुम्ब की आमदनी के ज़रियों का जिक्र वे शिष्ट नहीं समझती थीं। एक दूसरे की चतुरता, बहादुरी, सफलता और शिष्ट व्यवहार की चर्चा करना ठीक समझती थीं।

मगर इस सबके अतिरिक्त अन्ना मारकोवना को, जिसका दिमाग़ छोटा और अच्छी तरह विकसित नहीं था, चीज़ों का कुछ ऐसा अन्तर-ज्ञान-सा था कि समय से पहले ही वह दुर्घटनाओं और बदमग़ाजियों से हमेशा अपनी ज़िन्दगी में बचकर ठीक रास्ते पर चलती रही थी। अस्तु, रोलीपोली की एकाएक मृत्यु और उसके दूसरे ही दिन जेनेका की मृत्यु होने के बाद उसकी अन्तरज्ञानी आत्मा को लगा कि भाग्य जिसकी अभी तक उस पर कृपा रहने के कारण वह फलती-फूलती और आफतों से बचती रही थी, अब उसकी तरफ से मुँह मोड़ने की तैयारी कर रहा था। अस्तु, उसने ही मुँह मोड़कर भागने का निश्चय कर लिया।

---

* एक शराब का नाम।

लोग कहते हैं कि किसी मकान में आग लगने या जहाज़ के बर्बाद होने से पहिले ही चूहे उसमें से निकलकर भाग जाते हैं। न जाने चूहों में आनेवाली आपत्ति को पहले से ही जान लेने की कौन-सी शक्ति होती है। परन्तु अन्ना मारकोवना में भी इन चूहों की तरह ही कोई शक्ति थी। उसका विचार ठीक निकला। जेनी की मृत्यु के बाद से ही इस चकले पर, जो पहले अन्ना मारकोवना शैब्स का था और अब ऐम्मा ऐडवार्डोनवा टिज़नर्स का हो गया था, आफतों के पहाड़ टूटने लगे। मौतें, मुसीबतें, बदनामी और झगड़े एक के बाद दूसरे लगातार, शेक्सपीयर के दुखान्त नाटकों की तरह, घटने लगे और यही हाल कटरे के दूसरे चकलों में भी था।

ऐम्मा के हाथ में चकला आने के एक सप्ताह बाद सबसे पहली मृत्यु अन्ना मारकोवना की स्वयं हुई, परन्तु ऐसा अक्सर होता है कि लोग तीस बरस तक जो काम करते रहते हैं, उससे अलग होते ही मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं। इसी प्रकार वे वीर योद्धा भी विरामकाल शुरू होते ही मर जाते हैं जिनकी वीरता के आगे युद्धक्षेत्र में सेनायें काँपती थीं, जिनका शरीर और मन फौलाद के बने लगते थे; इसी प्रकार अक्सर सटोरिये व्यापारी भी विराम शुरू करते ही—जुये के खतरों और लोभ से अलग होते ही—मर जाते हैं; इसी प्रकार रङ्गमंचों के मशहूर खिलाड़ी, व नर्तक-नर्तकी अपना काम छोड़ कर, विराम शुरू करते ही, जल्दी-जल्दी बूढ़े होने लगते हैं, झुकने लगते हैं और निकम्मे हो जाते हैं। अन्ना की मृत्यु बड़ी अच्छी, साधुओं की-सी हुई। ताश खेलते-खेलते एक दिन उसे अपनी तबियत कुछ ठीक नहीं लगी; अस्तु उसने अपने मित्रों से ज़रा खेल रोकने की प्रार्थना की—कहा कि मैं क्षणभर लेटना चाहती हूँ—सोने के कमरे में जाकर पलङ्ग पर लेट गई, एक गहरी साँस ली और इस दुनिया से शान्तिपूर्वक उस दुनिया में चली गई। मरने के बाद उसके शान्त मुख पर एक बूढ़ी मुसकान थी। इसाय

जो जीवन-पथ पर उसका सदा सच्चा साथी रहा था और जो सदा उसके पीछे-पीछे चला था, उसकी मृत्यु के बाद मुर्झा गया और एक मास से अधिक जीवित न रह सका।

'चिड़िया' उसकी तमाम जायदाद की अकेली मालिक रह गई। उसने शहर के मकान को और शहर के छोर की ज़मीन को बड़े अच्छे दामों में बेच डाला और एक बड़े आदमी से, जैसा कि अन्ना का विचार था, सफलतापूर्वक विवाह करके वह आनन्द से रहने लगी। उसे आज तक इस बात का पक्का विश्वास है कि उसका पिता ओडेसा का एक बड़ा गल्ले का व्यापारी था जिसका एशिया माइनर से बड़ा भारी व्यापार चलता था।

× × ×

उसी दिन शाम को, जिस दिन जेनी की लाश चुपचाप चकले से ऐसे वक्त पर निकालकर, जब कि कोई मेहमान भूलकर भी वहाँ नहीं आता, अस्पताल भेजी गई थी, ऐम्मा ऐडवार्डोवना के हठ पर सभी छोकरियाँ बैठक में इकट्ठी हुईं। उनमें से एक की भी इस बात पर बड़-बड़ाने की हिम्मत नहीं हुई कि आज के अभागे दिन भी जब कि वे जेनी की भयङ्कर मृत्यु से मन में दुःखी थीं, उन्हें हमेशा की तरह सजना और बनना होगा और जाकर चमचमाती हुई बैठक में बैठना होगा जहाँ नाच नाचकर और गाना गाकर उन्हें अपने शरीरों के हाव-भाव से कामी मनुष्यों को लुभाना होगा।

उन सबके कमरे में आकर बैठ जाने के बाद ऐम्मा स्वयं कमरे में आई। आज उसकी शान हमेशा से कहीं अधिक थी। वह एक काला रेशमी चोग़ा पहने हुए थी जिसमें से उसकी बड़ी-बड़ी छातियाँ किले से तोपें दागने के स्थानों की तरह बाहर को लटक रही थीं और उन पर ऊपर से दो बड़ी ठुड्डियाँ रखी थीं। हाथों में उसके काले दस्ताने थे, गले में उसके सोने की एक भारी तीन लड़ों की जंजीर

पड़ी थी, जिसके बीच में लटकता हुआ एक भारी लटकन उसका पेट छू रहा था।

'श्रीमतियो !...' उसने शान से कहना शुरू किया।

'मैं...खड़ी हो जाओ !' उसने एकाएक हुक्म देते हुए कहा, 'मैं जब कुछ कहूँ तो तुम्हें खड़ी होकर सुनना चाहिये।'

छोकरियाँ एक दूसरे का मुँह ताकने लगीं क्योंकि ऐसा हुक्म चकले में आज उन्हें पहली बार ही मिला था। खैर, वे एक-एक करके भौंचक्की, एक दूसरे का मुँह देखती हुई उठ खड़ी हुईं।

'मैं तुम्हें यह बताना चाहती हूँ' ऐम्मा ने फिर गम्भीरता और शान से कहना शुरू किया कि 'आज से तुम्हें मुझसे उसी अदब से पेश आना चाहिये जैसे मालकिन के साथ पेश आया जाता है। आज से इस चकले की मालकिन अन्ना मारकोवना शैब्स के स्थान पर मैं—ऐम्मा वार्डोवना टिजनर—हूँ ; इसकी बाकायदा कानूनी तौर पर मालकिन हो गई हूँ। मुझे उम्मेद है कि तुम मुझसे झगड़ा नहीं करोगी और बुद्धिमान, वफादार और सुशील छोकरियों की तरह मुझसे व्यवहार करोगी। मैं तुमसे तुम्हारी माता की तरह व्यवहार करूँगी ; मगर सिर्फ एक बात याद रखना कि मैं काहिली, नशेबाजी, गुस्ताखी या झगड़े बर्दाश्त नहीं करूँगी। श्रीमती शैब्स ने—मैं तुम्हें बता देना चाहती हूँ—तुम सबको बड़ी ढील दे रखी थी। मैं तुम्हारे साथ सख्ती का व्यवहार करूँगी क्योंकि मैं नियमबद्धता को माननेवाली हूँ। यह बड़े दुःख की बात है कि रूसी लोग इतने काहिल, गन्दे और मूर्ख होते हैं। इस सबको तुम सख्ती मत समझना। मैं तुम्हारे हित के लिए ही यह सब तुम्हें सिखाना चाहती हूँ। समझती हो ? 'तुम्हारे ही हित के लिए' क्योंकि मेरा मुख्य विचार ट्रेवेल की पेढ़ी से भी बढ़कर इस पेढ़ी को बना देने का है। मैं चाहती हूँ कि हमारे यहाँ अच्छे-अच्छे और बढ़िया मेहमान आया करें न कि इधर-उधर के

लुँगाड़े विद्यार्थी और नाचने-कूदनेवाले लोग। मैं चाहती हूँ कि इस घर की छोकरियाँ तमाम दूसरे चकलों की छोकरियों से अधिक सुन्दर, अधिक सुशील, अधिक स्वस्थ और खुशमिजाज़ हों। मैं रुपया खर्च करके अच्छा से अच्छा सजावट का सामान रखना चाहती हूँ। तुम्हारे कमरों में तमाम रेशमी फर्नीचर और बढ़िया कम्बल होंगे! तुम्हारे पास आनेवाले मेहमान बीयर शराब पीनेवाले नहीं होंगे, बल्कि बोरडो और बरगण्डी की अच्छी शराबें और शैम्पेन पीनेवाले होंगे। याद रखना अमीर और काफ़ी उम्रवाले लोग तुम्हारा यह आम और भोंड़ा प्रेम पसन्द नहीं करेंगें। उन्हें तो लाल-लाल मिर्चें चाहिये; उन्हें व्यापार पसन्द नहीं होता, वे कला चाहते हैं और वह कला भी तुम जल्द ही सीख लोगी। ट्रेपेल के यहाँ एक बार के तीन रुपये और एक रात के दस रुपये लिये जाते हैं। मैं ऐसा इन्तज़ाम करूँगी कि एक बार के तुम्हें पाँच रुपये और एक रात के पच्चीस रुपये मिला करेंगे, सोना और हीरे तुम्हें भेंट में मिला करेंगे; मैं ऐसा इन्तज़ाम करूँगी कि तुम्हें बाद में छोटे चकलों में जो सिपाहियों और चोरों के अड्डे होते हैं, फिर जाने की कभी नौबत न आवेगी। मैं हर महीने तुम्हारी आमदनी में से रुपया बचाकर तुम्हारे नामों पर बैंक में जमा करा दिया करूँगी जहाँ वह तुम्हारे लिए जमा होता रहेगा और उस पर दिन पर दिन ब्याज और चक्रवृद्धि ब्याज बढ़ता जायगा। अस्तु, तुममें से कोई जब थक जायगी या किसी भले आदमी से शादी करना चाहेगी तो हमेशा उसके पास बहुत नहीं तो काफ़ी रुपया ज़रूर होगा। रीगा शहर के अच्छे चकलों में और दूसरे देशों में ऐसा प्रबन्ध किया जाता है। मैं किसी को यह कहने का मौक़ा नहीं दूँगी कि ऐम्मा ऐडवार्डोवना मकड़ी, लोमड़ी या जोंक थी; मगर मेरा हुक्म न मानने पर, काहिली करने पर, घमण्ड दिखाने पर तथा प्रेमियों से फँसने पर मैं बड़ी क्रूरता से दण्ड दूँगी और दूध की मक्खी की तरह निकालकर बाहर सड़क पर

फेंक दूँगी या उससे भी बुरी गति करूँगी। बस मुझे जो कुछ कहना था, मैं कह चुकी। नीना मेरे पास आओ और बाद में तुम सब भी बारी-बारी से आओ।'

नीना चुपचाप चलती हुई ऐम्मा के पास गई और ऐम्मा ने जब अपना हाथ उसके मुँह की तरफ़ चूमने के लिए बढ़ाया तो वह चौंक-कर पीछे को हट गई।

'मेरे हाथ को चूमो!...' शान से, दृढ़तापूर्वक, ऐम्मा ऐडवार्डोवना ने आँखें सिकोड़कर और सिर पीछे को फेंककर, तख्त पर चढ़कर बैठने-वाली महारानी की अदा से कहा।

नीना इतनी घबरा गई कि वह हाथ से सलीब का इशारा करने लगी। मगर उसने शीघ्र ही अपने को सँभाला और ज़ोर से अपनी तरफ़ बढ़े हुए ऐम्मा के हाथ को चूमकर एक तरफ़ हट गई। उसके बाद ज़ो, हेन्रीटा, वैन्डा और दूसरी छोकरियों ने भी जाकर उसी तरह उसका हाथ चूमा। केवल टमारा दीवार के पास आईने की तरफ़ अपनी पीठ किये खड़ी रही; उस आईने की तरफ़ जिसमें कभी बैठक में घूम-घूमकर जेनेका अपना रूप देखा करती और खुश हुआ करती थी।

ऐम्मा ऐडवार्डोवना ने नागिन की तरह घूरकर उसकी तरफ़ देखा, मगर उसका जादू उस पर न चला। टमारा ने चुपचाप उसकी घूरती हुई आँखों से अपनी आँखें मिला दीं; वह उससे ज़रा भी नहीं डरी, परन्तु साथ ही उसने अपने चेहरे का भाव भी नहीं बदला। नई मालकिन ने अपना हाथ नीचे गिरा दिया और चेहरे पर एक तरह की मुसकराहट लाते हुए, भर्राई हुई आवाज में कहा:

'और टमारा तुमसे मुझे कुछ बातें अलग, दिल खोलकर करनी हैं। चलो, मेरे कमरे में चलो!'

'अच्छा ऐम्मा ऐडवार्डोवना!' टमारा ने शान्ति से उत्तर दिया।

ऐम्मा ऐडवार्डोवना उठकर उस छोटे कमरे में आई, जहाँ पहले

अन्ना मारकोवना बैठकर काफ़ी और मलाई पिया करती थी। यहाँ आकर वह दीवान पर बैठ गई और अपने सामने की एक जगह पर टमारा को बैठने का इशारा किया। कुछ देर तक दोनों स्त्रियाँ चुप रहीं। वे खोजती हुई और अविश्वासपूर्ण दृष्टि से कुछ देर तक एक दूसरे को देखती रहीं।

'तुमने ठीक ही किया टमारा' ऐम्मा ऐडवार्डोवना अन्त में बोली, 'कि तुम उन भेड़ों की तरह मेरा हाथ चूमने के लिए आगे न बढ़ीं। खैर, मैंने तुम्हें खुद ही वैसा करने से रोक दिया होता। मैं तो तुम्हारा स्नेह से हाथ दबाकर–यदि तुम आगे बढ़ी होतीं–वहीं उन सबके सामने बड़ी खाला की जगह पर तुम्हें नियुक्त करना चाहती थी–समझीं ? अपनी मुख्य सहायक और बड़ी अच्छी शर्तों पर, मैं तुम्हें बनाना चाहती हूँ...'

'धन्यवाद...'

'ठहरो, ठहरो, मेरी बात मत काटो। मुझे जो कहना है, कह लेने दो, फिर तुम्हें जो कुछ कहना है, शौक़ से कह सकती हो ; मगर एक बात तो तुम कृपया मुझे समझाओ कि कल तुम मुझे पिस्तौल क्यों दिखा रही थीं ? तुम्हारा मेरी तरफ पिस्तौल करने से क्या मतलब था ? क्या तुम मुझे मार डालना चाहती थीं ?'

'उल्टी बात है ऐम्मा ऐडवार्डोवना' टमारा ने उत्तर में कहा, 'मुझे तो ऐसा लगा कि तुम मुझे पीटना चाहती थीं।'

'फू ! क्या कहती हो टमोरच्का !...क्या तुम यह नहीं जानती कि इतने दिनों से तुमसे जान-पहिचान होने पर भी मैंने तुम्हें मारना तो दूर, कभी कोई सख्त शब्द भी आज तक नहीं कहा है। क्या कहती हो, क्या कहती हो ? मैं तुम्हें इस रूसी कूड़े-कर्कट से भिन्न समझती हूँ...ईश्वर की कृपा से मुझे दुनिया का कुछ अनुभव है...मैं आदमियों को पहिचानती हूँ। मैं अच्छी तरह समझती हूँ कि तुम सचमुच एक शिष्ट जवान स्त्री हो...मुझसे भी कहीं अधिक पढ़ी-लिखी हो। तुम

चतुर हो, सुशील हो और लोगों से अच्छा व्यवहार करना जानती हो। मुझे तो यह भी विश्वास है कि तुम सङ्गीत भी बुरा नहीं जानतीं और कैसे तुमसे कहूँ, शुरू ही से मैं एक प्रकार से तुम पर आशिक्र भी रही हूँ। और तुम मुझे पिस्तौल का निशाना बनाना चाहती थीं! मुझको जो कि तुम्हारी सच्ची दोस्त हो सकती हूँ! क्यों, क्या कहती हो?'

'खैर,...मुझे कुछ नहीं कहना है ऐम्मा ऐडवार्डोवना' टमारा ने बड़ी नम्र और विश्वास दिलानेवाली आवाज में कहा, 'बात बिल्कुल सीधी-सादी थी। मैंने जेनी के तकिये के नीचे उस पिस्तौल को रखा पाया था, मैं उसे लेकर तुम्हें देने को बढ़ी, मगर तुम खत पढ़ रही थीं, जिसमें मैंने विघ्न डालना पसन्द नहीं किया। अस्तु, जब तुम खत पढ़ चुकने के बाद मेरी तरफ़ मुड़ीं तो मैंने पिस्तौल तुम्हारी तरफ़ बढ़ाया और कहना चाहती थी, 'देखो ऐम्मा ऐडवार्डोवना, मुझे यह क्या मिला!' क्योंकि मुझे इस बात पर बड़ा ही आश्चर्य हो रहा था कि जेनी के पास पिस्तौल होते हुए भी उसने फाँसी लगाकर मरने की भयङ्कर मौत क्यों पसन्द की? बस इतनी सी सारी बात थी!'

ऐम्मा ऐडवार्डोवना की भयङ्कर, झाड़ी की तरह गहन भौंहें ऊपर को उठीं; उसकी आँखें खुशी से चौड़ी हो गईं और एक उच्ची, बेलाग मुसकराहट उसके चौड़े गालों पर फैल गई। उसने जल्दी से अपने दोनो हाथ टमारा की तरफ़ बढ़ाकर कहा:

'बस, इतनी ही बात थी? हे मेरे ईश्वर! और मैंने न जाने क्या-क्या अपने मन में सोच लिया! लाओ, मुझे अपना हाथ दो टमारा, अपने नन्हे-नन्हे दूध से सफेद हाथ मुझे दो, मैं तुम्हें अपने दिल से लगाना और तुम्हें चूमना चाहती हूँ।'

उसने टमारा को सीने से लगाकर इतनी देर तक चूमा कि वह घबरा उठी और बड़ी मुश्किल से अपने आपको उसके आलिङ्गन से छुड़ा सकी।

'अच्छा, अब मतलब की बातें करें। देखो, मैं तुम्हें इन शर्तों पर बड़ी ख़ाला बनाती हूँ। तुम घर का इन्तज़ाम देखोगी और जो कुछ मुनाफ़ा मुझे होगा, उसमें से पन्द्रह फ़ीसदी मैं तुम्हें दूँगी। समझीं टमारा? पन्द्रह फीसदी तुम्हारा हिस्सा और इसके अलावा तुम्हें खर्च के लिए तीस-चालीस या पचास रुपये तक माहवार और वेतन अलग दूँगी! क्यों, हैं न बहुत अच्छी शर्तें? मुझे पूरा यक़ीन है कि तुम ही मेरे इस चकले को न सिर्फ इन तमाम शहर में बल्कि सारे दक्षिण रूस में, सबसे बढ़िया और शानदार चकला बनाने में मदद कर सकती हो। तुम शौक़ीन तबियत हो और चीज़ों को समझती हो!...इसके अलावा तकल्लुफ़ी-मेहमानों को खुश कर सकती हो। कभी-कभी कोई बहुत बड़ा मेहमान, जिसको रूसी लोग सुनहरी मछली कहते हैं, तुम पर मोहित हो जाय, क्योंकि तुम इतनी सुन्दर हो प्यारी टमोरच्का—मालकिन ने मोठी आँखों से उसे देखते हुए कहा—तो तुम भी उसके साथ आनन्द कर सकती हो। मुझे उसमें कोई उजर न होगा। सिर्फ अपने रुतबे का, अपने ओहदे का ख्याल रखते हुए...वह जोश में भरकर जरमन भाषा बोलने लगी...तुम जरमन भाषा तो अच्छी तरह समझती हो न?'

'मैं जरमन फ्रान्सीसी भाषा से भी कम जानती हूँ, मगर थोड़ी-बहुत बातचीत कर सकती हूँ।' टमारा ने जरमन भाषा में उत्तर दिया।

'वाह, क्या कहने हैं!...तुम बिल्कुल रीगावालों की तरह जरमन बोलती हो! रीगावाले ही सबसे सही जरमन बोलते हैं। अच्छा, तो अब मैं अपनी मातृभाषा में ही तुमसे बातें करूँगी, क्योंकि अपनी मातृभाषा में बोलना मुझे बड़ा प्रिय है; ठीक है न?'

'अच्छा!' टमारा ने जरमन में उत्तर देना शुरू कर दिया।

'अच्छा तो इन 'सुनहरी मछलियों' को खूब देर तक छकाकर,

अन्त में मानो बड़ी अनिच्छा से, मानो सचमुच उनके प्रेम में पड़कर, क्षणिक लोभ से, मानो मुझसे छिपाकर तुम उनकी बात मान लेना। समझती हो? वे मूर्ख इसके लिए बड़ा रुपया देते हैं। ख़ैर, मैं समझती हूँ यह सब मुझे तुमको सिखाना नहीं पड़ेगा!' उसने अपनी मातृभाषा में बड़े उत्साह से कहा।

'हाँ, प्रिय श्रीमतीजी। बातें तो तुम बड़े पते की कहती हो, मगर अब यह कोरी बातें ही नहीं हैं...इन पर अमल करना होगा जिसमें सोचने और समझने की ज़रूरत है।' टमारा इतना उत्तर जरमन भाषा में देकर फिर रूसी भाषा में बोली, 'अस्तु रूसी भाषा में ही बातचीत करना मुझे आसान पड़ेगा...मैं आपकी आज्ञा हर तरह से मानने को तैयार हूँ।'

'हाँ, तो मैं तुमसे तुम्हारे प्रेमी के बारे में कह रही थी!...मैं तुम्हें उस आनन्द से वंचित रखने की हिम्मत तो नहीं करूँगी...मगर हमें इस मामले में होशियारी से काम करना होगा। उसे यहाँ नहीं आना चाहिये, अथवा जितना कम हो सके उतना सिर्फ़ गाहे-बगाहे आना चाहिये। मैं बाहर जाने के लिए तुम्हारे दिन मुकर्रर कर दूँगी; जब तुम चाहे जो चाहो सो कर सकोगी, मगर बहतर तो यही होगा कि तुम किसी से भी न फँसो। तुम्हारा भी इसी में भला है क्योंकि वह एक बड़े बोझ के सिवाय और कुछ नहीं होता। मैं यह तुमसे अपने अनुभव से कह रही हूँ। थोड़े दिन ठहर जाओ। तीन-चार ही वर्ष में हम लोग इस पेढ़ी का व्यापार ऐसा बढ़ा देंगे कि तुम्हारे पास अपना काफ़ी रुपया हो जायगा। फिर मैं तुम्हें अपना पक्का साझीदार ही इस काम में कर लूँगी। दस वर्ष के बाद भी तुम काफ़ी ख़ूबसूरत और जवान होगी और फिर तुम चाहे जितने मर्दों को प्यार करो, ख़रीदो और मज़े करो। उस वक़्त तक तुम्हारे दिमाग़ से जवानी की सारी बेवकूफ़ियाँ भी निकल चुकी होंगी और तब तुमको मर्द नहीं चुनेंगे बल्कि तुम मर्दों को छाँट-छाँटकर चुना

करोगी जैसे जानकार जौहरी हीरे-मोतियों को चुन-चुन कर ले लेता है। क्यों, मैं सच कहती हूँ न ?'

टमारा ने आँखें नीची कर लीं और थोड़ा मुसकराकर बोली 'बहुत सच और अनुभव की बातें कहती हो ऐम्मा ऐडवार्डोवना ; मैं अपने प्रेमी को छोड़ दूँगी, मगर फौरन नहीं छोड़ सकती। कम से कम मुझे इस काम के लिए दो हफ़्तों की ज़रूरत होगी। मैं कोशिश करूँगी कि वह यहाँ न आया करे। मैं तुम्हारी बात मानती हूँ।

'बहुत अच्छा, टमोरच्का !' ऐम्मा ऐडवार्डोवना ने उठते हुए कहा, अच्छा तो अब हमारा-तुम्हारा वायदा पूरा है, आओ इस पर बोसे की मुहर लगा दें।'

यह कहकर उसने फिर टमारा को सीने से लगाकर ज़ोर-ज़ोर से चूमना शुरू कर दिया। टमारा नीची निगाह किये खड़ी, भोली-भाली एक जवान छोकरी-सी लग रही थी। आखिरकार मालकिन से अपने आपको छुड़ाकर टमारा रूसी भाषा में बोली :

'देखो, ऐम्मा ऐडवार्डोवना, मैंने तुम्हारी सब बातें मान ली हैं, मगर एक प्रार्थना तुम्हें मेरी माननी होगी। मैं तुम्हारा खर्च कराना नहीं चाहती। सिर्फ तुम मुझको और दूसरी सब छोकरियों को जेनी की लाश के साथ-साथ कब्रस्तान तक चले जाने की इजाजत दे दो।'

ऐम्मा ऐडवार्डोवना का चेहरा सूख गया।

'आह, अगर तुम ऐसा ही करना चाहती हो, मेरी प्यारी टमारा, तो मैं उसका विरोध नहीं करूँगी ; मगर तुम ऐसा करना क्यों चाहती हो ? इससे मृतक को न तो कोई लाभ ही पहुँच सकता है और न वह फिर जी सकती है। सिर्फ अपने मन को दुखी करोगी...खैर, जैसी तुम्हारी मर्जी ! मगर शायद तुम्हें मालूम ही है कि रूसी कानून के अनुसार आत्महत्या करनेवाले दफ़नाये नहीं जाते हैं—मुझे निश्चय नहीं मालूम—मैंने सुना है कि कब्रस्तान के उस पार किसी गढ़े में उन्हें फेंक दिया जाता है।'

'नहीं, जैसा मैं करना चाहती हूँ मुझे कर लेने दो। मेरी बेवकूफी ही सही, मगर मेरी यह बात मान लो मेरी प्यारी मीठी ऐम्मा ऐडवार्डोवना मैं तुमसे वायदा करती हूँ कि यह मेरी आखिरी बेवकूफी होगी। फिर मैं ऐसा कभी न करूँगी। हमेशा तुम्हारी ही बात माना करूँगी जैसे सिपाही अपने अनुभवी अफ़सर का हुक्म बजाते हैं।'

'अच्छा!' ऐम्मा ऐडवार्डोवना ने एक गहरी साँस भरते हुए स्वीकार कर लिया, 'मैं तुम्हें कोई भी चीज़ इनकार नहीं कर सकती मेरी प्यारी! लाओ अपना हाथ मुझे दो। हम तुम दोनों को मिलकर एक दूसरे की भलाई के लिए परिश्रम करना चाहिये।'

यह कहकर उसने कमरे का द्वार खोलकर ज़ोर से आवाज दी 'सिमियन!' और जब सिमियन आ गया तो बड़ी शान से उसे हुक्म दिया :

'हमारे लिए एक बोतल शैम्पेन की लाओ...असली शैम्पेन...बर्फ में ठण्ढी की हुई। जल्दी!' उसने डपटकर दरवान से कहा जो आँखें निकालकर उसकी तरफ भौंचक्का घूर रहा था। 'आओ टमारा, अपने नये सम्बन्ध और व्यापार को खुशी में बैठकर साथ-साथ एक बोतल शैम्पेन की पियें!'

'बड़ी खुशी है मेरी प्यारी ऐम्मा।' टमारा ने उत्तर में कहा, 'तुमने मेरा रास्ता रोशन कर दिया है! हममें से सचमुच कोई भी तुम्हें इतना उदार और बुद्धिमान नहीं समझता था। अब मेरी समझ में आया कि तुम सिर्फ हम लोगों से नियमबद्धता के लिए सख्ती करती थीं...सिर्फ नियमबद्धता हमसे चाहती थीं। क्यों ठीक है न?'

'छोड़ो, छोड़ो!' ऐम्मा ने खुशामद से खुश होकर कहा 'छोड़ो, उसका जिक्र!'

शैम्पेन पी चुकने के बाद टमारा बोली 'और अब मेरी प्यारी मालकिन मैं तुमसे कुछ चाहती हूँ...'

'कहो, कहो, खुशी से कहो ! मुझे बड़ी खुशी है कि तुम मुझसे कुछ चाहती हो। मुझे लगता है कि फिर मुझसे तुम कोई और बेवकूफी की बात नहीं कहोगी। अस्तु, जो कुछ तुम कहोगी उसे मैं पहले से ही माने लेती हूँ।'

'देखिये, मैं अच्छी तरह समझती हूँ' टमारा कहने लगी, 'कि मैं तुम्हारी नौकरानी की तरह रहूँगी...'

'सहायक की तरह।' ऐम्मा ने स्नेह-पूर्वक सुधारा।

'यह तुम्हारी मेहरबानी है,' टमारा ने उसकी तरफ सिर झुकाकर कहा, 'मगर तुमने अभी कहा कि खास मौकों पर कुछ बड़े आदमियों को मैं फँसाकर खूब दुह सकती हूँ !'

'हाँ, हाँ, ज़रूर।'

'अस्तु, मैं तुमसे प्रार्थना करूँगी कि मुझे कुछ रुपया पेशगी देने की इनायत करो। तुम यह तो मानोगी ही कि जिस तरह का ठाट-बाट का यह घर अब तुम बनाना चाहती हो उसमें मुझे काफी शान-बान से रहना उचित होगा। अस्तु, मैं अपने लिए कुछ अच्छे कपड़े, फीते और इत्र खरीदना चाहती हूँ...'

ऐम्मा खुशी से फूल उठी।

'आह मेरी प्यारी टमारा, तुम मेरे विचारों को उड़ान में ही पकड़ लेती हो !'

'मुझे यह जानकर बड़ी खुशी है। फौरन ही मुझे अपने कपड़े ठीक करने पड़ेंगे, मगर मुझे अफसोस है कि मेरे पास इस वक्त उसके लिए रुपया नहीं है...'

'आह, मेरी प्यारी, मैं ऐसे मामले में छोटा दिल नहीं दिखाऊँगी ! कहो, कहो, तुम्हें कितने रुपये चाहिये ?'

'दो...मैं समझती हूँ दो सौ रुपये काफी होंगे !' टमारा ने झिझकते हुए कहा।

'तीन सौ लो !'

टमारा ने बनकर ऐम्मा को चूम लिया।

फिर जब वह ऐम्मा से रुपया लेकर चली तो मन ही मन दयार्द्र होकर सोचने लगी 'चलो अब हम एक स्त्री को, जिसे हम प्यार करते हैं, इन्सान की तरह दफना सकेंगे।'

लोग कहते हैं कि प्रेतात्माएँ लाभदायक होती हैं। अगर इस बात में कुछ भी सत्य है तो आज इस शनिवार से अधिक अच्छा उसकी सत्यता का प्रदर्शन नहीं हो सकता था। आज रात को जितनी मेहमानों की भीड़ इस चकले में रही उतनी किसी शनिवार को भी नहीं रहती थी। यह सच ज़रूर है कि छोकरियाँ जेनेका के कमरे के सामने से निकलती हुई जल्दी-जल्दी चलने लगती थीं, काँपती हुई तिरछी नज़रों से उस कमरे की ओर देखती थीं और कुछ भगवान का नाम भी लेने लगती थीं; मगर काफी रात बीत जाने पर मृत्यु का भय किसी तरह खत्म हो गया, सहन करने योग्य हो गया। तमाम कमरे घिर गये थे। बैठक में एक नया नौजवान बेला बजानेवाला, जिसकी आँख में फुली थी और जिसको पियानो का उस्ताद कहीं से ढूँढ़ कर ले आया था, लगातार बेले की धुन पूर रहा था।

टमारा की ख़ाला के पद पर नियुक्ति छोकरियों ने आश्चर्य से सुनी और चुपचाप मुँह बनाने लगीं। मगर टमारा ने कुछ दिन ठहरकर, मौका पाते ही एक दिन नन्ही मनका के कान में कहा :

'सुनो मनका, तुम सबसे कह देना कि वे इस बात का बिल्कुल ख्याल न करें कि मैं अब ख़ालाजान हूँ। किसी को ख़ाला होना ही था। छोकरियों के जो जी में आवे करें, सिर्फ मुझसे भिड़ें नहीं। मैं पहले की तरह ही उनकी मित्र और सहायक हूँ...आगे भगवान मालिक है !'

सातवाँ अध्याय

दूसरे दिन रविवार को टमारा को बहुत-से काम थे उसने अपनी मित्र को, कुछ भी हो, इस तरह दफ़नाने का दृढ़ संकल्प कर लिया था जिस तरह कि कोई अपने नजदीक से नजदीक और प्यारे से प्यारे को दफ़नाता है—ईसाई धर्म के रिवाज के अनुसार उसी दुःखपूर्ण गम्भीरता के साथ जिससे दुनियादार आदमी दफ़नाये जाते हैं।

वह उन विचित्र लोगों में से थी, जिनके ऊपरी सुस्त, शान्त, लापरवाह, गम्भीर, कछुए की गर्दन की तरह अपने अहंभाव को अन्दर कर लेने के स्वभाव के पीछे एक अथाह शक्ति होती है, जो सोती रहती है और आधी आँखें खोले मानो अपने आपको खर्च होने से बचाती रहती है, परन्तु जो ज़रूरत पड़ने पर विघ्नों और बाधाओं की चिन्ता न करके झपट पड़ने को तैयार रहती है।

बारह बजे वह एक मोटर-गाड़ी में बैठकर पुरानी बस्ती में गई और एक तङ्ग गली में होते हुए एक मैदान में जा पहुँची जहाँ पैंठ लगती थी। वहाँ पहुँचकर वह एक गन्दी चाय की दूकान के आगे

रुकी और गाड़ीवाले से वहीं ठहरे रहने को कहा। दूकान में घुसकर उसने एक लाल-लाल रीछों के से बालोंवाले छोकरे से, जिसने अपनी माँग ठीक रखने के लिए बालों में मक्खन चुपड़ा हुआ था, पूछा कि सेनका तो यहाँ नहीं आया था ? उस छोकरे ने, जिसकी बातों और खातिरदारी से ऐसा लगा कि वह टमारा को बहुत दिनों से जानता था, कहा कि 'नहीं श्रीमतीजी, सेमेन इगानिश अभी तक नहीं आया है और न उसके शीघ्र ही आज आने की आशा है क्योंकि कल वह सैर-सपाटे में गया था ; जहाँ से रात को बहुत देर में लौटा था। वह अपने कमरे पर ही होगा। अगर आपका हुक्म हो तो मैं उसे जाकर अभी यहाँ बुला लाऊँ।'

टमारा ने एक कागज और पेन्सिल माँगकर, वहीं खड़े-खड़े एक खत सेनका को लिखा। वह खत उसने उस छोकरे को सेनका के पास पहुँचा देने के लिए दिया और उसको आठ आना इनाम देकर गाड़ी में बैठकर चल दी।

वहाँ से वह कलाविद रोविन्सकाया के पास गई, जो टमारा को बहुत दिनों से मालूम था, शहर के सबसे मशहूर 'यूरूप' नाम के होटल में कई-कई बड़े-बड़े कमरे लेकर रहती थी। कलाविद से मिलना आसान काम नहीं था। नीचे दरवान ने कहा कि शायद वे कमरे में नहीं है, बाहर गई हैं। ऊपर पहुँचने पर, कमरे का द्वार टमारा ने जब खटखटाया तो नौकरानी ने अन्दर से निकलकर कहा कि श्रीमतीजी के सिर में दर्द हो रहा है, जिससे वह किसी से मिल नहीं सकती। फिर टमारा को मजबूर होकर एक कागज़-पेन्सिल मँगाकर खत लिखना पड़ा :

'मैं उस घर से, जिसका नाम ज़ोर से नहीं लिया जाता, उस छोकरी के पास से आई हूँ, जो एक रोज़ तुम्हारा सङ्गीत सुनकर, तुम्हारे पास घुटनों पर गिरकर रोने लगी थी। तुमने उसके साथ उस रोज़ जो

व्यवहार किया था, बड़ा ही उच्च और सुन्दर था। क्या उसकी आपको याद है ? आप डरिये नहीं, उसे अब किसी की सहायता की ज़रूरत नहीं है, क्योंकि कल वह मर गई ; मगर आप उसकी यादगार में एक बड़ा ख़ास काम कर सकती हैं। जिसमें आपको कोई कष्ट न होगा। मैं वही छोकरी हूँ जिसने अपनी मूर्खता में आपकी साथिन बैरोनेस को बहुत-सी बुरी-भली बातें कह डाली थीं—जिनके लिए मैं आज भी लज्जित हूँ और माफ़ी चाहती हूँ।'

'लो, यह ख़त ले जाकर दे दो!' उसने नौकरानी से कहा।

नौकरानी दो मिनट में लौट आई। आकर बोली :

'श्रीमतीजी ने आपको अन्दर ही बुलाया है, मगर उन्होंने माफ़ी चाही है कि वह आपसे लेटे-लेटे ही मिल सकेंगी।'

वह टमारा को अपने साथ लेकर एक द्वार तक गई और उसे खोलकर टमारा को अन्दर करके, द्वार धीरे से फिर बन्द कर दिया।

कलाकारनी एक बड़े तुर्की तख़्त पर लेटी हुई थी, जिस पर एक बड़ा बेशक़ीमती कालीन बिछा था और उसके चारों तरफ़ रेशमी तकिये और मसनद लगे थे। उसके पैर सफ़ेद रुपहले फ़रों[1] से ढके हुए थे। उसकी उङ्गलियों में बहुत-सी अँगूठियाँ थीं जिनमें जड़े हुए हरे-हरे पन्ने चमक चमककर आँखों को अपनी ओर खींचते थे।

कलाकारनी के लिए आज का दिन अच्छा नहीं था। कल सवेरे थियेटर के मैनेजर से उसकी तू-तू-मैं-मैं हो गई थी और कल शाम को जनता ने उसका वैसा अच्छा स्वागत नहीं किया था, जैसा कि वह चाहती थी कि उन्हें करना चाहिये था—कम से कम उसे ऐसा लगा था और आज के अख़बार में एक मूर्ख आलोचक ने, जिसको कला का इतना ही ज्ञान लगता था जितना बैल को ज्योतिष का, उसकी प्रतिद्वन्द्वी टिटानोवा नाम की कलाकारनी की एक बड़ा लेख लिखकर बेहद तारीफ़ की थी।

---

१. बालदार खालें।

ऐलेना विक्टोरोव्ना ने यह मान लिया था कि आज उसका सिर दुःखता है ; कनपटियों के पास की रगों में चटचट होती है और दिल धड़क-कर एकाएक बैठने लगता है।

'कहो कैसी हो, मेरी प्यारी ?' टमारा के कमरे में घुसते ही वह कुछ कुछ नाक के स्वर से धीमी, कमज़ोर, गिरती और ठिठकती हुई आवाज़ से इस प्रकार बोली जैसे नाटक में अभिनेत्री प्रेम अथवा क्षयरोग से मरती हुई बोलती हैं, 'यहाँ बैठो,...मैं तुम्हें देखकर बड़ी खुश हूँ... नाराज़ मत होना...मैं उठ नहीं सकती...सिर के दर्द और दिल की बीमारी से मरी जा रही हूँ। माफ़ करना, मुझे बोलने में भी तकलीफ़ होती है। मैं समझती हूँ कि मैंने बहुत गाया जिससे मेरी आवाज़ बैठ गई है।...'

रोविन्स्काया को उस दिन की चकले में जाने की अपनी बेवकूफी और टमारा की याद अच्छी तरह आ रही थी, मगर आज पतझड़ का थकानेवाला और सूखा दिन होने से और उसका मन ठीक न होने से उसे अपनी उस रोज़ की हरकत व्यर्थ की डींग-सी लगी, जो कि कृत्रिम, कल्पित और लज्जित और दुखी करनेवाली थी। मगर साथ ही उसे सचमुच वह संध्या सच्ची भी लगी जिसमें उसने अभिमानी जेनेका का सिर अपनी कला के ज़ोर से अपने आगे झुकवा लिया था—इस समय भी जब उसने उस शाम की याद थकावट, आलस्य और कलाविद की घृणा से की तब भी उसे वह संध्या सच्ची ही लगी। वह दूसरे तमाम प्रख्यात कलाविद और कलाकारनियों की तरह हमेशा अभिनय ही करती रहती थी—कभी आत्म-स्थित नहीं रह पाती थी, हमेशा हर काम में अपने आप को अभिनेत्री के स्थान पर रखकर, स्वयं दर्शक की तरह दूर से अपने शब्दों को स्वयं सुनने और अपने हाव-भावों और कामों को देखने का प्रयत्न करती रहती थी।

उसने सुस्ती से अपना पतला और सुन्दर हाथ तकिये से उठाया

और माथे पर रखा, जिससे उसके हाथ की अँगूठियों के रहस्यपूर्ण और पन्ने ऐसे हिलकर चमके मानो उनमें जान हो।

'मैंने अभी तुम्हारे खत में पढ़ा कि वह बेचारी...माफ़ कीजिये, उसका नाम मुझे याद नहीं रहा...'

'जेनी।'

'हाँ, हाँ, धन्यवाद ! अब मुझे याद आ गया। वह मर गई ! कैसे मरी ?'

'फाँसी लगा ली...कल सुबह जब डाक्टर मुआयने के लिए आया तब उसने अन्दर जाकर फाँसी लगा ली...'

रोविन्सकाया की आँखें, जो निरी निर्जीव और मुर्झाई हुई दीख रही थीं, एकाएक विस्फारित हो गईं और ऐसी जैसे कोई करिश्मा हो गया हो, सजीव होकर हरी-हरी चमकीं जैसी उसकी अङ्गूठियों में लगे हरे-हरे पन्ने चमक रहे थे—उनमें कौतुक, भय और घृणा की झलक थी।

'हाय ईश्वर ! ऐसी प्यारी, ऐसी सुन्दर, ऐसी जोशीली...हाय बेचारी, हाय बेचारी ! उसने ऐसा क्यों किया ?'

'आप जानती ही हैं...उसने आपसे कहा था...उसको वह बुरी बीमारी हो गई थी जिससे उकताकर...'

'हाँ, हाँ...मुझे याद है उसने कहा था...मगर उससे उकताकर फाँसी !...क्या भयङ्कर काम उसने कर डाला !...मैंने उसको तभी इलाज कराने की सलाह दी थी। आजकल दवायें करिश्मे करती हैं। मैं कई ऐसे आदमियों को जानती हूँ जो इलाज कराकर बिल्कुल... बिल्कुल अच्छे हो गये हैं। समाज में सभी उनकी इस बीमारी का हाल जानते हैं और उनका स्वागत करते हैं...हाय बेचारी ! व्यर्थ में ही फाँसी लगाकर मर गई !'

'अस्तु, मैं आपके पास आई हूँ, ऐलेना विक्टोरोवना। मैं आपको हरगिज़ तक़लीफ देने की हिम्मत नहीं करती, मैं बड़ी परेशानी में हूँ,

और मेरा कोई ऐसा नहीं है जिसके पास जाकर मैं सहायता ले सकूँ। आपने उस रोज़ हम लोगों पर इतनी दया, इतनी कृपा, इतना स्नेह... जिससे मैंने आपसे सिर्फ सलाह लेने की और शायद आपके असर का फायदा उठाने और आपकी शरण लेने की हिम्मत की है...'

'आह, मेरी प्यारी!...जो कुछ मैं कर सकती हूँ, करूँगी...हाय, मेरा सिर कैसा दुखता है!...और इस भयङ्कर खबर को सुनकर तो और भी! कहो, कहो मैं तुम्हारी क्या सहायता कर सकती हूँ?'

'सच तो यह है कि मुझे खुद यह नहीं मालूम', टमारा ने उत्तर में कहा, 'देखिये वे लोग उसकी लाश को अस्पताल उठा ले गये हैं... मगर जब तक पुलिस ने रपट बनाई और लाश को ले वह जाकर अस्पताल पहुँची, तब तक क़रीब-क़रीब शाम हो चुकी थी और लाशें लेने का वक्त खत्म हो चुका था। अस्तु मेरा ख्याल है कि लाश अभी तक वैसी ही रखी है। उसकी चीरफाड़ नहीं हुई है। मैं चाहती हूँ कि उसे चीरा-फाड़ा न जाय...वैसी ही रहने दी जाय। आज रविवार है। आज भी शायद वे कुछ न करेंगे। अस्तु, कल तक का समय हमारे पास इस काम को रोक देने के लिए है...'

'मैं कुछ कह नहीं सकती, मेरी प्यारी...ठहरो!...मैं सोचती हूँ शायद डाक्टरों या प्रोफेसरों में मेरा कोई ऐसा मित्र निकल आवे जो इस काम में मदद कर सके।...मैं अभी अपनी नोटबुक में लिखे मित्रों के नाम देखती हूँ...शायद उनमें कोई ऐसा निकल आवे जो इस काम में कुछ कर सके।'

'इसके अलावा', टमारा कहने लगी, 'मैं उसको दफ़न भी करना चाहती हूँ...अपने खर्च पर...मैं मरते दम तक उसे दिल से प्यार करती रही हूँ...'

'मैं उसमें तुम्हारी रुपये-पैसे से सहायता कर सकती हूँ...'

'नहीं, नहीं!...हज़ार धन्यवाद!...मैं सारा खर्च द ही करूँगीखु।

मैं आपकी कृपा का ज़रूर फ़ायदा उठाती मगर...इस मामले में... आशा है आप बुरा न मानेंगी...इस मामले में मैं किसी की सहायता लेना पसन्द न करूँगी...मैं ख़ुद अपने ख़र्च से उसका सारा क्रिया-कर्म करूँगी क्योंकि इसे मैं अपना उसके प्रति और उसकी याद में अपना धर्म समझती हूँ। मुख्य कठिनाई यह है कि उसको क्रिया-कर्म के साथ दफनाया कैसे जाय। वह धर्म में विश्वास नहीं करती थी या बहुत थोड़ा ही करती थी, मैं भी आज इत्तफ़ाक से ही धर्म-कर्म में भाग लूँगी; परन्तु मैं यह नहीं चाहती कि उसको कुत्ते की तरह कब्रस्तान के उस पार, चुपचाप, बिना प्रार्थना या भजन के यों ही दफ़ना दिया जाय... मालूम नहीं, क्या वे उसे इस प्रकार बाजे-गाजे और पुरोहितों के साथ दफ़नाने देंगे? इस मामले में आपकी सलाह और मदद की ज़रूरत है। आप जो ख़ुद कर सकती हैं, ख़ुद करें या मुझे कहीं और किसी के पास भेजें तो मैं वहाँ जाने को तैयार हूँ।'

अब धीरे-धीरे रोविन्सकाया को रस आने लगा था और वह अपनी थकान और सिर का दर्द और चौथी सीन में अभिनेत्री की क्षय से मृत्यु का अभिनय भूलने लगी थी। वह अब अपने आपको एक पतित स्त्री की कृपालु सहायक और रक्षक के स्वरूप में मन ही मन देखने लगी थी। अपना यह स्वरूप उसे अपने मन में बड़ा मौलिक, सुन्दर, नाट्यपूर्ण और दुःख से भरा लग रहा था। रोविन्सकाया अपने दूसरे बहुत से साथियों की तरह; एक दिन और हो सके तो एक घण्टा भी, ऐसा नहीं गुज़ारना चाहती थी, जब कि वह भीड़ से अलग रह जाय। वह चाहती थी कि तमाम लोग उसकी ही बातें करते रहें, अतएव एक दिन वह देश-भक्तों के जलूस में शरीक होती तो दूसरे दिन किसी सभा के मंच से साईबेरिया भेजे जानेवाले देशभक्तों की सहायता में जोशीली कवितायें पढ़ती। कभी वह बड़े आदमियों के खेलों में अस्पतालों की सहायता के लिए फूल बेचती तो कभी नाचघरों में

शैम्पेन बेचती। वह ऐसे मौक़ों पर गाने के लिए छोटे-छोटे गीत पहले से सोचकर चुन रखती थी जो कि उसके गाने के बाद फिर गली-कूचों में हर तरफ़ गाये जाने लगते थे। वह चाहती थी कि हर जगह और हमेशा भीड़ सिर्फ़ उसकी तरफ़ ही देखे, उसीका नाम ले, उसी की मिश्रानी हरी-हरी आँखों और उसके लोभी और उत्तेजक मुँह को और उसकी पतली-पतली उङ्गलियों के ऊपर जड़े हुए पन्नों को सराहती रहे।

'मेरी अच्छी तरह समझ में यह सब नहीं आ रहा है' कुछ देर तक चुप रहकर वह बोली, 'मगर जिस काम के करने की हृदय से इच्छा की जाती है वह हो ही जाता है और मैं तुम्हारी मदद हृदय से करना चाहती हूँ। ठहरो, ठहरो!...एक बड़ी अच्छी बात मुझे याद आ रही है...उस दिन मैं जब तुम्हारे यहाँ गई थी तब बैरोनेस के अलावा मेरे साथ कोई और भी तो था?...'

'हाँ, मगर मैं नहीं जानती कि वे लोग कौन थे...एक उनमें से आप सबके कुछ देर बाद कमरे से निकलकर गया था। उसने जेनी का हाथ चूमकर कहा था कि कभी ज़रूरत पड़े तो मुझे याद करना, मैं तुम्हारा हमेशा सहायक रहूँगा। यह कहकर उसने अपना कार्ड जेनी के हाथ में दे दिया था, मगर उसने जेनी से कहा था कि वह उस कार्ड को किसी और को कभी न दिखाये, मगर बाद में फिर उसका कभी किसी को ख्याल भी न रहा। न मैंने ही कभी जेनी से पूछ पाया कि वह कौन था। कल मैंने जेनी के सामान में उस कार्ड को बहुत ढूँढ़ा, मगर वह न मिला...'

'ठहरो!...ठहरो!...मुझे याद आ गया!' रोविन्सकाया ने एकाएक उत्साह से कहा, 'आहा!' उसने जल्दी से तख्त पर से उठते हुए कहा, 'रायज़ानॉव था!...हाँ, हाँ, हाँ...वकील अन्र्स्ट ऐन्ड्रीविश रायज़ानॉव! सब ठीक हो जायगा। यह बड़ा अच्छा रहा!'

वह उस छोटी मेज़ की तरफ़ घूमी जिस पर टेलीफोन रखा हुआ था और टेलीफोन की घण्टी बजाकर बोली :

'सेन्ट्रल—१८-३५...कृपया...हेलो !...अर्न्स्ट ऐन्ड्रीविश को टेलीफोन पर बुलाओ। कहो रोबिन्सकाया बुलाती है...धन्यवाद...हेलो! अर्न्स्ट ऐन्ड्रीविश बोलते हो ? बहुत अच्छा, बहुत अच्छा, लेकिन छोटे हाथों का काम नहीं है। तुम कुछ कर नहीं रहे हो न ?...बेवकूफ़ी की बातें छोड़ो !...गम्भीर मामला है। क्या तुम पन्द्रह मिनट के लिए फ़ौरन यहाँ नहीं आ सकते ?...नहीं, नहीं... हाँ...सिर्फ एक मिहरबान और होशियार आदमी की तरह। अपनी बदनामी खुद क्यों करते हो... अच्छा, बहुत अच्छा, सच...मैं ठीक तरह कपड़े नहीं पहिने हूँ, मगर उसका कारण है...मेरा सिर दुख रहा है। नहीं, एक स्त्री, एक लड़की...तुम खुद ही आकर देख लोगे। जितना शीघ्र हो सके, आ जाओ।...धन्यवाद ! बन्दगी !...'

'वह अभी आता है', रोबिन्सकाया ने टेलीफोन रखते हुए कहा, 'वह बड़ा सुन्दर और चतुर आदमी है। वह सब कुछ कर सकता है... सब कुछ उसके लिए सम्भव है...जो किसी को सम्भव नहीं है वह भी उसे सम्भव है...मगर तब तक...माफ़ कीजिये...आपका नाम ?'

टमारा शर्मा गई, मगर फिर अपने ऊपर मुसकराती हुई बोली :

'मेरा नाम आपके जानने लायक नहीं है, ऐलेना विक्टोरोव्ना ! मेरा नाम टमारा है...असली नाम तो ऐनास्टासिया निकोलेवना है, मगर एक ही बात है—आप मुझे टमारा कहकर पुकारिये...क्योंकि उसी नाम से पुकारे जाने की मैं अधिक आदी हूँ...'

'टमारा !...बड़ा सुन्दर नाम है !...अच्छा श्रीमती टमारा, तो शायद आपको मेरे साथ नाश्ता करने में कोई उज्र तो नहीं होगा ? शायद रायजानॉव भी हम लोगों के साथ नाश्ता करेगा...'

'माफ़ कीजिये, मेरे पास नाश्ते के लिए वक्त नहीं।'

'यह बड़े अफ़सोस की बात है !...अच्छा, तो मुझे आशा है आप फिर कभी आयेंगी...शायद आप सिगरेट पीना पसन्द करेंगी।' यह कहते हुए उसने अपना सिगरेट रखने का सोने का डिब्बा, जिसके ऊपर पन्ने में उसके नाम का पहिला अक्षर 'ई' बना था टमारा की तरफ़ बढ़ाया।

इतने में रायज़ानॉव भी आ गया।

टमारा ने उस रोज़ ध्यान से उसे नहीं देखा था। आज उसकी शक्ल-सूरत देखकर वह दङ्ग रह गई। क़द का लम्बा, बदन गठा हुआ, प्रख्यात संगीत-शास्त्री बीथोवन की तरह घनी भृकुटियाँ, जिनके ऊपर लापरवाही से बिखरे हुए काले-काले बाल; जोशीले व्याख्यानदाताओं का-सा बड़ा मुँह, साफ़, चमकीली, चतुर और हँसोड़ी आँखें—अर्थात उसकी शक्ल-सूरत ऐसी थी कि हज़ारों में उसी पर निगाह पड़े; बड़ा महत्वाकांक्षी और जीवन से अभी तक न अफरा हुआ, अभी तक ज्वलन्त प्रेमी और सौन्दर्य का लोभी... 'अगर मेरा भाग्य यों न फूट गया होता तो', टमारा ने उसकी तरफ़ प्रसन्नता-पूर्वक देखते हुए सोचा, 'तो ऐसे आदमी पर मैं अपने आपको लुटा देती...हँसते हुए, बड़ी खुशी से, मुँह पर मुसकान के साथ, मैं अपना जीवन एक गुलाब के फूल की तरह तोड़कर चढ़ा देती...'

रायजानॉव ने आकर रोविन्सकाया का हाथ चूमा और बिना किसी हिचक के बड़ी सादगी से, टमारा को प्रणाम करके कहा :

'हम लोगों का एक दूसरे से उस पागलपन की शाम को परिचय हो चुका है जब आपको फ्रेञ्च भाषा बोलते सुनकर हम लोग भौंचक्के रह गये थे। जो कुछ आपने कहा, वह केवल मेरे और आपके बीच की बात है, पर वह तो मेरी समझ में नहीं आया—जिस ढङ्ग से आपने कहा !...वह आज तक मेरे कानों में गूँज उठता है...अच्छा, ऐलेना विक्टोरोव्ना,' उसने रोविन्सकाया की तरफ़ मुड़कर,

एक नीची कुरसी पर बैठते हुए कहा, 'कहो, मैं क्या आपकी सेवा कर सकता हूँ ? हाज़िर हूँ।'

रोविन्सकाया ने फिर सुस्ती से अपनी उङ्गलियाँ अपनी कनपटियों पर रखीं।

'आह, सचमुच, मैं इतनी परेशान हूँ, मेरे प्यारे रायज़ानॉव,' वह जान-बूझकर, अपनी आँखें मुर्झाकर बोली, 'तिस पर, यह मेरा सिर और दुख रहा है...कृपया मुझे वह दवा की शीशी मेज़ पर से उठाकर दे दो..श्रीमती टमारा तुम्हें सब बतायेंगी...मैं नहीं बोल पाऊँगी... सिर के दर्द के मारे मरी जा रही हूँ !...'

टमारा ने संक्षेप में रायज़ानॉव को जेनेका की दुःखद मृत्यु का सारा हाल सुनाया ; उसको जेनी के पास अपना कार्ड छोड़ आने की याद दिलाई और कहा कि जेनी उस कार्ड को सदा अपने पास बड़ी हिफ़ाजत से रखती थी और उसका, ज़रूरत पड़ने पर जेनी की मदद करने का, वायदा याद दिलाया।

'हाँ, हाँ, अवश्य !' रायज़ानॉव ने उसके कह चुकने पर आश्चर्य से कहा और फौरन उठकर जल्दी-जल्दी कमरे में इधर से उधर, हाथ से अपने बाल अपनी आदत के अनुसार, पीछे को फेंकता हुआ टहलने लगा। फिर वह कहने लगा :

'तुम सचमुच बड़ा अच्छा कर रही हो...अच्छी दोस्ती निभा रही हो ! यह बहुत अच्छा है !...बहुत ही अच्छा है !...मैं तुम्हारी हर तरह से मदद करूँगा...क्रिया-कर्म के लिए तुम्हें इजाज़त चाहिये... हूँ...देखो मैं अभी सोचकर बताता हूँ !...'

वह अपना माथा मलने लगा।

'हाँ...हाँ...मैं ग़लती नहीं करता हूँ तो यह दफ़ा एक सौ...एक सौ...अठहत्तर में आता है...माफ़ कीजिये...मैं समझता हूँ यह दफ़ा मुझे ज़बानी याद है...हाँ, यों है, 'किसी ऐसे शख्स को, जो आत्म-

हत्या करता है, दफ़नाते वक्त न तो धार्मिक प्रार्थना ही पढ़ी जा सकती है और न धार्मिक भजन ही गाये जा सकते हैं जब तक कि उसके चेहरे से दिमाग़ के ख़राब हो जाने का भाव न टपकता हो'...हूँ...तो पहली बात...तुमने कहा कि डाक्टर ने उसकी रस्सी काटकर उसे उतारा था...शहर के सरकारी डाक्टर ने...उसका नाम ?...'

'क्लीमेन्को !'

'मुझे लगता है कि मैं उसे कहीं मिला हूँ...अच्छा...अच्छा... और तुम्हारे थाने का दरोगा कौन ;

'बरकेश ।'

'ओहो...मैं उसे जानता हूँ...बड़ा हट्टा-कट्टा और मज़बूत है... पंखे की तरह फैली हुई उसकी लाल-लाल दाढ़ी है...है न ?'

'ह , हाँ, वही है ।'

'मैं उसको अच्छी तरह जानता हूँ । उसे किसी न किसी दिन जेल ज़रूर हो जायगी...दस बार तो वह बदमाश मेरे हाथों से किसी न किसी तरह बच गया है।...उसे भेंट चढ़ानी होगी। अच्छा, अच्छा ; और उसके बाद अस्पताल में...तुम उसका क्रिया-कर्म कब करना चाहती हो ?'

'सचमुच मैं कुछ नहीं जानती...जितनी जल्दी हो सके मैं करना चाहती हूँ...हो सके तो आज ही !'

'हूँ...आज ही...मैं इसका वायदा तो नहीं कर सकता...इतनी जल्दी इन्तज़ाम करना कठिन होगा...परन्तु मैं अपनी डायरी में आपका नाम और पता लिखे लेता हूँ। दो घण्टे में मैं आपके पास जवाब भेजूँगा। ठीक है, क्यों ? मगर फिर मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आपको शायद क्रिया-कर्म कल ही के लिए रखना होगा...और...माफ़ कीजिये मेरी गुस्ताखी...आपको शायद रुपये की भी ज़रूरत होगी ?

'नहीं, धन्यवाद !' टमारा ने इनकार करते हुए कहा, 'मेरे पास

रुपया है। आपकी चिन्ता के लिए धन्यवाद !...अच्छा, तो अब मैं जाती हूँ। मैं आपकी तहेदिल से शुक्रगुज़ार हूँ, ऐलेना विक्टोरोवना !...'

'दो घण्टे में मेरा जवाब आपके पास पहुँच जायगा,' रायज़ानोव ने द्वार तक उसे पहुँचाते हुए कहा।

टमारा इसके बाद गाड़ी में बैठकर घर की तरफ नहीं चली। वह कैथोलिचेस्काया स्ट्रीट की तरफ़ मुड़ी और वहाँ पहुँचकर एक छोटी-सी काफ़ी की दूकान में घुस गई जहाँ सेनका उसका इन्तज़ार कर रहा था। सेनका एक खुशमिजाज़ आदमी, अच्छी शक्ल का, नीलापन लिये हुए काले बालों का था जिसकी काली-काली आँखों में पीलापन और सफ़ेदी झलकती थी। वह निश्चय में दृढ़ता और काम में हिम्मत दिखाता था और इस शहर के चोरों में बड़ा प्रख्यात था वह उनका सबसे अनुभवी और सच्चा सरदार था जो आम तौर पर रात भर जुआ खेला करता था।

'कैसी हो टमोरच्का ? बहुत दिनों से तुमसे मुलाक़ात नहीं हुई—मैं तो नाउम्मीद हो चला था...कहो, काफ़ी पियोगी ?'

'नहीं, काम की बात पहले सुनो...कल जेनेका की अन्त्येष्टि-क्रिया करनी है...वह फाँसी लगाकर मर गई...'

'हाँ, मैंने एक अखबार में पढ़ा,' सेनका ने बड़ी लापरवाही से दातों में से बोलते हुए कहा, 'क्या हुआ ?'

'मुझे पचास रुपये फौरन लाकर दो।'

'टमोरच्का, मेरी प्यारी—मेरे पास इस वक़्त एक रुपया भी नहीं है !...पचास तो दूर रहे !...'

'मैं जैसा कहती हूँ, करो—फौरन लाकर दो !' टमारा ने तेज़ी से कहा—मगर क्रोध नहीं किया।

'हे मेरे ईश्वर !...मैं तुमसे सच कहता हूँ...मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है...और आज रविवार होने से सेविङ्ग बैंक भी बन्द है...'

'बन्द होने दो !...कहीं से लाओ !...मगर मुझे लाकर फौरन पचास रुपये दो !'

'पचास रुपये तुम्हें फौरन किस लिए चाहिये, मेरी प्यारी ?'

'इससे तुम्हें क्या मतलब, मूर्ख ?...अन्त्येष्टि-क्रिया के खर्च के लिए...'

'ओह ! अच्छा, बहुत अच्छा !' सेनका ने एक गहरी साँस ली, 'अच्छा, तो मैं खुद कहीं से लेकर तुम्हारे पास शाम को आऊँगा...ठीक है न, टमोरच्का ?...तुम्हारे बिना मुझे रहना बड़ा मुश्किल हो रहा है ! आह, मेरी प्यारी, मैं तुम्हें सीने से लगाकर चूमना चाहता...मैं चूमते समय तुम्हें आँखें बन्द नहीं करने दूँगा !...मैं तुम्हारे पास आऊँगा !'

'नहीं, नहीं !...जैसा मैं कहती हूँ वैसा तुम करो, सेनेच्का !...मेरी बात माना करो । वहाँ तुम अब हरगिज न आना क्योंकि मैं अब खाला-जान बन गई हूँ और सारे घर का इन्तज़ाम मेरे सिर है ।'

'ऐ, तुम खालाजान ? सारे घर का इन्तज़ाम तुम्हारे सिर ? घर का इन्तज़ाम तुम क्या जानो !...' कहकर वह आश्चर्य से सीटी बजाने लगा ।

'हाँ, अब तुम मुझसे मिलने वहाँ न आना, मगर बाद में पीछे मेरे प्यारे, जो कुछ तुम चाहोगे वही होगा...मैं सब छोड़-छाड़ कर बिल्कुल तुम्हारी ही होकर रहूँगी !'

'आह, मुझसे अब नहीं रहा जाता ; जल्दी छोड़कर आ जाओ !'

'जल्दी आ जाऊँगी ; एक हफ्ता और रुक जाओ, मेरे प्यारे ! तुम वह बुकनी ले आये ?'

'और वह बुकनी कुछ नहीं है !' असन्तोष से सेनका ने कहा, 'और बुकनी भी नहीं, वे गोलियाँ हैं ।'

'मगर जैसा तुम कहते थे, वह फौरन ही पानी में तो घुल जाती हैं न ?'

'हाँ, वह तो मैंने खुद अपनी आँखों से देखा है ।'

'मगर उससे वह मर तो नहीं जायगा, सेनका ? क्यों उससे वह मर तो नहीं जायगा ? सच बताओ !'

'नहीं, नहीं, कुछ नहीं होगा...कुछ देर तक सिर्फ छींकें आयेंगी... आह टमारा !' उसने एक गहरी साँस लेते हुए कहा और एक असह्य भाव से उसने ऐसी ज़ोर से अँगड़ाई ली कि उसके जिस्म के सारे जोड़ चटख उठे, 'जल्दी खत्म करो यह क़िस्सा...ईश्वर के लिए जल्दी ही सब छोड़छाड़कर मेरे पास आ जाओ !...हम तुम दोनों मिलकर अपना काम शुरू करें...और क़िस्सा खत्म ! जहाँ तुम जाना चाहो, मेरी प्यारी, वहीं मैं तुम्हारे साथ जाने को तैयार हूँ ! मैं बिल्कुल तुम्हारी उँगली के इशारे पर हूँ ! ओडेसा जाना चाहती हो तो अभी ओडेसा चलने को तैयार हूँ...और कहीं विदेश जाना चाहती हो तो वहाँ भी अभी चलने को तैयार हूँ। जल्दी सब खत्म करके आ जाओ !'...

'जल्दी ही आ जाऊँगी, बड़ी जल्दी !...'

'तुम्हरी आँख के इशारे की ज़रूरत है और मैं बुकनी, औज़ार और पासपोर्ट लेकर हाज़िर हूँ।...और फिर...वाह ! वाह ! फिर क्या कहने हैं, मेरी प्यारी टमोरच्का ! फिर हम दोनों मिलकर ग़ज़ब ढायेंगे ! मज़ा करेंगे !...'

और वह जो हमेशा गम्भीर रहता था, इस वक्त बिल्कुल यह भूलकर कि वह दूकान में खड़ा है और लोग देख लेंगे, टमारा को पकड़कर सीने से लगाने लगा।

'अरे, अरे !'...जल्दी से बिल्ली की तरह फुर्ती से टमारा कुर्सी से उछलकर खड़ी हो गई, 'ओ अभी नहीं ; फिर, फिर ! मेरे प्यारे सेनका, बाद में !... बाद में मैं बिल्कुल ही तुम्हारी हो जाऊँगी, प्यारे...फिर कोई रोक या इनकार न होगी ! मैं तुम्हें थका डालूँगी,...अच्छा अभी बन्दगी ! बड़े मूर्ख हो !'

और जल्दी से अपने हाथ से सिर के बाल ठीक करती हुई वह काफ़ी की दूकान से चली गई।

आठवाँ अध्याय

दूसरे दिन सोमवार को, करीब दस बजे सुबह, चकले की सारी छोकरियाँ—उस चकले की जो पहले अन्ना का था और अब ऐम्मा ऐडवार्डोवना का हो गया था—गाड़ियों में बैठकर शहर की तरफ़ अस्पताल को चलीं। सिर्फ बड़ी अनुभवी और दूरदर्शी हैन्रीटा, कायर और बेदिल निनका और कमजोर तबियत की पाशा नहीं गईं। पाशा दो दिन से चुपचाप चारपाई पर पड़ी थी और उससे कोई बात पूछी जाती थी तो उत्तर में एक निर्जीव और निर्बुद्धि मुसकान मुसकराने लगती थी और जानवरों की तरह धीमी-धीमी कुछ निरर्थक आवाज-सी करती थी। यदि खाने को भी उसे कोई नहीं लाता था तो वह नहीं माँगती थी, मगर खाना उसके पास लाया जाता था तो वह उठकर बड़े लालच से उसे फौरन जानवरों की तरह खाने में लग जाती थी। उसे ज़रूरी नित्य क्रिया-कर्म की भी याद दिलानी होती थी, तब वह उठती थी; वरना उसकी भी उसे याद या चिन्ता नहीं रहती थी। ऐम्मा ने पाशा को उसके रोज़ाना के ग्राहकों के पास नहीं भेजा था जो रोज आ-आकर उसे पूछा करते थे। पहले भी पाशा को इस तरह के दौरे हो चुके थे, परन्तु इतने दिनों

तक वे नहीं रहे थे। खैर, ऐम्मा ने किसी न किसी तरह पाशा को अच्छा करने का निश्चय किया था क्योंकि वह इस चकले की सबसे अधिक चलती रक़म थी, जिसकी बड़ी माँग रहती थी ; अस्तु, जो इस संस्था की सबसे भयङ्कर शिकार भी थी।

अस्पताल में चीर-घर की इमारत लम्बी-लम्बी, इक मँजिला और खाकी रङ्ग की थी, जिसकी खिड़कियों और द्वारों की चौखटें और किवाड़ सफेद रङ्ग के थे। इस इमारत को बाहर से देखने से ही लगता था कि वह बैठी-सी, जमीन में घुसी सी जा रही थी। वह किसी जादूगर या भूतों का घर-सी लगती थी। छोकरियाँ इस इमारत के द्वार पर ठिठकीं और एक-एक करके झिझकती हुई, उसके द्वार में होकर आँगन में होती हुई, आँगन के उस छोर पर बने हुए गिरजे में घुसीं। इस गिरजे का रंग भी वैसा ही खाकी था और उसके द्वारों और खिड़कियों की चौखटें और किवाड़ भी वैसे ही सफेद थे।

गिरजे के द्वार पर ताला लगा था। उसकी चाबी चौकीदार के पास थी, जिसको ढूँढ़ने की ज़रूरत थी। टमारा ने बड़ी मुश्किल से एक बूढ़े, गंजे आदमी को, जिसकी मूछों पर काई-सी जमी लगती थी और जिसकी आँखें छोटी-छोटी और नाक लाल-लाल और बहुत आगे को लटकती थी, ढूँढ़कर निकाला। उसने द्वार में लटकते हुए बड़े ताले को खोला, चटखनी को धक्का देकर हटाया और जंग लगे हुए द्वार को धक्का देकर खोला जो गाता हुआ-सा खुला। द्वार के खुलते ही गिरजे के अन्दर से एक ठण्डी और नम हवा का झोंका जिसमें पत्थरों की नमी, धूल और मुर्दा मांस की गन्ध मिली हुई थी, आकर छोकरियों को लगा। वे काँपती हुई पीछे को हटकर एक दूसरे से सटकर खड़ी हो गईं ; केवल टमारा बिना काँपे चौकीदार के साथ-साथ अन्दर गई।

गिरजे में अन्दर लगभग अन्धकार था। पतझड़ की धीमी-धीमी रोशनी छोटी-छोटी और पतली-पतली खिड़कियों से होकर आ रही थी,

जिन पर जेलखाने की तरह सींखचे जड़े थे। दो-तीन मूर्तियाँ दीवारों पर लगी थीं, जो अन्धकार में साफ़-साफ़ नज़र नहीं आती थीं। फ़र्श पर मामूली तख्तों के बने हुए लाशों को उठाने के कई बक्स टिकटियों पर रखे हुए थे। बीच का एक बक्स खाली था और उसका ऊपर का ढक्कन पास ही में अलग पड़ा था।

'तुम्हारी लाश कैसी है?' चौकीदार ने एक चुटकी हुलास भरकर सूँघते हुए मोटी आवाज़ में पूछा, 'तुम उसका चेहरा देखकर पहिचान सकती हो?'

'हाँ, मैं उसे पहिचान लूँगी।'

'अच्छा, तो आओ, देखो। मैं सब लाशें तुम्हें दिखाता हूँ। देखो, यह तो नहीं है?...'

यह कहकर उसने एक लाश के बक्स का ढकना जो कीलों से जड़ा नहीं था, उठाया। एक झुर्रे चेहरे की बुढ़िया जिसका शरीर चीथड़ों से ढका था और जिसका मुँह नीला और सूजा हुआ था, उस बक्स में लेटी थी। उसकी बाँई आँख बन्द थी और दाहिनी जिसकी चमक जा चुकी थी और जो पुरानी भुड़भुड़ की तरह दीखती थी, एकटक भयङ्कर ढङ्ग से घूर रही थी।

'यह नहीं है? अच्छा, और देखो...यह देखो।' चौकीदार ने कहा और एक-एक करके उसने सभी बक्स खोल-खोल दिखाये, जिन सबमें बड़े ग़रीबों की लाशें लगती थीं, जो कि सड़कों पर से, नशे से चूर होकर गिर पड़ने, अथवा गाड़ियों से कुचल जाने पर उठाकर ले आये गये थे, जो अङ्ग-भङ्ग रूप में विकृत होकर सड़ने लगे थे। कुछ लाशों पर सड़न शुरू हो जाने के नीले-नीले दाग़ साफ़ दिखाई देने लगे थे! एक आदमी की नाक ग़ायब थी, ऊपर के होंठ के फटकर दो टुकड़े हो गये थे और मुँह पर, जिसमें छोटे-छोटे सूराख हो गये थे, तमाम सफ़ेद-सफ़ेद कीड़े रेंग रहे थे! एक औरत का पेट, जो जलन्धर से मरी थी, पहाड़

की तरह ऊपर को उठा हुआ, बक्स का ढक्कन ऊपर को उठाये दे रहा था !

चीरफाड़ के बाद इन लाशों को जल्दी-जल्दी सी-साकर चौकीदारों ने इन बक्सों में घोकर बन्दकर दिया था। इसकी चिन्ता चौकीदारों को नहीं रहती थी कि लाशें सीते वक्त वे दिमाग़ पेट में रखते हैं अथवा सिर में जिगर रखकर वे जल्दी-जल्दी प्लास्टर से बन्दकर देते हैं ! वे शराब पीकर अपने इस भयङ्कर और असाधारण काम को इसी प्रकार करने के आदी हो गये थे और आमतौर पर ऐसा होता था कि उनके इन बेज़बान ग्राहकों की पूछताछ करनेवाले कोई नाते-रिश्तेदार और परिचित भी नहीं होते थे...'

गिरजे में सड़ते हुए मांस की भारी और गोंद की तरह ऐसी चिपकनी बदबू भर रही थी कि टमारा को लगा कि उसके सारे शरीर को उसने ढाक लिया है।

'सुनो चौकीदार' टमारा ने पूछा, 'यह मेरे पावों के नीचे बराबर कर्र-कर्र क्या होता है ?'

'कर्र कर्र ?' चौकीदार ने फिर पूछा और सिर खुजलाने लगा, 'ओह, कीड़े होंगे !' उसने लापरवाही से कहा, 'लाशों में यह कम्बख्त कीड़े बड़ी जल्दी पड़ने लगते हैं !...मगर तुम्हारी लाश औरत की है या मर्द की ?'

'औरत की' टमारा ने उत्तर दिया।

'इसका मतलब है कि इन सबमें से तुम्हारी कोई नहीं है ?'

'नहीं, ये सब अनजान लोगों की लाशें हैं।'

'अच्छा, तो फिर !...इसका मतलब यह हुआ कि लाश-घर में चलकर ढूँढ़ना पड़ेगा। किस रोज़ वह लाश यहाँ आई थी ?'

'शनिवार के दिन, दादाजी' और टमारा ने यह कहकर अपना बटुआ निकाला, 'शनिवार को दिन में लाई गई थी। यह लो, तम्बाकू पीने के लिए, दादा !'

'हाँ, अब ठीक है ! शनिवार के रोज़, दिन में तुमने कहा ! क्या कपड़े पहिने थी ?'

'कपड़े ? कपड़े तो कुछ नहीं थे—एक कुर्ती और एक लहँगा सिर्फ़ पहिने थी...दोनो सफेद रङ्ग के थे।'

'अच्छा, तो वह नम्बर दो सौ सत्रहवाली होगी...उसका नाम क्या था ?...'

'सुसन्ना राइटज़ीना।'

'मैं जाकर देखता हूँ—शायद वही है। अच्छा, तो अब श्रीमतियों,' उसने छोकरियों से, जो द्वार में एक दूसरे से चिपटी खड़ी रोशनी रोक रही थीं, कहा, 'आप में से सबसे बहादुर कौन है ? अगर आपके मित्र की लाश यहाँ परसों आई थी तो वह उस दशा में पड़ी होगी जिसमें भगवान ने सबको रचा है, अर्थात बिल्कुल नङ्गी होगी...बताइये, आप में से बहादुर कौन हैं...कौन दो आप में से दिल कड़ा करके आ सकती हैं ? लाश को कपड़े पहिनाने की ज़रूरत होगी।'

'अच्छा, अच्छा, मनका तुम जाओ,' टमारा ने अपनी साथिन से कहा, जो ठण्डी और पीली होकर घबराई हुई लाशों को घूर-घूरकर आँखें मिचकाती हुई देख रही थी। 'डर मत, मूर्ख ; मैं भी तेरे साथ आऊँगी ! तू नहीं जायगी तो और कौन जायगा ?'

'अच्छा, मैं ? अच्छा, मैं...?' नन्ही मनका धीरे से होंठ हिलाकर बड़बड़ाई, 'चलो, चलो। मुझे सब एक-सा ही है...'

गिरजे के पीछे ही लाशघर भी था। यह एक ज़मीन के नीचे का कमरा था जिसमें पहुँचने के लिए छः सीढ़ियाँ उतरनी होती थीं।

चौकीदार दौड़कर कहीं गया और एक मोमबत्ती और फटी किताब लेकर लौट आया। लाशघर में उतरकर जब उसने मोमबत्ती जलाई तो छोकरियों ने सामने फर्श पर पड़ी हुई बहुत-सी लाशें देखीं। क़तारों में रखी हुई—फैली, पीली-पीली, विकृत चेहरों की, सिर फटे हुए,

चेहरों पर खून के दाग़, दाँत बाहर को निकले हुए।

'अभी लीजिये...अभी लीजिये...' चौकीदार अपनी उङ्गली से इशारा करता हुआ बोला, 'परसों...इसका मतलब हुआ शनिवार के दिन...शनिवार को...क्या नाम बताया आपने ?'

'राइटजेना सुसन्ना...' टमारा ने उत्तर में कहा।

'राइटजेना सुसन्ना...'चौकीदार ने इस तरह दुहराया मानो वह गा रहा हो, 'राइटज़ेना सुसन्ना। जैसा मैंने कहा था...दो सौ सत्रह नम्बर।'

झुककर मोमबत्ती की रोशनी में लाशों के चेहरे देखता हुआ वह बढ़ने लगा। अन्त में वह एक लाश के पास जाकर रुक गया जिसके पाँव पर २१७ नम्बर बड़े-बड़े काले अक्षरों में लिखा था।

'यही है ! मैं उठाकर बाहर बरामदे में लिये चलता हूँ और सारा सामान अभी लाये देता हूँ...ज़रा ठहरो !'

बड़बड़ाते हुए, मगर ऐसी आसानी से जो उसकी उम्र के लिए आश्चर्यजनक थी, उसने पैर पकड़कर जेनेका की लाश उठाई और अपनी पीठ पर इस तरह डाल ली जैसे कि वह कोई मृतक भेड़ या बकरी हो अथवा आलुओं का बोरा हो।

बाहर बरामदे में कुछ रोशनी ज्यादा थी। वहाँ पहुँचकर चौकीदार ने जब लाश ज़मीन पर रख दी और छोकरियों ने उसे देखा तो टमारा ने अपना मुँह दोनों हाथों से ढाँक लिया और मनका मुँह फेरकर रो पड़ी।

'तुम्हें किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो मुझसे कहो.' चौकीदार ने उन्हें समझाते हुए कहा, 'तुम अपने मित्र की लाश को अच्छे, उसके योग्य कपड़ों से ढाकना चाहती हो तो मैं अभी ला सकता हूँ। हम लोग सुनहरे कपड़े, मालायें, मूर्तियाँ, कफ़न इत्यादि सब चीज़ें तैयार रखते हैं...जो कुछ आप चाहें, हमसे खरीद सकती हैं...जूते भी मिल सकते हैं...'

टमारा ने उसके हाथ में रुपया दिया और मनका को अपने आगे करके कुछ देर के लिए बाहर हवा में चली गई।

कुछ देर के बाद दो मालायें लाई गईं। एक टमारा की तरफ से थी, जिसपर जिस काले अक्षरों में लिखा था—जेनी के लिए एक मित्र की तरफ़ से', दूसरी रायज़ानॉव की तरफ़ से लाल फूलों की एक माला थी जिसपर सुनहरे अक्षरों में लिखा था, 'तपकर सोना पवित्र होता है।' उसने एक ख़त भी भेजा था जिसमें ज़रूरी काम में लगे होने के कारण न आ सकने के लिए टमारा से माफ़ी माँगी थी।

इसके बाद रोमन कैथलिक पन्थ के अनुसार अन्त्येष्टि के समय संकीर्तन करनेवाले, पन्द्रह शहर में सब से अच्छे बाजे बजानेवाले आये, जिनको ढूँढ़कर टमारा ने बुलाया था।

इन बाजेवालों का उस्ताद एक लम्बा ख़ाकी ओवरकोट और ख़ाकी टोप पहिने हुए था, जिससे ऐसा लगता था मानो वह ख़ाक से ढका हो। उसकी मूँछें लम्बी-लम्बी और फौजी अफसरों की तरह सतर थीं। उसने देखते ही वेरका को पहिचान लिया और आश्चर्य से आँखें फाड़कर, धीरे से मुसकराते हुए उसने वेरका की तरफ़ आँख मारी। महीने में दो तीन बार और कभी-कभी अधिक भी, वह अपने पेशे के धार्मिक बाजेवालों और पुजारियों के साथ कटरे में जाया करता था और तमाम चकलों को देखकर वह अन्त में अन्ना के यहाँ ठहरता था और ख़ास कर वेरका को पसन्द करता था।

वह बड़ा ख़ुशमिज़ाज और रङ्गीला आदमी था; जोश में भरकर बड़ी फुर्ती से नाचता था और ऐसे हाव-भाव करता था कि देखनेवाले हँसी से लोट-पोट होने लगते थे।

बाजेवालों के पीछे-पीछे दो घोड़ों की जनाज़ा ले जानेवाली गाड़ी आई। उसका रङ्ग काला था और उसपर सफेद-सफेद पर लगे हुए थे और उसके साथ सात मशालची थे। वे अपने साथ एक सफेद

शीशे का जनाज़ा भी लाये थे जो काली छींट से ढके हुए एक पायदान पर रखा था। जल्दी न दिखाते हुए, परन्तु आदत के अनुसार फुर्ती से, उन्होंने लाश को उठाकर इस जनाज़े में रख दिया। लाश का मुँह उन्होंने कपड़े की जाली से ढक दिया और लाश को सुनहरे कपड़े में लपेटकर, एक मोमबत्ती जलाकर सिर पर और दो दोनों पावों पर रख दीं।

अब मोमबत्ती की पीली-पीली काँपती हुई रोशनी में, जेनेका का चेहरा और भी साफ दीखने लगा। चेहरे का नीलापन लगभग चला गया था ; सिर्फ़ यहाँ-वहाँ, कनपटियों पर, नाक पर, आँखों के बीच में, टेढ़ा-मेढ़ा, धब्बों में, थोड़ा-थोड़ा रह गया था। खुले हुए होठों के बीच में से दाँतों की सफेदी कुछ-कुछ दीखती थी और दाँतों से कटी हुई जीभ का सिरा भी दीखता था। खुली हुई गर्दन की हँसली पर, जिसका रंग पुराने कागज़ का सा हो गया था, दो लकीरों के निशान थे। एक काला-काला रस्सी का निशान था और दूसरा लाल-लाल उस चोट का निशान था जो सिमियन ने लगाई थी। ये निशान दो डरावने कण्ठ-मालाओं की तरह लग रहे थे। टमारा ने लाश के पास जाकर कुर्ती का कालर ठुड्डी तक चढ़ाकर एक सेफ्टी पिन से बन्द कर दिया जिससे गर्दन के निशान दिखाई न दें।

क्रिया-कर्म कराने के लिए तीन पादरी भी आये। एक छोटा-सा भूरा पादरी था जो आँखों पर सुनहरा चश्मा और सिर पर एक छोटी-सी टोपी लगाये था। दूसरा एक पतला, लम्बा, पतले-पतले बालों का, बीमार-सा दिखनेवाला पादरी था, जिसका चेहरा ऐसा गहरा पीला था कि मिट्टी का-सा लगता था। तीसरा एक फुर्तीला लम्बा चोगा पहिने हुए धार्मिक भजन गानेवाला था, जो बड़े उत्साह से अपने साथी गाने-बजानेवालों से रास्ते में रहस्यपूर्ण इशारों से बातचीत करता चला आ रहा था। टमारा ने आगे बढ़कर पहले पादरी से पूछा :

'पिताजी, आप लोग किस तरह अन्त्येष्टि क्रिया की प्रार्थना पढ़ेंगे—सब के लिए एक साथ या अलग-अलग ?'

'हम लोग सबके लिए एक साथ ही प्रार्थना पढ़ा करते हैं,' पादरी ने अपने चोग़े पर गर्दन के पीछे से लटकनेवाले सिरों को चूमकर और उनकी धज्जियों से अपनी दाढ़ी सुलझाते हुए कहा, 'आम तौर पर ऐसा ही होता है, मगर ख़ास तौर पर, आप चाहें तो अलग भी प्रबन्ध हो सकता है। मृत्यु किस तरह से हुई थी ?'

'आत्महत्या से, पिताजी।'

'ऐं...आत्महत्या से ?...मेरी प्यारी लड़की, तुम्हें पता है कि धार्मिक क़ानून के अनुसार आत्महत्या करनेवाले के लिए कोई प्रार्थना नहीं की जा सकती !...अस्तु, कोई प्रार्थना नहीं हो सकती ! हाँ, मगर अपवाद भी होते हैं—ख़ास प्रबन्ध सेभी की जा सकती है...'

'यह देखिये, पिताजी; मेरे पास पुलिस और डाक्टर दोनों के सर्टीफ़िकेट मौजूद हैं...उसका दिमाग़ ठीक नहीं था...पागलपन में उसने आत्महत्या कर डाली...'

यह कहते हुए टमारा ने पादरी की तरफ़ दो काग़ज़ जो पिछली शाम को रायज़ानॉव ने उसके पास भेजे थे, तीन दस-दस रुपये के नोटों के साथ बढ़ाकर कहा, 'मेरी आपसे प्रार्थना है पिताजी, कि हर काम अन्त्येष्टि-क्रिया का पूरा-पूरा धार्मिक रूप से ईसाई धर्म के अनुसार होना चाहिये। वह बड़ी अच्छी स्त्री थी और उसने बड़े दुःख सहे। क्या आप कृपया जनाज़े के साथ क़ब्रस्तान तक चलकर वहाँ भी एक आख़िरी प्रार्थना नहीं पढ़ सकते ?'

'मैं क़ब्रस्तान तक चल तो सकता हूँ, मगर वहाँ प्रार्थना करने का मुझे अधिकार नहीं है, क्योंकि वहाँ का पादरी दूसरा है...और देखिये मुझे फिर यहाँ एक बार लौटकर आना होगा, इसलिए आप कुछ गाड़ी के किराये के लिए और देने की कृपा करें तो ठीक होगा...'

टमारा के हाथ से रुपया लेकर पादरी, धूप के पात्र को जिसे धार्मिक भजन गानेवाला ले आया था, आयतें पढ़-पढ़कर पवित्र करने लगा और उस पात्र को फिर हाथ में लेकर लाश के चारों ओर घुमाने लगा। सिर के पास पहुँचकर वह रुका और नम्र और बनावटी दुःख की आवाज़ से कहने लगा :

'हे ईश्वर, तेरी महिमा अपार है ! जैसी तेरी महिमा सृष्टि के प्रारम्भ में थी वैसी ही अब भी है और वैसी ही हमेशा आगे भी रहेगी !'

भजनीक ने गुनगुनाना शुरू किया : 'पवित्र पिता, पवित्रतम त्रिदेव और हमारे पिता ईशु !...'

धीरे-धीरे, मानो किसी दुःखपूर्ण, गहन और धार्मिक रहस्य को कह रहे हों, गानेवालों ने जल्दी-जल्दी, मीठी आवाज़ में उच्चारना शुरू किया, 'प्रभु, तुम्हारे साधु-सन्तों की ख्याति इस जग में जगमगाती है ! अपने इस दास की आत्मा को भी, जो सो रही है, शान्ति दो ! हे प्रभो, इस दास की आत्मा को भी उसी प्रकार सुख और शान्ति दो जिस प्रकार तुम मानवजाति पर कृपा करते हो !'

भजनीक ने सबके हाथ में एक-एक मोमबत्ती पकड़ा दी और उनकी गरम, कोमल तथा जीवित ज्योतियाँ वहाँ की भारी और अन्धकारपूर्ण हवा में जल-जलकर स्नेह से स्त्रियों के चेहरे चमकाने लगीं। करुण संगीत के सुमधुर स्वर हवा में, दुखी फरिश्तों की आहों की तरह मिल रहे थे।

'हे प्रभो, शान्ति दो अपने इस दास को और अपने स्वर्ग में इसे जगह दो, जहाँ न्यायियों और तुम्हारे सन्तों के चेहरे, हे प्रभो, तुम्हारे चिरागों की तरह दमकते हैं ; अपने इस दास की सारी ग़लतियाँ भूल-कर, प्रभो, इसे शान्ति प्रदान करो !'

टमारा इन शब्दों को, जिनसे वह बहुत दिन तक परिचित थी और अब बहुत दिनों से भूल चुकी थी, ध्यानपूर्वक सुन रही थी और घृणा से मन ही मन मुसकरा रही थी। उसको जेनेका के आवेशपूर्ण,

पागल शब्द याद आ रहे थे, जो वह हताश होकर अविश्वास से कहा करती थी...'क्या महाकृपालु और महादयालु भगवान सचमुच उसकी गन्दी, धुआँधार, घृणित और अपवित्र जिन्दगी को भूलकर उसकी आत्मा को क्षमा करेगा ? क्या सर्वव्यापी और सर्वज्ञ परमात्मा सचमुच जेनेका की नास्तिकता और अनिच्छुक व्यभिचार को और अपने पवित्र नाम के विरुद्ध एक बच्चे के वितण्डावाद और बकवास को भूलकर, क्षमा कर देगा ? हे भगवान !...हे दयावान !...हे सबके आधार !

धीमा-धीमा शोक-प्रदर्शन और विलाप एकाएक चीखने और चिल्लाने में बदल गया और उसकी प्रतिध्वनि गिरजे में गूँज उठी, 'हाय जैनेक्का !' यह नन्ही मनका की आवाज़ थी, जो घुटनों पर खड़ी हुई, अपना मुँह रूमाल से बन्द करने का प्रयत्न कर रही थी। दूसरी छोकरियाँ भी उसको देखकर, घुटनों पर खड़ी हो गईं और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगीं और उनके रोने, सिसकियों और आहों की आवाज़ों से गिरजा गूँज उठा...'

'तू ही एक अमर है, जिसने मनुष्य को सिरजा और बनाया है ! हम लोग ख़ाक से बने हैं और ख़ाक ही में मिल जायेंगे। तूने हमें बनाते हुए हुक्म भी दिया था कि, 'ख़ाक के तुम पुतले हो और अन्त में ख़ाक ही में मिल जाओगे।'

टमारा चुपचाप, बिना हिलेजुले, गम्भीर मुख से, पत्थर की तरह खड़ी थी। उसके हाथ की मोमबत्ती में से प्रकाश सुनहरे मण्डलों में उसके बालों पर [illegible] रहा था। उसकी आँखें जेनेका के नम और पीले माथे और नाक के छोर पर, जो उसे अपनी जगह से दीख रहे थे, गड़ी हुई थीं।

'ख़ाक का पुतला अन्त में ख़ाक ही में मिल जायगा...' वह मन ही मन दुहरा रही थी, 'क्या सचमुच यही हश्र है—बस एक पृथ्वी रह जायगी और कुछ नहीं ? क्या अच्छा है—कभी न होना या कुछ होना ?...ख़राब से ख़राब भी कुछ होना...किसी तरह भी ज़िन्दा होना ?'

और गानेवालों ने, मानो उसका समर्थन करते हुए, मानों उसका आख़िरी सहारा भी उससे छीनते हुए, अपनी अकेली ध्वनि में गाया :

'और सभी मनुष्य नष्ट हो जायेंगे...'

फिर गानेवालों ने 'अमर याद' नाम का भजन गाया और मोम-बत्तियाँ बुझा दी गईं जिनमें से धुआँ निकल-निकलकर धूप के धुयें से मिलकर, नीला-नीला, उड़ने लगा। पादरी ने अन्तिम प्रार्थना पढ़ी ; सब चुप हो गये और भजनीक के दिये हुए फावड़े से पादरी ने थोड़ी-सी बालू उठाकर लाश के ऊपर आड़ी-तिरछी डाली। बालू छोड़ते हुए उसने ये महान शब्द उचारे, जो गम्भीर और दुःखपूर्ण घटना के रहस्यपूर्ण क़ानून की व्याख्या है, 'दुनिया ईश्वर की है और इसका चरम उद्देश्य सृष्टि है, जिसमें सब कुछ विद्यमान है।'

छोकरियाँ जनाज़े के साथ-साथ कब्रस्तान तक गईं। रास्ते में एक जगह पर कटरे की गली आकर मिलती थी, इस गली में होकर जनाज़ा मुड़ता तो आधी देर में ही क़ब्रस्तान पहुँच सकता था, मगर जनाज़ों के कटरे में होकर जाने की मुमानियत थी।

मगर फिर भी जनाज़े के इस गली के मोड़ पर आते ही, तमाम चकलों से छोकरियाँ, जैसी बैठी थीं वैसी ही, स्लीपर पहिने, नंगे पावों, रात के चोगों में, सिर पर रूमाल बाँधे, दौड़ती हुईं, निकल-निकलकर, गली के मोड़ पर आ खड़ी हुईं और जनाज़े को देखकर भगवान का नाम लेती हुईं और सिसकती हुईं, रूमालों और कपड़ों के सिरों से अपनी आँखों से आँसू पोंछने लगीं।

दिन खुल गया था। सूर्य नीले-नीले, ठण्डे आकाश में चमक रहा था ; घास अपनी आखिरी हरियाली तथा मुर्झाई हुई पत्तियाँ अपनी लाली और सुनहरापन चमका रहीं थीं...और स्वच्छ, ठण्डी, गम्भीर और दुःखी वायु से ध्वनि आ रही थी, 'पवित्र परमेश्वर ! पवित्र सर्व-शक्तिमान ! पवित्र अनन्त आत्मा, हम पर दया करो !' जीवन के

लिए किस लालसा से, जो कभी नहीं भरती ; अनित्य, स्वप्न की तरह क्षणिक, जीवन के सौन्दर्य और सुख के लिए किस पिपासा से और मृत्यु की शान्ति के लिए किस भयङ्कर दुःख से, ईश्वर के लिए ये शब्द निकल रहे थे !

फिर कब्र पर पहुँचकर एक छोटी-सी प्रार्थना पढ़ी गई और जनाज़े पर धड़-धड़ मिट्टी पड़ने लगी और शीघ्र ही उसके ऊपर ताजी मिट्टी का एक छोटा-सा टीला खड़ा हो गया...

'किस्सा खत्म हो गया !' टमारा ने सबके चले जाने पर अपनी साथिनों से कहा, 'मरना तो कभी न कभी सभी को है !...परन्तु मुझे जेनेका के लिए बड़ा दुःख है...बड़ा ही दुःख है...ऐसी साथिन हमें फिर कभी नहीं मिलेगी। फिर भी बहिनों, इस गढ़े में लेटकर वह आज हम लोगों के उस गढ़े से कहीं अच्छी है, जिसमें हम पड़ी सड़ती रही हैं...खैर, आओ भगवान का आखिरी नाम लो और...चलो !...'

जब सब भगवान का नाम ले चुकीं, तब टमारा के मुख से ये दुःखपूर्ण, विचित्र और भयङ्कर शब्द निकले :

'और हे भगवान, इससे बिछुड़कर अब अधिक दिन तक हम साथ-साथ न रहेंगी ; शीघ्र ही वायुदेव हमें इधर-उधर बिखरा देंगे। जीवन बड़ी प्यारी चीज़ है...देखो, सूर्य कैसा चमक रहा है ! कैसा आकाश नीला-नीला है ! कैसी स्वच्छ वायु बह रही है !...मकड़ी के जाले उड़ते फिरते हैं...कैसी भारतीय ग्रीष्म है !* ...दुनिया कितनी अच्छी है !... हम ही सिर्फ...हम छिनालें बस...कूड़ा-कर्कट हैं ! चलो, अब चलें !'

छोकरियाँ घर की तरफ़ चलीं, मगर रास्ते में कहीं से, एक स्मारक के पीछे से, एक लम्बा और मज़बूत विद्यार्थी निकला और उसने आकर लियूबा की बाँह कोमलता से आकर पकड़ ली। लियूबा ने मुड़कर देखा तो सोलोवीव को अपने पास खड़ा देखा ; देखकर वह चौंकी।

* भारतीय ग्रीष्म के लिए ठण्डे देशों मे रहनेवाले यूरुपीय लोग लालायित रहते हैं।

उसका चेहरा एकदम पीला पड़ गया, आँखें निकल आईं और होंठ काँपने लगे।

'भाग जाओ यहाँ से !' उसने धीरे से, पर अपार घृणा से उससे कहा।

'लियूबा...लियूबोच्का...' सोलोवीव बड़बड़ाया, 'मैं तुमको ढूँढता-ढूँढता हार गया। मैं...ईश्वर की क़सम खाकर कहता हूँ...मैं उस लिखोनिन की तरह नहीं हूँ...मैं सच कहता हूँ...मैं...अभी...इसी वक़्त...आज ही...'

'भाग जाओ !' लियूबा ने और भी गम्भीरता से कहा।

'मैं सच कहता हूँ...बिल्कुल सच कहता हूँ...मज़ाक नहीं करता हूँ...मैं तुमसे विवाह करना चाहता हूँ...'

'ओह, तू नहीं मानेगा !' लियूबा जोर से चिल्लाई और जल्दी से, किसान औरत की तरह, सोलोवीव के मुँह पर जोर का एक तमाचा जड़कर बोली, 'तो ले, यह ले ! हम सबकी तरफ़ से यह इनाम लेता जा !'

सोलोवीव कुछ देर तक झूमता हुआ खड़ा रहा। उसके नेत्रों में शहीदों का-सा भाव था...मुँह आधा खुला था और उसके दोनों ओर दुःख की झुर्रियाँ थीं।

'भाग जा, भाग जा ! मुझे तेरे जैसों की शक्ल देखना भी गवारा नहीं है !' लियूबा ने फिर चिल्लाकर कहा, 'जल्लाद ! सूअर !'

सोलोवीव ने दोनों हाथों से मुँह ढक लिया और मुड़कर इस प्रकार चल दिया मानो न तो उसे अपने रास्ते का पता था और न वह यही जानता था कि वह किधर जाना चाहता है।

नवाँ अध्याय

और टमारा के वचन सच्चे साबित हुए। जेनी की मृत्यु के बाद, दो सप्ताह में ही, ऐम्मा ऐडवार्डोवना के घर पर एक के बाद दूसरी, ऐसी भीषण घटनायें घटीं, जैसी आम तौर पर वर्षों में भी नहीं होती हैं।

जेनी की अन्त्येष्टि के दूसरे ही दिन अभागी पाशा को पागलखाने भेज देना पड़ा क्योंकि उसके दिमाग ने बिल्कुल ही काम करना बन्द कर दिया था। डाक्टरों ने राय दी कि उसका अब अच्छा होना असम्भव है; और सचमुच उसको पागलख़ाने के अस्पताल में जैसा एक गद्दे पर ले जाकर रखा गया था, वैसी ही वह उस पर, बिना उठे, मरते दम तक पड़ी रही। दिन पर दिन उसका दिमाग़ और ख़ाली होता गया और वह वैसी ही चुपचाप पड़ी की पड़ी रही; मगर उसकी मृत्यु अस्पताल में पहुँचने के छः मास बाद, बिस्तर में पड़े-पड़े शरीर में घाव हो जाने और उससे खून में ज़हर फैल जाने पर हुई।

उसके बाद टमारा की बारी आई।

पन्द्रह दिन तक लगभग उसने ख़ाला का काम बड़ी मुस्तैदी से किया। हर वक्त वह कुछ न कुछ करती हुई इधर-उधर द

फ़ुर्ती से घूमती-फिरती थी, मगर उसके मन में भीतर ही भीतर कुछ हो रहा था, जिसमें वह व्यस्त दीखती थी। एक दिन शाम को वह भी ग़ायब हो गई और फिर चकले में न लौटी...

बात यह थी कि शहर के एक अमीर वकील से, बहुत दिनों से, वह प्रेम करती थी, जो था तो बड़ा धनवान, मगर साथ ही बड़ा कंजूस भी था। साल भर हुआ, जब उसकी इस वकील से जान-पहिचान एक जहाज पर हो गई थी, जिसमें दोनों एक पड़ोस के बन्दरगाह को जा रहे थे। चतुर और सुन्दर टमारा, उसकी चितवन और मुसकान, उसकी चटपटी बातें और उसकी सादगी ने इस अमीर वकील को मोह लिया था। टमारा ने भी मन ही मन इस बूढ़े, पर शान-शौकतवाले आदमी को, जो किसी बड़े कुल का लगता था, अपने लिए चुन लिया था ; परन्तु टमारा ने उसे अपना असली पेशा नहीं बताया। उसे रहस्य में रखना टमारा को अच्छा लगा। उसने कुछ-कुछ इतना इशारा ज़रूर किया कि वह एक औसत घराने की शादी-शुदा औरत है, जिसका गृह-जीवन सुखी नहीं है, क्योंकि उसका पति बड़ा कठोर और जुआरी है और दुर्भाग्य से उसके कोई बाल-बच्चा भी नहीं है। जुदा होते वक्त जब वकील ने उससे अपने साथ एक शाम गुज़ारने की प्रार्थना की तो उसने साफ़ इनकार कर दिया। यहाँ तक कि फिर कभी मिलने तक का उसने इरादा नहीं दिखाया। हाँ, ख़त-किताबत जारी रखने के लिए उसने कोई उज्र नहीं किया और उसको अपना एक झूठा नाम बताकर डाकखाने की मारफ़त ख़त भेजने को कह दिया। फिर उन दोनों में ख़त-किताबत शुरू हुई और वकील साहब ने अपने प्रेम-पत्रों में अपने दिल की सारी कविता उड़ेल-उड़ेलकर रख दी ; परन्तु उसने अपना वही रहस्यपूर्ण ढङ्ग जारी रखा।

फिर वकील साहब की बड़ी प्रार्थनाओं के बाद वह उनसे प्रिन्स पार्क में मिलने पर राज़ी हुई, जहाँ मिलने पर उसने वकील साहब से

प्रेम का बड़ा ललचाने और लुभानेवाला व्यवहार किया ; परन्तु उनके साथ कहीं जाने पर राज़ी नहीं हुई।

इस प्रकार वह बड़ी चतुराई से अपने प्रेमी के मन में बुढ़ापे की प्रेमाग्नि भड़काती और बढ़ाती रही जो कि जवानी की प्रेमाग्नि से कहीं भयङ्कर होती है। आखिरकार अबकी ग्रीष्म में, जब कि वकील साहब के घर के लोग कहीं बाहर चले गये, उसने वकील साहब के घर जाना निश्चय किया। वहाँ जाकर आँखों में आँसू लाकर, मानो उसका मन अपनी गलती पर बड़ा दुखी हो, परन्तु साथ ही ऐसे कोमल और उत्तेजित प्रेम से, पहली बार उसने वकील साहब को ऐसा प्रभावित किया कि बेचारे वकील साहब बिल्कुल आपे में न रहे और उस बुढ़ापे के प्रेम में ग़र्क हो गये जो निरा अन्धा और पागल होता है और जिसमें पड़कर मनुष्य को अपनी आख़िरी चीज़ अर्थात हँसी का डर भी जाता रहता है।

टमारा उससे बहुत कम मिला करती थी, जिससे बूढ़े की बेसब्री और भी बढ़ती थी। वह उससे भेंट में फूल ग्रहण करने और उसके साथ एक साधारण होटल में मामूली नाश्ता करने को तो राज़ी हो जाती थी, परन्तु कोई कीमती चीज़ भेंट में उससे लेने को वह कभी राज़ी नहीं होती थी, जिससे वकील साहब को कभी उसे कुछ रुपया देने की हिम्मत नहीं होती थी। एक बार जब वकील साहब ने उससे सकुचाते-सकुचाते एक अलग मकान और दूसरी आसाइशों का प्रस्ताव किया तो उसने उनकी तरफ ऐसे क्रोध से घूरकर देखा कि वकील साहब का चेहरा, सफेद बालों के बीच में, बच्चों की तरह शर्म से लाल हो गया और वह उसके हाथ चूमते हुए, सिटपिटाकर न जाने क्या गिटपिट-गिटपिट करते हुए माफ़ियाँ माँगने लगे।

इस प्रकार टमारा वकील साहब को छकाती रही और दिन पर दिन उनका विश्वास अपने ऊपर बढ़ाती रही। धीरे-धीरे उसने यह जान लिया कि वकील साहब किस रोज़ अपनी लोहे की तिज़ोरी में

खासतौर पर अधिक रुपया रखा करते हैं, मगर उसने किसी मामले में जल्दी कभी नहीं दिखाई, जिससे कहीं काम वक्त से पहले बिगड़ न जाय।

आखिरकार जिस दिन का टमारा इन्तज़ार कर रही थी, आ गया। हाल ही में एक बड़ा मेला खत्म हुआ था, जिससे वकीलों के दफ़्तरों में व्यापारियों का बहुत-सा रुपया लेनदेन के लिए आ रहा था। टमारा को मालूम था कि वकील साहब शनिवार को जाकर सारा रुपया बैंक में जमाकर देते हैं, जिससे रविवार के दिन वह निश्चिन्त होकर मौज उड़ा सकें ; अतएव शुक्रवार के दिन एक आदमी वकील साहब के पास यह खत लेकर पहुँचा !

'मेरे प्यारे ! मेरे उपास्य राजा सोलोमन! तुम्हारी बगीची की छोकरी सुलामिथ के गरम-गरम बोसे तुम्हारे पास पहुँचें...मेरे प्यारे, आज मुझे छुट्टी है और मैं बड़ी खुश हूँ। आज मैं भी खाली हूँ और तुम भी खाली होगे। मेरा पति एक दिन के लिए काम से बाहर चला गया है और मैं सारी शाम और सारी रात, तुम्हारे यहाँ गुज़ारना चाहती हूँ। आह, मेरे प्यारे ! मैं तमाम ज़िन्दगी तुम्हारे पास में गुज़ारने को तैयार हूँ। दूसरी जगह मैं कहीं न जाऊँगी ! होटलों और नाचघरों से मेरा जी ऊब गया है। मैं तुम्हारे...केवल तुम्हारे पास...अकेले में...रहना चाहती हूँ। अतएव मेरे प्यारे, आज शाम के दस-ग्यारह बजे मेरी राह देखना। काफ़ी तादाद में ठण्डी सफ़ेद शराब, मीठे अखरोट और ताश तैयार रखना, मैं तुमसे मिलने के लिए मरी जा रही हूँ ! शाम तक ठहरना भी मेरे लिए मुश्किल हो रहा है ! मुझे लगता है, मैं तुम्हें थका डालूँगी ! मेरा सिर घूम रहा है, आँखें जल रही हैं और हाथ-पाँव बर्फ़ की तरह ठण्डे हुए जाते हैं। मैं तुम्हें आलिङ्गन करती हूँ।

तुम्हारी
वेलेनटीना'

उसी दिन रात्रि को ग्यारह बजे, टमारा ने बड़ी चतुराई से, बातों ही बातों में, वकील साहब की अमीरी को सराहते हुए, उनसे अपनी तिजोरी खोलकर दिखाने को कहा। वकील साहब बड़ी खुशी से जब अपनी तिजोरी उसे खोलकर दिखाने लगे तो उसने चुपचाप उन गुप्त अक्षरों को देखकर यादकर लिया, जिनके मिलाने पर तिजोरी खुलती थी। जल्दी से तिजोरी की भीतरी दराज़ों और डिब्बों पर एक नज़र डालकर उसने बड़ी होशियारी की एक जँभाई ली, मानो उसे उसमें कोई रस न हो और बोली :

'हाय रामरे, वक्त कैसे मुश्किल से कटता है !'

और यह कहकर वकील साहब की गर्दन अपनी छाती से लगाकर, उनके कान पर अपने होंठ रखकर, वह अपनी गरम सासों से जलाती हुई, धीरे से बोली :

'बन्द करो इस वाहियात को, मेरे निधि ! चलो...यहाँ से चलें !'

और यह कहकर वह उठकर खाना खाने के कमरे में चली गई और वहाँ से चिल्लाकर बोली :

'आओ बोलोद्या ! यहाँ आओ ! जल्दी आओ ! मुझे शराब चाहिये और शराब के बाद प्रेम...अथाह प्रेम...अनन्त प्रेम...प्रेम...प्रेम...प्रेम !...नहीं ! पूरा जाम पियो ! खत्मकर डालो ! इसी तरह आज हम दोनों प्रेम भी पूरा-पूरा करेंगे !'

वकील साहब ने अपना गिलास उठाकर उसके गिलास से लगाया और गटगट एक घूँट में सारी शराब गले से उतार गये। मगर फिर वह होंठ सिकोड़कर बोले।

'अजीब बात है !...आज शराब कड़वी क्यों है ?'

'हाँ !' टमारा ने उसकी तरफ़ ग़ौर से देखते हुए कहा, 'इस शराब में हमेशा ही कुछ कड़वापन होता है। राइन की बनी शराबें ऐसी ही होती हैं...'

'मगर आज की शराब विशेष तौर पर कड़वी है' वकील साहब ने कहा, 'नहीं, धन्यवाद मेरी प्यारी—और मैं नहीं पियूँगा !'

पाँच मिनट के बाद वकील साहब, कुर्सी पर बैठे-बैठे ही, सिर पीछे को फेंककर और जबड़े लटकाकर, खुर्राटे लेने लगे। टमारा कुछ देर तक चुप रही और फिर उन्हें जगाकर देखने लगी, मगर वकील साहब टस से मस न हुए। उसने उठकर जलती हुई मोमबत्ती उठाकर सड़क की तरफ़ खिड़की पर रख दी और बाहर के द्वार पर जाकर खड़ी होकर, किसी के आने की आहट सुनने लगी। धीरे से उसने द्वार खोला और सूट-बूट में, जैन्टिलमैन की तरह, हाथ में एक बिल्कुल नया चमड़े का बैग लिये हुए, सेनका घुसा।

'तैयार है ?' चोर ने धीरे से उसके कान में पूछा।

'सो रहा है,' टमारा ने उसके कान में जवाब दिया, 'देखो, यह है तिज़ोरी की चाबी।'

दोनों तिजोरीवाले कमरे में गये। तिजोरी के ताले को टॉर्च की रोशनी से देखकर, सेनका धीरे से बड़बड़ाया :

'कम्बख्त ! बूढ़ा जानवर ! मैं पहले ही सोचता था कि तिजोरी के ताले में कोई भेद ज़रूर होगा ! इन अक्षरों को खास तौर पर मिलाने पर ही यह ताला खुल सकता है ! उनका भेद तो मालूम नहीं है ; अतएव बिजली से इस ताले को गलाना होगा ! न जाने गलाने में कितना समय लग जाय !'

'नहीं, गलाने की जरूरत नहीं है' टमारा ने जल्दी से उत्तर में कहा, 'मुझे अक्षरों का भेद मालूम है...जेड...ई...एन...आई...और टी...मिलाओ...एच छोड़ दो।'

दस मिनट के बाद दोनों सीढ़ियों से उतर कर, मकान से चल दिये। जान-बूझकर वे कई गलियों का चक्कर काटते हुए गये। पुरानी बस्ती में पहुँच जाने पर उन्होंने दूकान के लिए गाड़ी किराये पर की,

और फिर दोनों, भले आदमियों की तरह, बाक़ायदा पासपोर्टों के साथ, स्टेविन्स्की और उसकी स्त्री के नाम से, शहर छोड़कर चले गये। बहुत दिनों तक उनका कोई समाचार नहीं मिला। अन्त में सेनका मॉस्को में एक बड़ी चोरी में पकड़ा गया और पुलिस के जिरह करने पर टमारा का नाम भी बता दिया। दोनों पर मुक़दमा चला और सजा हो गई।

टमारा के बाद भोली-भाली, सब पर विश्वास कर लेनेवाली, प्रेम के रङ्ग में रँगी वेरका की बारी आई। बहुत दिनों से वह एक नीम-फौजी आदमी से प्रेम करती थी, जो अपने आपको फौजी विभाग में शहरी क्लार्क बताता था। उसका नाम डिलेक्टोरस्की था। वेरका उस पर लट्टू थी और वह एक देवता की तरह वेरका से प्रेम की भेंट लेता था। ग्रीष्म के अन्त से वेरका ने देखा कि उसके प्रेमी का उसके प्रति स्नेह दिन पर दिन ठण्डा और लापरवाही का होता जाता था। उससे बात-चीत करते हुए उसका मन कहीं दूर रहा करता था, अतएव वेरका बड़ी दुखी रहने लगी थी और ईर्ष्या में भर-भरकर उससे तरह-तरह के प्रश्न पूछती थी; मगर हमेशा उत्तर ऐसे-वैसे ही पाती थी, जिनमें कुछ-कुछ किसी आनेवाले दुर्भाग्य और शायद अकाल मृत्यु की सम्भावना की झलक होती थी।

सितम्बर के शुरू में उसने आखिरकार स्वीकार किया कि उसने सरकारी रुपया ग़बन कर लिया था। काफ़ी रुपया—करीब तीन हज़ार। पाँच-छः दिन में हिसाब-किताब की जाँच होनेवाली थी, जब उसकी बेईमानी मालूम हो जायगी और वह पकड़ा जायगा, जिसमें बदनामी होगी, मुकदमा चलेगा और आखिर में जेल हो जायगा। इतना कहकर फौजी विभाग का शहरी क्लार्क सिसकियाँ भरने लगा और दोनो हाथों से अपना सिर पकड़कर कहने लगा, 'मेरी गरीब माँ! हाय, उस बेचारी का क्या होगा? उसको यह अपमान असह्य होगा... नहीं, इस सबसे तो मौत ही अच्छी है!'

यद्यपि वह इस प्रकार उपन्यासों के पात्रों की तरह—जैसा वह हमेशा करता था—नाटक ही कर रहा था, जो कर-करके उसने भोली वेरका का प्रेम जीत लिया था, फिर भी एक बार आत्महत्या का विचार उसके मनमें आ जानेपर फिर वह उसे लगातार सताने लगा।

एक दिन वह बड़ी देरतक किसी तरह प्रिन्स पार्क में वेरका के साथ टहलता रहा। पतझड़ से बर्बाद इस प्राचीन पार्क में, वृक्षों में रङ्ग-बिरङ्गी; तरह-तरह की लाल, पीली, नीली, नारंगी और अङ्गूरी पत्तियों की कोंपलें फूट निकली थीं, जिससे ठण्डी-ठण्डी हवा में से भीनी-भीनी सुगन्ध निकलकर फैल रही थी, परन्तु फिर भी झाड़ियों, पेड़ों और घास से मृत्यु की एक अजीब गन्ध भी आती-सी लग रही थी।

डिलेक्टोरस्की द्रवित हो गया और अपना दिल खोलकर, अपने ऊपर तरस करने और रोने लगा। वेरका भी उसके साथ रोने लगी।

'आज मैं आत्महत्या कर डालूँगा!' डिलेक्टोरस्की ने अन्त में कहा, 'अब किस्सा खत्म है...' 'नहीं, मेरे प्यारे नहीं! मेरे सर्वस्व हरगिज नहीं!...'

'नहीं, अब असम्भव है' डिलेक्टोरस्की ने बड़ी गम्भीरता से कहा, 'वह कम्बख्त रुपया!...क्या चीज प्यारी है—इज्जत या मृत्यु?'

'मेरे प्यारे...'

'नहीं-नहीं, कुछ न कहो, ऐनेटा!' चूँकि उसे वेरका' नाम पसन्द नहीं था; इसलिए वह इस शानदार नाम से वेरका को बुलाया करता था—वह बोला, 'कुछ न कहो। सब तय हो चुका है!'

'हाय, काश मेरे पास इतना रुपया होता!' वेरका ने दुखी होकर कहा, 'मैं तुम्हारे लिए अपनी ज़िन्दगी तक देने को तैयार हूँ...अपना क़तरा-क़तरा ख़ून तुम्हारे लिए दे देने को तैयार हूँ...'

'ज़िन्दगी क्या है?' डिलेक्टोरस्की ने सिर हिलाकर, निराशा का

नाटक करते हुए कहा—'आखिरी सलाम लो, ऐनेटा ! मेरा आखिरी सलाम लो !...'

छोकरी हताश होकर सिर हिलाने लगी, 'नहीं, मैं नहीं चाहती !... मैं ऐसा सह नहीं सकती !...मुझसे यह न सहन होगा !...मुझे भी ले चलो !...मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगी !...'

शाम को काफी देर हो जाने पर डिलेक्टोरस्की ने जाकर एक बढ़िया होटल में एक कमरा किराये पर लिया। वह जानता था कि कुछ घण्टे बाद वह और वेरका दोनो ही लाश हो जायेंगे, अतएव उसकी जेब में सिर्फ़ ग्यारह रुपये ही होने पर उसने नवाबों की तरह शराब और खाने-पीने की बढ़िया-बढ़िया चीज़ें इस तरह मँगानी शुरू कर दीं मानो वह हमेशा का बड़ा ऐय्याश और खर्चीला हो। काफ़ी और शराब के साथ-साथ उसने दो बोतलें शैम्पेन की भी मँगाईं। उसे पूरा विश्वास था कि वह आज अपने ऊपर गोली मार लेगा, परन्तु फिर भी वह कुछ दिखावा-सा कर रहा था, मानो कि एक तरफ खड़े होकर वह अपने आपको देखता हो और अपने दुखान्त नाटक को स्वयं सराहता हो और अपनी मृत्यु पर अपने रिश्तेदारों की निराशा और अपने साथी दफ़्तरवालों के आश्चर्य पर ख़ुश हो रहा हो। वेरका भी यह कह चुकने के बाद कि वह भी अपने प्यारे के साथ जान दे देगी, अपने निश्चय में पूरी तरह दृढ़ हो गई थी। उसको आनेवाली मौत से कोई डर नहीं लग रहा था।

'कहीं सड़क पर मरने से, मेरे प्यारे, यह कहीं अच्छा है कि आज मैं तुम्हारे साथ-साथ मरूँगी ! यह मौत कम से कम मीठी तो होगी !'

यह कहकर वह उसे बार-बार चूमती थी, हँसती थी और अपने घूँघरवाले बाल बिखेरे, आँखें चमकाती हुई, सदा से कहीं अधिक सुन्दर लग रही थी।

आखिरकार अन्तिम विजय की घड़ियाँ भी आ गईं।

'हम दोनो ने जी भरकर मज़ा कर लिया, ऐनेटा...हमने अपने जमा

का आखिरी बूँद तक पी लिया है, अतएव कवि के शब्दों में अब, 'उसे फेंककर तोड़ डालने के लिए तैयार हो जाना चाहिए !' डिलेक्टोरस्की ने कहा—'तुम्हें पश्चात्ताप तो नहीं हो रहा है, मेरी प्यारी ?...'

'नहीं, नहीं !...'

'तैयार हो ?'

'हाँ, हाँ !' उसने मुसकराते हुए धीरे से कहा।

'तो फिर दीवार की तरफ मुँह फेरकर आँखें बन्द कर लो !'

'नहीं, नहीं, मेरे प्यारे, मैं इस तरह नहीं चाहती !...यों मैं नहीं चाहती ! मेरे पास आओ ! हाँ, ऐसे ठीक है अब ! और नजदीक आओ और नज़दीक ! अपनी आँखें मेरी तरफ करो—मैं उनको घूरती रहूँगी। अपने होंठ इधर करो—मैं तुम्हें चूमती रहूँगी और तुम...मैं बिल्कुल नहीं डरती !... हिम्मत करो !...और ज़ोर से मुझे चूमो !...'

उसने वेरका को गोली मार दी और फिर जब उसने अपने हाथों के भयङ्कर कृत्य को देखा तो वह डर से काँप उठा। वेरका का आधा नङ्गा शरीर पलँग पर पड़ा अभी तक छटपटा रहा था। डिलेक्टोरस्की पाँव काँप रहे थे, मगर कायर और कुकर्मी की बुद्धि काम कर रही थी ; उसमें अपनी बगल के पास की खाल खींचकर उसमें से गोली मार लेने की अभी तक शक्ति बाक़ी थी, अतएव जब पिस्तौल का घोड़ा खींचकर दर्द से चीखकर वह गिरा, तब वेरका के शरीर की आखिरी तड़प बन्द हो रही थी।

वेरका की मृत्यु के दो सप्ताह बाद भोली, खिलाड़ी, नम्र और झगड़ालू नन्ही मनका भी चल बसी। चकलों में आमतौर पर होनेवाले झगड़ों में से एक झगड़े में किसी ने उसके सिर पर एक बोतल इतने ज़ोर से मारी कि उसका सिर फट गया और वह वहीं मरकर गिर पड़ी ; मगर किसने उसे मारा इसका पता आखिर तक नहीं चला।

ऐम्मा ऐडवार्डोवना के चकले में ऐसी, एक के बाद दूसरी, भीषण घटनाएँ घटीं कि वहाँ की एक भी निवासिन भयङ्कर मृत्यु और बदनामी

से न बच सकी।

आखिरी, सबसे भयङ्कर और सबसे बड़ी जो घटना घटी, वह सैनिकों के द्वारा कटरे के चकलों का सर्वनाश था।

दो सिपाहियों को रात में रुपया भुनाने के समय दाम कम दिये गये और उन्हें पीटकर सड़क पर फेंक दिया गया था, अतएव फटे-कपड़ों और ख़ून से लथपथ वे जब अपनी फौज में पहुँचे तो उनके दूसरे साथी सिपाही दिनभर छुट्टी मनाकर अब उसे खत्म कर रहे थे, उनकी हालत देखते ही आग-बबूला हो उठे और आधे घण्टे के अन्दर-अन्दर लगभग सौ सिपाही कटरे पर टूट पड़े और घर के बाद घर को लूटने और उजाड़ने लगे। उनके साथ और भी असंख्य आदमी, सड़कें और मोरियाँ साफ़ करनेवाले भङ्गी, आवारे, गुण्डे, ठग और औरतों के दलाल भी इस काम में शामिल हो गये। मकान की सारी खिड़कियों के शीशे और पियानो तोड़-फोड़कर चूर-चूरकर डाले गये। परों से भरे हुए पँलगों के गद्दे चीर-फाड़कर सड़कों पर फेंक दिये गये। उनके पर दो रोज़ तक तमाम कटरे में बरफ़ के सफेद-सफेद टुकड़ों की तरह उड़ते हुए फिरते रहे। वेश्यायें नङ्गे सिर, बिल्कुल नङ्गी, सड़कों पर निकाल दी गईं। चौकीदारों और दरवानों को पीट-पीटकर मार डाला गया। ट्रेपेल की पेढ़ी का तमाम सुन्दर फर्नीचर और रेशमी सामान भीड़ ने चीर-फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर डाला, और शराब की तमाम दूकानें, विश्रामगृह, और होटल भी लूटपाटकर तबाह कर डाले गये।

शराबी, खूनी तथा भयङ्कर मारकाट कई घण्टे तक जारी रही। आखिरकार फौजी अधिकारियों ने, आग बुझाने के इञ्जनों की मदद से, पानी फेंक-फेंककर, बड़ी मुश्किल से भीड़ को काबू में किया। अठन्नीवाले दो चकलों में आग भी लगा दी गई थी, परन्तु शीघ्र ही उनकी आग बुझा दी गई; मगर दूसरे दिन ही बलवा फिर शुरू हो गया और अब की बार तूफान सारे शहर में और उसके चारों ओर फैल गया। अचानक

बलवे ने उन यहूदियों की मारकाट का स्वरूप धारण कर लिया जो अक्सर यहूदी-विरोधी बस्तियों में यूरूप में हो जाया करती थीं। तीन दिन तक भयङ्कर मारकाट और लूटमार जारी रही।

आख़िरकार एक सप्ताह के बाद गवर्नर जेनरल ने कटरे और सारे शहर भर में चकलों के बन्दकर देने का हुक्म निकाल दिया। चकलों की मालकिनों को सिर्फ एक सप्ताह अपनी जायदाद सम्बन्धी मामले और हिसाब-किताब ठीक कर लेने के लिए दे दिया गया। तबाह, बर्बाद, लुटी हुई तथा सारी पुरानी शानोशौक़त ख़त्म हो जाने पर बेचारी, दयनीय, खूसट, मुर्झाई हुई मालकिनें और मोटे चेहरों और भारी आवाज़ की ख़ालाजानें जल्दी-जल्दी अपना बोरिया-बिस्तर बाँधने लगीं और एक महीने के बाद कटरे के नाम में सिर्फ उन रङ्गीले, चमकीले, भड़कीले और झगड़ों और फ़िसादों के घरों—भयङ्कर चकलों—की याद ही बाक़ी रह गई।

शीघ्र ही कटरे का नाम भी बदलकर एक सुन्दर और अच्छा नया नाम रख दिया गया, जिससे उन भयङ्कर बातों की याद भी फिर लोगों को न आ सके।

और तमाम हेन्रीटा, किटी, लेलका, पोलका इत्यादि छोकरियाँ और स्त्रियाँ, जो भोलीभाली, मूर्ख, हास्यास्पद और दयनीय थीं और अधिकतर छली हुई और बिगड़ी आदतों के बच्चों की तरह थीं, इस मुहल्ले से निकलकर शहर भर में फैल गईं और शहर की बस्ती में घुल-मिल गईं। इनसे एक नया समाज उत्पन्न हुआ—घूमने-फिरने और गलियों में चक्कर लगानेवाली वेश्याओं का नया समाज। उनके जीवन का हाल जो कि बिल्कुल ऐसा ही दयनीय और बेढब है, परन्तु जिसके रस और तरीके दूसरे हैं, इस उपन्यास का लेखक, जो कि इस उपन्यास को नौजवानों, युवतियों और माताओं की भेंट करता है, फिर कभी एक दूसरे उपन्यास में लिखेगा!

आख़िरी बात

मनुष्य समाज के एक प्राचीन, अधम और भयङ्कर रोग का, जो आधुनिक काल की यांत्रिक और बाजारू सभ्यता में दिन पर दिन अधिक जटिल और विस्तृत होता जा रहा है, नग्न और वास्तविक स्वरूप इस उपन्यास में देखकर पाठकों के मन में तरह-तरह के विचार उठने लगे होंगे ! कुछ मित्र समझते हैं कि इस उपन्यास को पढ़कर अपरिपक्व विचार के नौजवानों के मन पर बुरा असर हो सकता है ; मैं नौजवानों को इतना बुरा नहीं समझता। मैं तो मानता हूँ कि नौजवान स्वभाव से सत्य को अधिक समझते हैं और सत्य के अधिक निकट रहते हैं। उनके मन पर सत्य का असर अच्छा ही होने की सम्भावना है। मैं उन विचार के लोगों से सहमत नहीं, जो सत्य को नौजवानों से छिपाना चाहते हैं, अथवा कुछ विषयों का ज्ञान नौजवानों को देना खतरनाक समझते हैं। सच तो यह है कि अज्ञान ही सब से खतरनाक होता है और जिस विषय का यह उपन्यास है, उसका अज्ञान तो हमारे देश के नौजवानों को ही नहीं, अपने आपको ज्ञानी समझनेवाले प्रौढ़, बड़े-बूढ़ों और समाज-सुधारकों को भी बहुत कुछ

है। जिनके मन में गन्दगी घुस चुकी है—खुली या छिपी हुई—वे तो संसार के पवित्र से पवित्र ग्रन्थ से भी अपने मन की गन्दगी को सींच सकते हैं। उनका इलाज किसी के पास नहीं; परन्तु जिनका मन स्वस्थ है, उन-पर मुझे विश्वास है—इस उपन्यास का असर अच्छा ही होगा। वे इस उपन्यास को पढ़कर फिर कभी वेश्याओं को क्रोध और अपमान की दृष्टि से न देखकर समाज की उन प्रथाओं, रूढ़ियों, संस्थाओं और शक्तियों को—समाज के उन स्तम्भों और पुरुषों को—क्रोध और अपमान की दृष्टि से देखेंगे, जो वेश्यावृति के मूल कारण हैं; परन्तु ऐसे पाठकों के मन में यह सन्देह उठ सकता है कि क्या सचमुच भारतवर्ष में भी वेश्यावृत्ति की समस्या ऐसी ही है जैसी लेखक ने इस उपन्यास में दिखाई है। मैं भूमिका में इसका ज़िक्र करते हुए कह चुका हूँ कि मेरी राय में भारतवर्ष में भी वेश्यावृत्ति की मूल समस्या बिल्कुल वैसी ही है जैसी कि ऐलेक्ज़ेन्डर कुप्रिन ने अपने इस उपन्यास में दिखाई है। हाँ, ऊपरी और छोटी-मोटी बातों में कुछ फ़र्क़ भले ही हो सकता है। इस विचार की पुष्टि में, मैं श्री ठाकुर शिवनन्दन सिंह के प्रख्यात ग्रन्थ 'देशदर्शन' के कुछ अंश पाठकों की सेवा में उद्धृत करता हूँ। श्री ठाकुर शिवनन्दनसिंहजी अपने ग्रन्थ 'देशदर्शन के' तीसरे संस्करण में 'अन्यान्य रुकावटें' नाम के अध्याय में १७६ पृष्ठ पर लिखतें हैं :—

'ख़ैर, जो हो; मुझे इस लेख में यह दिखाना अभीष्ट नहीं है कि भारतवर्ष में विलायत से, अथवा विलायत में भारत से अधिक व्यभिचार है। मेरे इस कथन का अभिप्राय केवल इतना ही है कि दूसरों की फूली देखना और अपना ढेढर न देखना अच्छा नहीं; अर्थात् हम दूसरों का दोष देखकर उन पर हँसते हैं, परन्तु अपने दोष पर आँखें बन्दकर लेते हैं। इस बात की जाँच के लिए मैं आपको ब्रिटिश राज्य के—जहाँ कि चौबीसों घण्टे सूर्य अस्त नहीं होता—दूसरे नम्बर

के शहर में, भूमण्डल के प्रधान बारहवें नम्बर के शहर में और भारत के सबसे बड़े शहर कलकत्ते में, जो जन-संख्या के हिसाब से बम्बई, दिल्ली, लाहौर आदि सब शहरों से बड़ा है, ले चलता हूँ। आइये, पहले इस शहर की जाँच घूमकर करें। घबराइये नहीं। लोगों को उँगली उठाने दीजिये, हँसने दीजिये। शरम की बात तो उस समय होती जब हम तमाशबीनी करने या ऐशो-इशरत करने जाते होते। हम लोग तो मर्दुमशुमारी के अफसरों की तरह देश की सच्ची दशा की जाँच करने चल रहे हैं।

मछुआ बाज़ार

मीलों तक सड़क के दोनों तरफ मकानों के ऊपर के खण्डों में वेश्याएँ खचाखच भरी हैं। ये बहुधा मारवाड़िनें और एतद्देशीय हैं। जैसे दरबे में कबूतर कसे रहते हैं, वैसे ही मकान का किराया अधिक होने से एक-एक कमरे में चार-चार, पाँच-पाँच वेश्याएँ सड़ा करती हैं। सड़क की पटरियों पर जगह-जगह आठ-आठ दस-दस बँगाली लड़कियाँ एक कतार में नाके-नाके पर खड़ी हैं। इनका स्थान उसी नाके की ठीक सामनेवाली गली में है। खुले आम, बीच सड़क में लोग इन अनाथ लड़कियों से मज़ाक करते हैं। उस झुण्ड या क़तार में, जिसकी तरफ़ इशारा हो जाता है, उसे पुरुष के साथ अपने स्थान को प्रस्थान करना पड़ता है— कैसी अनोखी सभ्यता है!

लोअर चितपुर रोड के पीछे कोई महल्ला

इस महल्ले का नाम स्मरण नहीं आता। यहाँ की दुर्दशा देखकर कलेजा फट जाता है। खून पानी हो जाता है। कई सौ घर बङ्गाली वेश्याओं के हैं। गलियों से भीतर का कोई-कोई हिस्सा दिखाई देता है। आनन्द पूर्वक निडर होकर लोग तख्तों पर मसनद लगाये, ताश

खेल रहे हैं और लज्जा त्यागकर खुले आम हर तरह का मज़ाक कर रहे हैं। सबसे घृणित बात यह है कि इन वेश्याओं में बहुतों की आयु दस वर्ष से अधिक न होगी। पर हाय पेट, हायरी दरिद्रता और उन्हें गहरी कंदरा में गिरानेवाले पुरुषों की सभ्यता! हम, तुम तीनों को नमस्कार करते हैं।

सोनागाछी

यहाँ भी वही हृदय-विदारक दृश्य है। रास्ता चलना मुश्किल है। कामकाजी लोग इस रास्ते से होकर नहीं जाते, रास्ता बचाकर किसी दूसरी तरफ़ से निकल जाते हैं। यहाँ वेश्याएँ राह चलते हाथ पकड़ लेती हैं, टोपी या डुपट्टा ले भागती हैं! समाज से गिरी हुई लड़कियों की अत्यन्त दीन दशा, बेहयाई की आख़िरी हद और भारत की सभ्यता की तीसरी झलक यहाँ दीखती है!

इनके अतिरिक्त एक महल्ला गोरी (यूरोपियन) वेश्याओं से भरा है। यहाँ अँगरेज़ तो बिरले ही देख पड़ते हैं; हाँ मनचले भारतवासी ठोकरें खाने के लिए अवश्य आया करते हैं। एक नवयुवक अग्रवाल ग्रेजुएट डिप्टी कलेक्टर (शायद हमी लोगों की तरह जाँच करते हुए!) एक मित्र के साथ इन्हीं गोरी वेश्याओं में से एक के यहाँ पहुँच गये। एक तुच्छ बात पर मतभेद होने से उस अभिमानिनी वेश्या ने डिप्टी साहब पर गुस्से से हाथ चला दिया! डिप्टी साहब अपने मुँह से कहते थे कि दोनों मित्र यदि जूता हाथ में ले दौड़कर भाग न जाते, तो खूब ही पिटते और ऊपर से पुलिस के हवाले कर दिये जाते!

वे कहने लगे—'इस दुर्घटना से मेरे मित्र जिनका मैं मेहमान था, बहुत दुखी हुए। अपनी और मेरी झेंप मिटाने के लिए मुझसे कुछ न कहकर वे मुझे एक मनोहर बेल, लता और पुष्पों से सुशोभित

सुंदर बँगले में ले गये। यह सुनकर कि यह एक वेश्या का बँगला है, मैं सन्न रह गया। डरा कि कदाचित यहाँ भी न ठुक जायँ, पर यहाँ का बर्ताव देशी वेश्याओं के बर्ताव से भी अच्छा निकला! यह एक यहूदिन वेश्या का बँगला था। ऐसे बहुत से बँगले कलकत्ते में हैं। मैं पन्द्रह दिन तक कलकत्ते में रहा और अक्सर शाम को किसी ऐसे ही बँगले में आनंदपूर्वक समय व्यतीत करता रहा।'

गिनते जाइए, यह सभ्यता का चौथा नमूना है!

एडेन गार्डेन

मैं—(चौंककर) क्यों जी, यह अनोखी विक्टोरिया सब्ज़ा पेयर तो मोतीबाबू की है न?

मेरे मित्र—(मुसकराकर) खूब, गाड़ी और जोड़ी तो पहिचान गये, पर उसके मालिक सवारों पर आँख नहीं ठहरती।

मैं—अरे, यह तो स्वयं मोती बाबू हैं; पर उनके बग़ल में यह कौन है?

मेरे मित्र—उन्हीं की घरवाली।

मैं—अजी जाओ भी, क्या मैंने उनकी बीबी को नहीं देखा है! यह तो रंग-ढंग से कोई वेश्या मालूम पड़ती है। लेकिन...।

मित्र—वेश्या बीबी नहीं तो और क्या है? 'लेकिन' के बाद चुप क्यों हो गये? तुम्हें आश्चर्य है कि मोती बाबू गौहरजान के साथ बैठकर हवा खाने निकले हैं। अरे, यह कलकत्ता है। वह देखो, जौहरी जी मलका को लिये उड़े जा रहे हैं।

मैं—और सामने बच्चा किसका बैठा है?

मित्र—जौहरी महाशय का। अभी से सीखेगा नहीं तो आगे बाप का नाम कैसे रखेगा!

मैं—छिः! क्या बेहयाई है, कैसी बेशरमी है!

मित्र—बस, तुम गँवार ही रहे ! कैसी बेशरमी ? वह देखो गाड़ियों की तीसरी कतार—एक, दो, तीन (कोई बीस तक गिनाकर) जानते हो उनमें कौन हैं ? पहचानते हो ? सबकी सब वेश्याएँ हैं। वह देखो, सुशील बाबू उसे गुलदस्ता दे रहे हैं। डाक्टर बाबू फूलों का बटन उसकी साड़ी में लगा रहे हैं। ज़रा आँख खोलकर देखो—प्रमथ बाबू किस के गले में हाथ दिये घूम रहे हैं ? यहाँ दिनभर लोग कसकर काम करते हैं, शाम को यदि थोड़ा दिल बहलाव न करें तो मर ही जायँ। रही घर की स्त्रियाँ ; सो अव्वल तो उनसे यदि आज़ादी से बातचीत करें, तो मा-बाप तानों से बेध डालें और दूसरे उन्हें अपनी गृहस्थी और बालबच्चों के रोने-धोने से कहाँ फुरसत है, जो दिनभर के थकेमादे पति का दिल बहला कर उसकी थकावट दूर कर सकें। तुम विलायत में तो रहते नहीं कि हम भारतवासियों के गृह-सौख्य का हाल न जानते हो। हम लोगों का घर तो नरककुण्ड समझो। यह सभ्यता बेशरमी नहीं है, कलकत्ते में इसकी परम आवश्यकता है।

थियेटर।

यहाँ भी वही बात। आरकेस्ट्रा की कोच पर दो सीटें हुआ करती हैं। प्रायः सभी कोचों पर बाईजी (वेश्याएँ) और सेठजी साथ साथ बैठे हैं। किसी भी अमीरज़ादे की बग़ल इन शरीफ़-ज़ादियों से ख़ाली नहीं होती। तमाशा ख़तम होने पर सेठ-साहूकार तो अपनी-अपनी चिड़ियों के साथ हवागाड़ियों पर हवा हो गये, रहे किराये की गाड़ी करनेवाले ; सो जिसे देखिये वही गाड़ीवालों से किसी न किसी 'जान' के मकान का किराया ते कर रहा है। यदि मण्डली का कोई आदमी घर जाने का नाम लेता है, तो दूसरे उसे समझा-बुझाकर ठीक कर लेते हैं। कहते हैं कि अरे यार, यह गोल्डन नाइट (शनिश्चर की रात) बड़ी मुश्किल से

सात दिन की कड़ी मेहनत के बाद प्राप्त होती है, इसे घर की नीरस स्त्री और कलह में नहीं खोना चाहिये।

ग्रीन-पार्टी।

रविवार को अक्सर दोपहर के बाद लोग शहर के बाहर बागबगीचों में, दस-दस, पाँच-पाँच-के गोल बाँधकर निकल जाते हैं। कहीं ग्रीन-सिरप (भङ्ग) उड़ता है और कहीं हाट वाटर (शराब) पेग परपेग चढ़ाया जाता है। हर पार्टी में पार्टी की कोई न कोई वेश्या अवश्य रहती है।

यह रिपोर्ट हम लोगों के भ्रमण करने की है। अब सरकारी कागज़ों से देखिये कि इस शहर की क्या दशा है।

सन् १८११ की मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि कलकत्ते शहर में १४,२७१ वेश्याएँ हैं। कलकत्ते की कुल स्त्रियों में से जिनकी उमर ७० से ४० वर्ष की है, प्रत्येक बारह स्त्री में एक वेश्या है! बारह से बीस वर्ष तक की आयु की स्त्रियों में प्रति सैकड़ा ६ वेश्यायें हैं! और १०६६ वेश्या-लड़कियों की आयु १० वर्ष से भी कम है! नब्बे फी सदी वेश्याएँ हिन्दू हैं।

भगवन्! बारह, दस या इससे भी कम आयु की वेश्याएँ!...इस अन्धेर के विषय में डाक्टर एस० सी० मैकेंज़ी एक स्थान पर और खाँ बहादुर मौलवी तमीज़खाँ दूसरे स्थान पर लिखते हैं कि—'बेचारी दीन लड़कियाँ पानी में फूलनेवाली लकड़ी के साथ पानी के टब में बिठाई जाती हैं; जिससे कि वे पुरुषों के समागम के लिए तैयार हो जायँ। कहीं-कहीं यह काम केले से लिया जाता है।'—'Insert a piece of sola and then make the unfortunate girls sit in water tubs or use plantains to train up more girls for prostitution. ?

डा० चेवर्स लिखते हैं—'Means are commonly employed

even by parents to render the immature girls opliviris by mechanical means'*

बस यहाँ तो सभ्यता का अन्त हो गया। २

सन् १८५२ ईसवी में कलकत्ते में १२४१६ वेश्याएँ थीं और उनमें से १०४६१ हिन्दू थीं।

× × ×

यह दशा केवल कलकत्ता शहर की ही नहीं है। इस खुले व्यभिचार का साइनबोर्ड भारत के प्रत्येक शहर के खास बाज़ार या चौक में दिखाई देगा। बम्बई का व्हाइट मारकेट (सफेद गली), लाहौर की अनारकली, दिल्ली की चावड़ी बाज़ार और लखनऊ का खास चौक वेश्याओं से भरे पड़े हैं। तीर्थराज, पापनाशक, पवित्र काशी नगर में संयुक्त प्रान्त के सब शहरों से अधिक वेश्याओं की संख्या है। डाक्टर और वैद्य भी यहाँ युक्तप्रान्त के सारे शहरों से अधिक हैं। (वेश्याओं की अधिकता के साथ डाक्टरों की संख्या ज्यादा होनी ही चाहिये।) प्रयाग, मथुरा, वृन्दावन और हरिद्वार तक इनका डेरा जमा रहता है। पवित्र भूमि 'कनखल' में भी आप इन्हें देख लीजिये। नैनीताल आदि पहाड़ों के ऊपर लोग कुछ ही महीनों के लिए जाते हैं। पर बाबू साहबों के साथ-साथ बाइयों (वेश्याओं) का डेरा भी बदायूँ, मुरादाबाद तथा बरेली तक से वहाँ पहुँच जाता है। अँगरेज़ तो शाम के वक्त बोटिङ्ग करते हैं, नीचे क्लब में फुटबाल आदि अनेक खेल खेलते हैं और बाबू साहबान किसी प्रेमिका के सड़े डेरे में अपने स्वास्थ्य का सर्वनाश करते हैं। पहाड़ से लौटे हुए एक अँगरेज़ और हिन्दुस्तानी का स्वास्थ उनके आचार की गवाही देने लगता है।

* अर्थात् माता-पिता तक स्वयं अपनी छोटी-छोटी कम उम्र की छोकरियों को कृत्रिम उपायों से पुरुषों से समागम के लिए तैयार करते हैं।

२ सभ्यता क्यों मनुष्यता का अन्त हो गया।

भारत के कुल शहरों की वेश्याओं की संख्या—जो मर्दुमशुमारी के समय अपना यही पेशा बताती हैं—४,७२,६६६ है। बहुतेरी वेश्याएँ डर से अथवा लाज से अपना पेशा कुछ और बता देती हैं, इसलिए उनकी सँख्या इसमें शामिल नहीं है। इन पौने पाँच लाख के लगभग वेश्याओं की वार्षिक आमदनी ६२,४६,००,००० रुपया है।

शोक है कि इस प्रकार का खुला व्यभिचार भारत में दिनोंदिन कम होने के बदले बढ़ता जाता है और वेश्याओं की संख्या में अधिकता होती जाती है। पंजाब की हिंदू सभा लिखती है कि, 'इस प्रांत के प्रत्येक मुख्य-मुख्य शहर में व्यभिचार के लिए लड़कियों की खरीद-फरोख्त बढ़ रही है। सन् १९११ में प्रांतीय लाट महोदय ने इस बात की तसदीक़ की है।'

अस्पतालों के रजिस्टर, दवा बेचनेवालों के इश्तहार और कोढ़ियों की संख्या से भी इस देश के व्यभिचार की झलक मालूम पड़ती है। कोढ़ का रोग चाहे पैतृक भी हो, पर इस रोग के पीछे सिफलिस (गर्मी) अवश्य हुआ करती है। प्रोफेसर हिगिन बाटम जिन्होंने कोढ़ियो में बहुत काम किया है, कहते हैं कि आज तक उन्हें कोई कोढ़ी ऐसा न मिला, जिसे खुद अथवा जिसकी छूत से उसे यह रोग हुआ, गर्मी न हुई हो। कोढ़ की जड़ गर्मी है। यह तो खुले हुए व्यभिचार की कथा हुई। इससे तो कोई इनकार ही नहीं कर सकता। अब रहा गुप्त व्यभिचार, सो उसका जाँचना मनुष्य की शक्ति से बाहर है। ईश्वर ही उसकी सच्ची जाँच कर सकता है।

इस देश में समाज का ऐसा कड़ा नियम है तथा इसके लिए ऐसी कड़ी सामाजिक सज़ायें रखी गई हैं कि ऐसे लोगों का प्रत्यक्ष पता लगना कठिन ही नहीं असम्भव है, पर अनुभव अवश्य किया जा सकता है।

पहले घर की मजदूरनियों को ले लीजिये। ये विवाहिता तो

अवश्य होती हैं, पर युवावस्था में अपने मालिक के घर, किसी न किसी नवयुवक सरदार की शिकार होने से शायद ही बचती हैं। हाँ, अवस्था ढल जाने पर चुपचाप अपने पति के साथ पतिव्रता बनकर बैठ रहती हैं। मर्दुमशुमारी के सुपरिण्टेडेण्ट ने लिखा है— 'मजदूरनियों में से बहुत-सी तो सचमुच ही वेश्याएँ हैं।'

इसी तरह दूकानों पर बैठनेवाली स्त्रियों को अर्धवेश्या समझना चाहिये ; कम से कम कुचरित्र स्त्रियों में तो इनकी गिनती अवश्य होनी चाहिये।

दक्षिण भारत में (मद्रास आदि) में बालिकाओं को मंदिरों में देव सेवा के निमित्त चढ़ा देने की चाल है। वहाँ उन्हें 'विभूतिन' कहते हैं। वे तीर्थयात्रा करती हुई, इस प्रान्त तक आ जाती हैं और अपनी सच्चरित्रता का परिचय दे जाती हैं।

× × ×

भारत में २ करोड़ ५४ लाख से अधिक विधवाएँ हैं। मैं इनके आचरण पर आक्षेप नहीं करता, पर विचार करने की बात है कि इनमें से प्रायः सभी मूर्खा हैं ; देव, शास्त्र, धर्म और ज्ञान से सर्वथा अनभिज्ञ हैं। केवल यह जानती हैं कि उनके कुल में विधवा-विवाह नहीं होता। उन्हीं का हृदय प्रश्न करता है कि क्यों नहीं होता ? इसका वे कुछ उत्तर नहीं दे सकतीं। केवल भाग्य में लिखा है, कर्म फूट गया है, आदि कहकर मन की तरंगों को शान्त करती हैं, पर इन स्त्रियों की शैतान पण्डों, पुरोहितों या ऐसे ही अन्य पाखण्डियों से भेट हो जाने पर और मौक़ा मिलने पर, भाग्य के बल पर ये कब तक कामदेव से लड़ सकती हैं ? आखिर मूर्खा स्त्रियाँ ही तो ठहरीं न ? उनकी कमजोरी उन्हें यह समझाकर सन्तोष कर लेने के लिए लाचार कर देती है कि 'यह दुराचार भी विधाता ने उनके भाग्य में लिख रखा होगा, वे स्वयं धर्मच्युत नहीं हो रही हैं, बल्कि यह उनके दुर्भाग्य का परिणाम

है—जिस दुर्भाग्य ने उन्हें जर्जर पति की पत्नी बनाया और उसे भी न रहने दिया, वही भाग्य पिशाच उन्हें आज गढ़े में फेंक रहा है। चलो, यह भी सही—विधि का लिखा को मेटनहारा'—बस खतम। हाँ, यह बात बहुत ज़रूरी अवश्य है कि कहीं बात खुल न जाय, नहीं तो जन्म-जन्मान्तर, पुश्त-दर-पुश्त के लिए खानदान भर को जातिच्युत होना पड़ेगा, सो इसके लिए जब तक तीर्थयात्रा के लिए द्रव्य, पापों को धोनेवाली बड़ी-बड़ी नदियाँ, घरों की पुरानी चाल की संडासें या अन्धे कुँए मौजूद हैं, इससे भी भय नहीं।

भगवन! क्या ही दीन-दशा है! विश्वबंधु के मकान के पास ही एक कुलीन ब्राह्मण महाशय का घर था। उनके यहाँ एक परम रूपवती युवती विधवा थी। उनके घर में परदे का कड़ा नियम था, तो भी विश्वबन्धु उनके यहाँ बेरोक-टोक जाया करते थे। कुछ दिनों बाद जब न जाने क्यों ब्राह्मण महाशय ने मकान छोड़ देने का निश्चय किया, तब विश्वबंधु ने अपनी मा से कह-सुनकर उस मकान को खरिदवा लिया। ब्राह्मण महाशय सपरिवार अपने देश (कन्नौज) चले गये और उस मकान की मरम्मत शुरू हुई। एक कोठरी जिसे पण्डिताइन 'ठाकुरजी की कोठरी' कहा करती थीं और जो साल में केवल कुलदेव की पूजा के समय खोली जाती थी, बड़ी सड़ी, नम और बदबूदार थी। उसे पक्की करा देना निश्चय हुआ। नम मिट्टी को खोदकर फेंक देने के लिए मजदूर खोदने लगे। सुना जाता है कि उसमें से एक ही उमर के कई बच्चों के पञ्जर निकले! एक तो बिलकुल हाल ही का दफनाया जान पड़ता था! प्रभो, भारत को ऐसे भयंकर पापों से बचाइये! हमें बल और निर्मल बुद्धि प्रदान कीजिये, जिससे हम इन कुरीतियों का अन्त कर सकें।

सिविल सर्जन साहब जेल और अस्पताल आदि से लौटकर लगभग

एक बजे बँगले पर आये। टेबुल पर एक तार मिला, जिसका आशय यह था कि 'रोगी सख्त बीमार हैं। जल्दी आने की कृपा कीजिये।—देवदत्त।' साहब बड़े ही दयालु थे। उसी समय घोड़े पर सवार होकर रवाना हो गये। उन्होंने देवदत्त के घर पहुँचकर पूछा कि रोगी कहाँ है? देवदत्त हाँफते-हाँफते आये और बोले—हुजूर, बड़ी ग़लती हुई, माफ़ कीजिये। साहब ने डपटकर पूछा कि बतलाओ रोगी कहाँ है? देवदत्त गिड़गिड़ाते हुए साहब के हाथ में फीस रख कर, पैरों पर लोट गये और एबारशन की (गर्भपात करने की) दवा पूछने लगे। साहब लाल हो गये। ज़मीन पर ज़ोर से पैर पटक कर और 'छिः' कहकर लौट गये। बँगले पर पहुँचकर उन्होंने इस बात की सूचना पुलिस-कप्तान के पास भेज दी।

उसी दिन रात को देवदत्त की चचेरी बहिन अकस्मात मर गई और रातों-रात चिता पर भस्म कर दी गई। यह विधवा थी। कई दिन बाद देवदत्त की तलबी कोतवाली में हुई। सुना जाता है कि वहाँ के देवता ने अपनी पूजा पाई और रिपोर्ट में लिख दिया कि देवदत्त प्रतिष्ठित रईस हैं। उस दिन उनकी बहिन को हैजा हो गया था, इसीलिए साहब को बुलाया था। वे एबारशन नहीं, बल्कि रेस्ट्रिक्टिव चेक (restrictive check) की या बन्धेज की दवा पूछना चाहते थे और यह कानूनन कोई जुर्म नहीं है!

यह दोहरे खून का नमूना है। यहाँ तो समाज में, जब तक बात छिपी है तब तक सब ठीक और खुलने की नौबत आई तो बस 'विष' या 'त्याग'! लेजाकर कहीं दूर के शहर में या तीर्थ-स्थान में छोड़ आये; कुछ दिनों तक मुहब्बत के मारे कुछ खर्च भेजा और फिर बन्द कर दिया! ऐसी अनाथ स्त्रियों की क्या दशा होती होगी, उसे पाठक स्वयं विचार सकते हैं।

भारत की ऊपर बतलाई हुई कई लाख वेश्याएँ कौन हैं?

हम भारतवासियों के घरों की विधवाएँ, हमारी ही बहिनें और बेटियाँ या उनकी संतति। हमारी ही असावधानी, निर्दयता और निष्ठुरता के कारण उनकी यह दशा हुई है।

१. रामकली, विन्ध्याचल—'मैं क्षत्रानी हूँ। बाल-विधवा हूँ। मेरे भाई दर्शन कराने के हीले से मुझे छोड़ गये। उनके इस तरह मुझे त्याग देने का कारण मैं समझ गई, इसलिए मैंने कभी पत्र नहीं भेजा और न लौटने की चेष्टा की। अब भीख माँगकर अपना गुजर करती हूँ। मैं सर्वथा असहाय हूँ और कोई जरिया पेट पालने का नहीं है। उमर बीस-इक्कीस वर्ष की है। यहाँ मुझ-सी अभागिनें आठ-नौ स्त्रियाँ और हैं। उनका चरित्र ठीक नहीं है।'

२. लछमी, वृन्दावन—'मैं ब्राह्मण हूँ। मेरी सास आदि कई स्त्रियाँ मुझे यहाँ छोड़कर चल दीं। पत्र भेजने पर उत्तर मिला कि अपने कारनामे स्मरण करो, यहाँ लौटकर क्या मुँह दिखाओगी! वहीं जमुना में डूब मरो। मेरी मा नहीं है। पिता ने मेरे पत्र का कभी उत्तर नहीं दिया।'

३. श्यामा, हरिद्वार—'मेरे पिता मुझे यहाँ छोड़ गये हैं।'

४. रामदुलारी, गया—'मेरे ससुराल के लोग बड़े धनी हैं। यहाँ मुझे पुरोहितजी छोड़ गये हैं। कुछ दिनों तक पाँच रुपया मासिक आता रहा, अब कोई खबर नहीं लेता। पत्रोत्तर भी नहीं आता।'

५. नलिनी और सरोजिनी, काशी—'हम दोनों अभागिनें बंगाल की रहनेवाली हैं। हम दोनों का एक ही घर में विवाह हुआ था। नलिनी विधवा हो गई। मेरे पति मुझे, एक लड़की होने पर वैराग्य लेकर चल दिये। मेरे ससुरजी पंद्रह रुपये मासिक पेंशन पाते थे। काशीवास करने यहाँ आये और हम दोनों को

साथ लाये। तीन महीने के बाद मर गये। एक परिचित बंगाली महाशय सहायता देने के बहाने से मिले और एक दिन हम दोनों का कुल जेवर चुरा ले गये। फिर इसी से लगी हुई पुलिस की एक घटना से बलपूर्वक हम अनाथाओं का सर्वनाश किया गया और हमें इस दीन-हीन दशा को पहुँचाया गया। एक सौ बीस रुपया कर्ज़ हो गया है। इस पुत्री के सयानी होने पर, इसी को बेचकर अथवा वेश्या बनाकर कर्ज़ अदा करूँगी!'

× × ×

'देशदर्शन' ग्रन्थ से उद्धृत इन अंशों को पढ़कर पाठकों का यह भ्रमपूर्ण विश्वास कि हमारे देश में वेश्यावृत्ति की समस्या शायद वैसी नहीं है, जैसी कि यूरोपीय देशों में है, बहुत कुछ दूर हो जाना चाहिये। उपर्युक्त ग्रन्थ के आँकड़े सन् १९११ ई० की मर्दुमशुमारी से लिये गये थे। उसके बाद बड़ा ज़माना गुज़र चुका है। इस बीच में हमारे युग की यांत्रिक और बाज़ारू सभ्यता ने और क्या-क्या गुल खिलाये हैं, कितनी गन्दगी गंगा के अथाह जल में मिल चुकी है, उसके आँकड़े मेरे पास इस समय नहीं हैं, जो मैं पाठकों के सामने रख सकूँ। उन आँकड़ों को एकत्र करना और इस पुस्तक के कलेवर में भरना, इस पुस्तक के अनुवाद को हिन्दी भाषा-भाषी जनता के सामने रखते समय हमारा उद्देश भी नहीं है। केवल उन महाशयों का भ्रम दूर करने के लिए, जो अलेक्जेण्डर कुप्रिन के इस महान उपन्यास को पढ़कर भ्रमवश अथवा अनजाने अपने मन की गन्दगी का पर्दा फाश न हो जाने के डर से, नाक-भौं सिकोड़कर यह कहने लगते हैं कि, 'यह उपन्यास गन्दा है अथवा लोगों में गन्दगी फैलानेवाला है। भारतवर्ष में वेश्यावृत्ति की समस्या वैसी ही नहीं है जैसी यूरोपीय देशों में, इत्यादि-इत्यादि', मैंने एक भारतीय ग्रन्थ से कुछ ऐसे अंश लेकर पाठकों के सामने रखने की चेष्टा की है जिससे

भारत में वेश्यावृत्ति की समस्या के कुछ चित्र हमारे सामने आ जाते हैं।

ऊपर उद्धृत 'देश-दर्शन' के अंशों में सन् १६११ ई० की मर्दुमशुमारी की बुनियाद पर केवल कलकत्ते में वेश्यावृत्ति के आँकड़े दिये गये हैं। मेरा ख्याल है कि उसके बाद सन् १६२१ ई० और सन् १६३१ ई० में जो दो मर्दुमशुमारियाँ हुई हैं, उनमें कलकत्ते में वेश्यावृत्ति और भी बढ़ गई होगी, क्योंकि दिन पर दिन एक तरफ़ ग़रीबी की खाई जैसी गहरी होती जाती है, उसी तरह दूसरी तरफ़ दौलत के ढेर ऊँचे होते जाते हैं। जिनको इस विषय में अधिक विस्तार से ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हो, वे इन मर्दुमशुमारियों की रिपोर्टों में खोज कर सकते हैं। हमारा उद्देश्य तो एलेक्ज़ेन्डर कुप्रिन का महान् उपन्यास हिन्दी भाषाभाषियों के आगे रखने में इतना ही है कि उनका ध्यान मनुष्य समाज के इस अत्यन्त अधम रोग की तरफ़ खिचे और वे उसके वास्तविक स्वरूप को समझें और इस भ्रम में रहकर कि भारतवर्ष में वेश्यावृत्ति की समस्या ऐसी नहीं है, बालू में शुतरमुर्ग़ की तरह सिर घुसेड़े न बैठे रहें। भारतवर्ष में वेश्यावृत्ति की समस्या वैसी ही है जैसी कि एलेक्ज़ेन्डर कुप्रिन ने अपने अमर उपन्यास में दिखाई है—बल्कि शायद उससे भी कहीं गई गुज़री है। एलेक्ज़ेन्डर कुप्रिन ने अपने उपन्यास में यूरोपीय वेश्यावृत्ति के लगभग सारे पहलू और चित्र हमारे सामने रख दिये हैं, परन्तु उसके इस हृदय-विदारक उपन्यास में भी कहीं दस वर्ष की उम्र की वेश्याओं का ज़िक्र नहीं आता है! शायद इतनी कम उम्र की वेश्याएँ यूरोप में न होती हों। काफ़ी कम उम्र की वेश्याएँ यूरोप में होती हैं, जिनका ज़िक्र कुप्रिन करता है। वह यह भी लिखता है कि कम उम्र की लड़कियों का सतीत्व भङ्ग करके उन्हें वेश्यावृत्ति की तरफ़ ढकेल दिया जाता है, परन्तु दस वर्ष से कम उम्र की बच्चियों को पुरुषों से समागम के लिए

कृत्रिम उपायों से तैयार शायद ऋषि मुनियों के इस पवित्र भारतवर्ष में ही किया जाता है, जहाँ के साहित्य में महाकवि वयःसन्धि की बच्चियों से प्रेम के लिए आहें भरते हैं, जहाँ रजस्वला पुत्री को अविवाहित रखने से पिता घोर नर्क में चला जाता है और जहाँ लड़कियों के विवाह की उम्र कम से कम चौदह वर्ष से अधिक करने का घोर विरोध देश के धुरन्धर धार्मिक नेता तक करते हैं ! कानूनन् दस वर्ष से कम उम्र की वेश्याओं का कलकत्ते में होना, जिनका सन् १६११ की मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट में ज़िक्र है, भारतवर्ष के माथे पर एक ऐसी अधमता की छाप लगाता है, जो संसार में उसका मुँह उससे भी कहीं अधिक काला बनाती है जो कि उसके अछूतों के प्रति व्यवहार से है। हम समझते हैं कि यूरोप में इतनी कम उम्र की वेश्याएँ अवश्य न होती होंगी, वरना कुप्रिन जैसा सत्य का पुजारी उनका ज़िक्र अपने उपन्यास में करते कभी न चूकता। दस वर्ष से कम उम्र की वेश्याओं का इस देश में होना ही उन महानुभावों का मुँह बन्द कर देने के लिए काफ़ी है, जो इस ख्याल से कुप्रिन के इस उपन्यास के अध्ययन के विरोधी हैं कि भारतवर्ष में वेश्यावृत्ति की समस्या उतनी बुरी नहीं है जितनी कि यूरोप में !

परन्तु यह एक बात उनके सामने रखकर ही हम उनका मुँह बन्द करने का प्रयत्न नहीं करेंगे। हम उनकी और भी शङ्काओं का समाधान करना चाहते हैं। कुप्रिन अपने उपन्यास में दिखलाने का प्रयत्न करता है कि यूरोप में वेश्याएँ निम्न प्रकारों से बनती हैं :—

१-कुछ मालिक अपने घर की नौकरानियों की ग़रीबी का फ़ायदा उठाकर उनका सतीत्व भङ्ग करते हैं और उन्हे वेश्यावृत्ति की तरफ़ ढकेल देते हैं।

२—कुछ ग़रीब माता-पिता अपना और अपने आश्रितों का पेट भरने के लिए अपनी अबोध लड़कियों को वेश्यावृत्ति सिखाकर उन्हें

सदा के लिए इस नर्क में डाल देते हैं, जिससे उन्हें फिर निकलना असम्भव हो जाता है।

३—कुछ बदमाश लोग अबोध ग़रीब लड़कियों को लालच देकर भगालाते हैं अथवा अनाथ और निस्सहाय लड़कियों को फाँस लेते हैं और उन्हें वेश्याओं के हाथ बेच देते हैं, जो उनके द्वारा रुपया कमाती हैं।

४—कुछ आश्रमों में रहनेवाली छोकरियों को आश्रमवाले भ्रष्ट करके वेश्यावृत्ति सिखा देते हैं, इत्यादि।

क्या 'देशदर्शन' से उद्धृत अंशों को पढ़ने के बाद भी इससे कोई इनकार कर सकता है कि भारतवर्ष में भी वेश्याएँ इन्हीं कारणों से बनती हैं ? भारतवर्ष में तो इन कारणों में एक दो और भी भयङ्कर कारण वेश्या बनने के जोड़े जा सकते हैं। भारतवर्ष में एक बहुत बड़ी तादाद बाल विधवाओं की है जिनके पुनर्विवाह के विरुद्ध आम तौर पर लोग रहते हैं। जिस कामदेव से सफलता पूर्वक युद्ध करने के लिए शङ्कर भगवान् को शक्ति और तपस्या की जरूरत होती है, उससे मुकाबला करने के लिए यह बेचारी अबोध छोकरियाँ हमारे घरों में छोड़ दी जाती हैं। इस बेजोड़ युद्ध में बहुत-सी बालिकाएँ असफल होती हैं। उनके गर्भ रहजाने पर उन्हें जात-पाँत और घर से निकाल दिया जाता है, जिससे वेश्यावृत्ति के सिवाय उनके पास प्रायः और कोई चारा नहीं रह जाता। कोई हुनर या कोई शिक्षा उनके पास ऐसी नहीं होती जिससे वे अपना पेट पाल सकें और इस अधम धन्धे की शरण न लें। हमारे देश में स्त्रियों को केवल एक ही धन्धा सिखाया जाता है—किस तरह पुरुष को खुश करना चाहिये—अतएव जब कोई पुरुष उन्हें अपना नहीं बनाए रखता तो वे बेचारी अपना पेट, जो पुरुष मिले उसी को खुश करके, भरा करती हैं। कहिये ऐसा करने के लिए दोषी हम और हमारा समाज है, जिन्होंने

उन्हें ऐसी अबला बना कर रखा है, अथवा वे बेचारी अबला और असहाय स्त्रियां हैं ? आप ही इसका उत्तर दीजिये। पुरुष जो स्वयं महापुरुष ईश्वर का अङ्ग माना जाता है, एक पत्नी के मरने पर दूसरा विवाह कर लेता है और स्त्री से, जो चंचल प्रकृति का अङ्ग मानी जाती है, शङ्कर भगवान् के समान अटल रहने की आशा की जाती है और अगर वह उसमें असफल हो जाती है तो उसका ऐसा कठिन बहिष्कार किया जाता है कि बेचारी के पास वेश्यावृत्ति के सिवाय और कोई उपाय नहीं रह जाता ! वाह री हमारी बुद्धि और वाह री हमारी सभ्यता !

हमको इसमें सन्देह नहीं है कि भारतवर्ष में भी वेश्यावृत्ति की समस्या उतनी ही भयङ्कर है, जितनी कि यूरोप में, जिसका चित्रण कुप्रिन अपने इस उपन्यास में करता है ; बल्कि भारतवर्ष में उससे भी कहीं गई-गुजरी है। हम लोग अपनी गन्दगी को लुकाते, छिपाते और गाड़ते हैं जिससे वह अन्धकार में और भी सड़ती, गलती और रोग को बढ़ाती है। जब कि यूरोप में स्वतन्त्र और साहसी विचारों के लोग अपनी सामाजिक गन्दगी को प्रकाश में लाते हैं, जिससे कि धूप में तपाने से उसके सूखकर नष्ट हो जाने की सम्भावना रहती है। 'देश-दर्शन' से उद्धृत ऊपर के अंशों से हमें अपनी गन्दगी का कुछ पता चलता है, जो हमें हमारी गाढ़ी निद्रा से जगा देने के लिए काफ़ी है। कलकत्ते के जैसे दृश्य, लेखक ने 'देश-दर्शन' में दिये हैं, वैसे ही इस देश के दूसरे शहरों में भी मिलते हैं। सुना जाता है कि बम्बई में विरले ही ऐसे बड़े आदमी हैं जिनका किसी वेश्या से सम्बन्ध न हो। अहमदाबाद से शनिवार की रात को बम्बई के लिए जो रेलगाड़ी चलती है उसमें काफ़ी संख्या ऐसे अमीरों की होती है जो हर रविवार को बम्बई में जाकर अपने मन की प्यास बुझाते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो प्रायः बम्बई से यूरोप हर

साल इसी काम के लिए जाते हैं। बहुत-से लोग बम्बई से गोआ भी इसीलिए जाते हैं। जिनके पास रुपया है, वे रुपये के बल से दुनिया-भर की स्त्रियों को अपनाने का प्रयत्न करते घूमते हैं और कानून उनका इस अधमता में साथ देता है। एक छोर पर ऐसे रुपयेवाले व्यभिचारी हैं और दूसरे छोर पर ग़रीबी इतनी है कि पेट भरने के लिए व्यभिचार के सिवाय और कोई चारा नहीं रहता। फिर भला बताइये वेश्यावृत्ति कैसे बन्द हो? कुप्रिन अपने उपन्यास में यही दिखाने का प्रयत्न करता है कि वेश्यावृत्ति को आमतौर पर ऐसी ही स्त्रियाँ अपनाती हैं, जो समाज और कुटुम्ब से बहिष्कृत अथवा अज्ञानी होती हैं और जो अपना पेट किसी और धन्धे से पालने में सर्वथा असमर्थ होती हैं। कोई स्त्री ख़ुशी से वेश्यावृत्ति करना नहीं चाहती। अज्ञान, निस्सहायता और पेट की भूख उसे इस अधम धन्धे की तरफ़ खींचतीं हैं, जिसे रुपये-वाले व्यभिचारी पुरुषों ने समाज में क़ायम कर रखा है।

दिन पर दिन हमारे देश में ग़रीबी के साथ-साथ वेश्यावृत्ति भी बढ़ती जा रही है। बम्बई शहर की क़रीब सोलह लाख की आबादी में, कहा जाता है, आधी संख्या ऐसे लोगों की रहती है जो धन कमाने के लालच से बम्बई में रहते हैं, परन्तु अपने बालबच्चों और कुटुम्ब को, काफ़ी रुपया पास न होने से साथ नहीं रख सकते। यह साधारण कोटि के लोग ब्रह्मचर्यव्रत से रहने के आदी नहीं होते। घर-बार, नातेदारों-रिश्तेदारों से दूर, एक ऐसे शहर में होने से, जहाँ एक पड़ोसी दूसरे का नाम, ग्राम, और काम कुछ नहीं जानता, उनकी हया शर्म जिससे साधारण लोगों की बहुत सी कुप्रवृत्तियाँ दबी रहती हैं, छूट जाती है। रुपया भी कमाते ही हैं, अतएव भूखे जानवरों की तरह वेश्याओं के द्वार जा-जाकर खटखटाते हैं। धन का जो अभाव स्त्रियों को वेश्याएँ बनाता है, वही इन पुरुषों को, जो अपने गाँव और क़स्बों में सच्चरित्र किसान और सद्गृहस्थ कारीगर होकर रह सकते थे, बम्बई में घर गृहस्थी से दूर

रखकर वेश्यागामी बनाता है। भायखलाब्रिज से कालबादेवी जाने वाली ट्रामगाड़ी के ऊपरी दर्जे में, शाम को खिड़की के पास बैठ जाइये। आपकी गाड़ी एक ऐसे स्थान में होकर गुजरेगी, जहाँ आपको इधर-उधर मुँह उठाकर देखने में शर्म आएगी। सड़क के दोनों ओर गन्दे कमरों की लम्बी क़तारों में, दर्बों में कबूतरों की तरह, वेश्याएँ बैठी दीखती हैं जिनसे खुले आम सड़क पर खड़े हुए लोग भाव-ताव करते हैं मानों वे मिठाई या तरकारी ख़रीद रहे हों। लाहौर में एक मुहल्ले में से गुज़रते हुए कई मकानों की खिड़कियों और द्वारों के सामने शाम को बड़े जमघट खड़े देखे। साथ के मित्र से पूछने पर ज्ञात हुआ कि वे वेश्याओं के मकान थे और सामने उम्मीदवारों की भीड़ें खड़ी थीं। न मालूम बेचारी एक-एक अभागी वेश्या को एक रात में कितने उम्मीदवारों की उम्मीदें पूरी करनी पड़ती होंगी। रावी नदी पर नाव में सैर करने गये तो पास से एक नाव गुजरी जिसमें दो आदमी और एक स्त्री थी। स्त्री बेहयाई से खुले आम एक आदमी की गोद में लेटी थी जो उसे प्यार कर रहा था। लाहौर के इन नजारों से घबराकर पूछा तो पता चला कि दिन पर दिन वहाँ इस बेहयाई का नङ्गानाच बढ़ता ही जाता है। सड़कों पर से परदे पड़े हुए ताँगे गुजरते हैं। ताँगेवालों से लोग खुले आम चिल्लाकर पूछते हैं, 'ताँगा ख़ाली है?' ताँगावाला कहता है 'जी'। इस साङ्केतिक प्रश्नोत्तर का अर्थ यह हुआ कि ताँगे में वेश्या है, जिसे पूछनेवाला पा सकता है। यहाँ तक सुना जाता है कि कालिजों के प्रोफेसर और विद्यार्थियों में वेश्याओं के ग्राहक बहुत बढ़ते जा रहे हैं। लाहौर के कालिजों के विद्यार्थियों की बेहयाई की वहाँ के सद्गृहस्थ यह तो आम शिकायत करते ही हैं कि उनके पास से पार्कों में बहू-बेटियों का साथ लेकर गुज़रना अथवा सिनेमाओं में बैठना वहाँ असम्भव हो गया है। वहीं क्या, विद्यार्थियों की इस प्रकार की बेहयाई और भी शहरों में बढ़ती देखी जा रही है। बनारस की एक

वेश्या ने एक मुकदमे में अपना बयान देते हुए, कुछ वर्ष हुए, कई प्रोफेसरों और कालिज के विद्यार्थियों के नाम अपने ग्राहकों में दिये थे। कुछ दिन बाद वह एक कालिज के विद्यार्थी के साथ, अपनी खाला से पीछा छुड़ा कर भाग भी गई। फिर न जाने उसका परिणाम वही हुआ जो कुप्रिन के इस उपन्यास में लिखोनिन के साथ भागनेवाली बेचारी लियूबा का हुआ, अथवा और कुछ! कुछ भी हो, हमने जो थोड़ी-बहुत खोज की है उससे तो यही पता चलता है कि भारत में भी वेश्यावृत्ति की बिलकुल वैसी ही समस्या है, जैसी कुप्रिन ने अपने इस उपन्यास में दिखाई है। केवल एक बात का जिसका ज़िक्र हमने प्रस्तावना में किया है, हमें सन्देह हुआ था। कुपरिन अपने उपन्यास में एक स्थान पर एक वेश्या के मुँह से एक स्त्री से कहलवाता है कि भाई बहिनो को और पिता पुत्रियों तक को भ्रष्ट करते हैं। मैंने सोचा कुप्रिन महाशय अपने प्रचार में हद से गुज़र गये हैं, परन्तु फिर याद आया कि कुछ और रूसी यथार्थवादी उपन्यासों में भी पशुवत मूर्ख किसान पिताओं के अपनी पुत्रियों को भ्रष्ट कर डालने की घटनाओं के वर्णन आते हैं। तब मैंने अपने मन को यह सोचकर सन्तोष दिया कि शायद यूरोप की जड़वादी सभ्यता में ऐसा सम्भव होता हो, हमारी नीतिपूर्ण सभ्यता में ऐसा होना असम्भव है; परन्तु जब मुझे मालूम हुआ कि भारतवर्ष के कुछ अनाथ आश्रमों में ऐसी स्त्रियाँ मौजूद हैं, जिन्हें उनके पिताओं और भाइयों ने भ्रष्ट करके घर से निकाल दिया है, तब मेरा हृदय आत्मग्लानि से बैठने लगा। अब मेरा विचार है कि भारतवर्ष में भी बिलकुल वेश्यावृत्ति की समस्या वैसी ही भयंकर है, जैसी कि कुप्रिन के इस उपन्यास में दिखाई गई है। आशा है, कोई कुप्रिन की-सी सद्-मनोवृत्ति का भारतीय लेखक, एक दिन हमारे आगे सब बातें विस्तार से रखकर, हमारी आँखें – अगर वे इस उपन्यास को पढ़कर भी नहीं खुलतीं—खोल देगा। कुप्रिन के इस

उपन्यास को पढ़कर जहाँ तक मानव समाज के इस अधम रोग को समझकर उसे नष्ट करने के लिए जितने लोग अग्रसर हो सकते हैं, उनको उतना आगे बढ़ने देखने की इच्छा से ही, हम इस हृदय-विदारक उपन्यास को हिन्दी भाषा-भाषी जनता के सामने रखते हैं।

हाँ, एक बात और भी कुप्रिन के उपन्यास के सम्बन्ध में कही जा सकती है कि कुप्रिन के चित्र भयंकर और वीभत्स हैं, परन्तु क्या किसी हत्या या कत्ल का कोई सच्चा लेखक ऐसा चित्र बना सकता है कि हमारा मन उसे पढ़कर प्रसन्न हो और बैठने न लगे? क्या सड़ती हुई लाश का ऐसा सच्चा चित्र बनाया जा सकता है कि हमारी तबियत उसे चूमने को हो? क्या गन्दे नाले का ऐसा सच्चा चित्र हो सकता है कि हमारा मन उसमें तैरने और नहाने को हो? वेश्यावृत्ति के सच्चे चित्र भयंकर और वीभत्स होने के अतिरिक्त और हो ही क्या सकते हैं? कुप्रिन ने उनकी सचाई हमारे सामने रखने में कमाल कर दिखाया है। यही उसके इस महान् उपन्यास की विशेषता है और उसकी ऊँची कला की सफलता है।

—अनुवादक